बालिका का सकारात्मक आत्म-बोध विकास

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों व मुख्य शिक्षकों के लिए साधन सामग्री

बालिका का सकारात्मक आत्म-बोध विकास

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों व मुख्य शिक्षकों के लिए साधन सामग्री

उषा नय्यर



राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

अगस्त 1997
श्रावण 1919

PD 3T GR

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन, बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	**बैंगलूर 560085**	**अहमदाबाद 380014**	**24 परगना 743179**

रु. 82.00

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा नाथ ग्राफिक्स, 1/21, सर्वप्रिय विहार, नई दिल्ली 110 016 द्वारा लेजर कंपोज होकर ताज प्रिंटर्स, 69, नजफगढ़ रोड, इण्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली 110 015 द्वारा मुद्रित।

आमुख

आज देश की स्वतंत्रता का अर्ध शतक पूरा हुआ। आज़ादी की लड़ाई में जुटी आम जनता और उसका नेतृत्व कर रहे पुरुषों और महिलाओं ने मिलकर एक नये भारत का सपना देखा था। एक ऐसा भारत जहाँ कोई भूखा न रहे, जहाँ कोई रोग से पीड़ित न हो, जहाँ कोई व्यक्ति अशिक्षित न हो, जहाँ जाति, धर्म, लिंग आधारित भेद भाव न हों। भारतीय संविधान ने इन सपनों को अपनी धाराओं में बाँधा। यहाँ हर नागरिक समान अधिकार व दायित्व रखता है, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष और किसी भी जाति अथवा धर्म का हो। एक ऐसे न्यायसंगत लोकतंत्र की संरचना करने में शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा की प्राप्ती, अच्छी सेहत, खेल-कूद के अवसर और स्वच्छंद अभिव्यक्ति हर बच्चे का जन्म-सिद्ध अधिकार, चाहे वह लड़का हो या लड़की और किसी भी जाति अथवा धर्म का हो। संविधान और उसके अन्तर्गत कानूनों और नीतियों द्वारा, ऐसे अवसर जुटाने का प्रयास किया गया है जिससे बच्चों का सर्वांगीण विकास हो पाये। लगातार बढ़ती जनसंख्या ने यह प्रयास विफल कर दिये हैं और लिंगाधारित भेदभाव और पूर्वाग्रहों से ग्रसित मानसिकता को हम बदल नहीं पाये।

आज भी देश में बालिकायें और महिलायें शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं और सामाजिक अवेहलना, यहां तक कि हिंसा से ग्रसित हैं। आज हमारे शिक्षकों के सन्मुख दो मुख्य चुनौतियां हैं। प्रथम हम सभी बालिकाओं को शिक्षा से जोड़ सकें। वह न केवल प्रवेश ही पायें पर हम कुछ ऐसा करें कि वह अपनी शिक्षा सफलता पूर्वक पूरी करें। प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण सही शब्दों में तभी होगा जब प्रत्येक लड़की और लड़का इस सीड़ी को पार कर उच्चतर शिक्षा के प्रतिभागी बनें। यह तभी हो पायेगा जब समाज महिलाओं को सम्मान देगा और बालिकाओं को वह हर ऐसा अवसर जिससे वह भविष्य की सशक्त महिला बन पायें। इसलिये, हम बालिका में एक सकारात्मक आत्म-बोध का विकास कर पायें, यह हमारी दूसरी प्रमुख चुनौती है। हमें बालिका को एहसास दिलाना है कि वह किसी से कम नहीं और उस की हर प्रतिभा को उजागर करने का प्रयास करना है। शैशव क़ाल से ही भेदभाव की दोहरी नीति स्वरूप बालिका अपने आप को निम्न और हीन महसूस करती है और यही धारणा लेकर वह बड़ी होती है। और हमारे पुरुष प्रधान समाज में, लड़कों के लालन-पालन करने में कोई कमी नहीं की जाती; लाड-प्यार, घूमने फिरने की स्वच्छन्दता, अच्छा भोजन, शिक्षा, सभी साधन दिये जाते हैं। यहां तक कि यह स्वच्छंदता अक्सर उच्छृंखलता का स्वरूप ले लेती है और उनमें हिंसक प्रवृतियां जगाती हैं।

भावी पीढ़ी के निर्माण में जुटे शिक्षकों से हमारा आह्वान है कि वह लिंग भेद और लिंगाधारित पूर्वाग्रहों का दमन करें और पाठशाला को सभी बच्चों के सर्वांगीण विकास की कर्म भूमि बनायें। समाजिक कूरीतियों के दमन में समाज की अगुआई करें और महिलाओं को समानाधिकार और सम्मान से सुसज्जित करें। कोई भी देश उतना ही ऊपर उठ सकता है, जहां

तक उसकी बालिका या महिला की पहुँच है। इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर रहे भारत को सबल बनाने में उसके दोनों हाथ, दोनों पांव मजबूत बनाने होंगे – बालक और बालिका को समान अवसर देने होंगे। शिक्षा के माध्यम से महिला समानता और सशक्तिकरण में अपनीं भूमिका निभायें और अपनी राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रतिपालन करते हुये देश के हर क्षेत्र में महिलाओं की प्रतिभागिता को बढ़ाये।

आशा है हमारे शिक्षक साथी इस साधन सामग्री को पुर्वोत्तर लक्ष्यों की प्राप्ति में उपयोगी पायेंगे। यह पुस्तिका, हमारी सहभागी प्रोफ़ेसर उषा नय्यर ने तैयार की और इस के निर्माण में दिल्ली स्थित तिन्नारी नामक स्वैछिक संगठन की भूमिका सराहनीय है। यह प्रोजेक्ट युनेस्को के सौजन्य से पूरा किया गया। हम स्थानीय युनेस्को आफिस और उसके विशिष्ठ विशेषज्ञ डा० वारेन मैलर का आभार प्रकट करते हैं, जिन्होंने इस साधन सामग्री के अंग्रेजी संस्करण "फ्राम गर्ल चाइल्ड टू परसन" को प्रकाशित किया। हिन्दी में इस साधन सामग्री को हम देश की बालिकाओं और उनके स्वर्णिम भविष्य को समर्पित करते हैं।

आशा है, हमारे सभी हिन्दी भाषी राज्य तथा संघ–शासित क्षेत्र इस साधन सामग्री का प्रयोग अपने अध्यापकों के सेवा-पूर्व प्रशिक्षण और सेवारत प्रशिक्षण में पूरा प्रयोग करेंगे।

अशोक कुमार शर्मा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

अगस्त 1997

प्राक्कथन

इस तथ्य को अनकही मान्यता प्राप्त है कि उस समाज में जहां महिला जीवन और आदर को कमतर समझा जाता है वहां महिलाएं अपने को कम आंकती हैं तथा उनका आत्मबोध अपर्याप्त और नकारात्मक ही होता है। यह धारणा शैशव और बाल्यावस्था में ही उत्पन्न हो जाती है और किशोरावस्था और युवावस्था तक आते-आते पुष्ट हो जाती है। प्रारम्भ में माता-पिता अपने बच्चों को प्रभावपूर्ण लिंगाधारित पहचान से अवगत करा कर उन्हें समरूप आत्मबोध प्रदान करते हैं और फिर आगे चलकर स्कूल और समाज इस पहचान और बोध का पुष्टीकरण कर देता है। वह लडके और लड़कियों को यह विश्वास दिलाते हैं कि न केवल वे एक दूसरे से भिन्न हैं बल्कि असमान भी हैं और लड़के ऊंचे हैं और सशक्त हैं और लड़कियां नीची, मातहत और निःशक्त हैं। इस प्रकार से दो वर्ग गुथ जाते हैं जो आज की चाही-अनचाही प्रसारण माध्यम पल्लवित कल्पना में लड़कों को न केवल स्वतंत्र बनाते हैं बल्कि लड़कों में गैर-जिम्मेदार व्यवहार, आक्रामक और प्रभुत्व वाला व्यक्तित्व पनपाते हैं। लड़कियों को इस प्रभुत्व को स्वीकारना सिखाया जाता है, इस हद तक कि वे अपने विरुद्ध हिंसात्मक रवैया भी स्वीकार लें और उनसे परावशता व परावलम्बन ही व्यवहार संहिता में अपेक्षित होता है।

स्कूल को माता-पिता के सहयोग से न केवल बालिकाओं को निम्न आत्मबोध और आत्म सम्मान के चक्र से मुक्त कराना है बल्कि लड़कों के सामाजिक मान्यतागत आक्रामक और नियंत्रक आत्मबोध को बदलने की सजग चेष्टा भी करनी होगी। स्कूल से पूर्वजो लिंगाधारित संबंध और लिंगाधारित परिचय बच्चों में पनपते हैं उनका स्कूल में पुष्टीकरण होता है। परिवार में होने वाले महिलाओं और बालिकाओं के प्रति हिंसात्मक व्यवहार का प्रतिबिम्बन सड़कों पर भी होता है। लड़कों में लड़ाई, झगड़े करने की प्रवृति पनपती है जो आगे चलकर साम्प्रदायिक दंगों और युद्ध का रूप ले लेती है। इस सब से महिलाओं पर और अधिक हिंसात्मक आक्रंमण होते हैं जो महिला छेड़-छाड़, लैंगिक उत्पीडन से लेकर उनकी हत्या तक बढ़ जाते हैं। इसलिए स्कूल को बराबरी से दोनों समुदायों के साथ मेहनत करनी पड़ेगी – लडके और लड़कियां – जिससे वह आज के समय के अनुकूल सकारात्मक आत्मबोध से लैस हो सके। जाति, धर्म और लिंग भेद की अवहेलना में मानव जाति के लिए सामाजिक भूमिका के रूप में अत्यधिक सम्भावनायें है। संवैधानिक लोकतंत्र, वैज्ञानिक अनुसंधान और वैज्ञानिक अभिरुचि कुछ ऐसे नये स्थापन हैं जो महिलाओं और पुरुषों क़ो व्यक्तिगत योग्यता और मानवीय गुणों के आधार पर प्राप्त भूमिकाएं प्रदान करने का अवसर दे रहे हैं, जो उनकी अभी तक की पुरुषगत या महिलागत गुणों या स्वभाव की उपलब्धियों के विपरीत हैं। आज के बच्चों को परिवार, बाजार, राज्य में बराबरी और सामंजस्य पूर्ण जीवन–यापन की नई भूमिका के लिए तैयार करना है।

जन्म से 5 वर्ष की आयु तक और बचपन-किशोरावस्था से 18 वर्ष की आयु के जो दो आयु वर्ग

हैं, स्कूली स्थिति उनके बीच में एक कड़ी है। स्कूल को दो बातों को ध्यान में रखना है। प्रथम यह कि 5 वर्ष की आयु तक बच्चा अपनी समूहगत लिंगाधरित भूमिका सीख लेता है। द्वितीय यह कि शिक्षक चाहे वे पुरुष हों या महिला, उन्हीं समुदायों और संस्कृतियों से आते हैं और उनमें लिंगाधारित सामाजिक भूमिका की वही गहरी छाप होती है। शिक्षक उसी सांस्कृतिक अभिव्यंजना की व्युत्पत्ति करते हैं जो पुरुष को सकारात्मक और सशक्त और महिला को नकारात्मक और निःशक्त माने बैठे हैं। इसीलिए उनका अपना आत्मबोध करके लिंगाधारित होता है। 'उन्हें बालक-बालिकाओं को समानता और शान्ति संदेश के पुनः अनुकूल न के लिए अपने आपको प्रति अनुकूलित करना पड़ेगा जिससे वे यह समझ सकें कि लिंगाधार क्यों और किसलिए हो, समानता के वे औपचारिक यंत्र क्या हैं और उनमें विश्वास हो और फिर वे व्यावहारिक और सुरक्षित ढंग से स्कूली पाठ्यक्रम और कार्यक्रम में हस्तक्षेप बूझ सकें।

अन्ततोगत्वा एक शिक्षक का दायित्व केवल बच्चों की बौद्धिक परिपक्वता को विकसित करना ही नहीं है बल्कि उनका सम्पूर्ण विकास शिक्षकों की जिम्मेदारी है। पाठ्यक्रम के विशिष्ट लक्ष्यों को पूरित कराने के साथ-साथ शिक्षक को यह भी ध्यान देना है कि बच्चे किस प्रकार के मानव बन रहे हैं। अगर शिक्षक इस प्रकार के दायित्व से अपने आपको मुक्त भी माने और अपने शिष्यों के बौद्धिक विकास मात्र तक अपने कर्त्तव्य को सीमित रखें तो भी शिक्षकों की प्रक्रिया, उनका आचरण और व्यवहार उनके शिष्यों को प्रभावित करता ही है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति और उसकी कार्य योजना ने महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा को समस्त शैक्षिक प्रयास के लिए एक सोपान समझा है। महिला सशक्तिकरण की पूरी युद्ध नीति का पहला आक्रमण महिलाओं और बालिकाओं का आत्म सम्मान और आत्म विश्वास बढ़ाने के लिए ही होना है। महिलाओं के समाज के प्रति योगदान से एक सकारात्मक छवि उगानी होगी। उनमें समीक्षात्मक सोच की क्षमता का विकास करना होगा जिससे वे निर्णय के आधार पर चुनाव कर सकें और सामाजिक प्रक्रियाओं में बराबरी से भागीदारी निभा सकें।

प्रस्तुत साधन सामग्री शिक्षकों तथा प्रधान शिक्षकों के द्वारा सामूहिक स्वयं शिक्षण प्रणाली के लिए तैयार की गई है। इसका उद्देश्य है कि एकाकी शिक्षक अथवा अनौपचारिक शिक्षा का इन्स्ट्रक्टर मिलजुल कर लिंगाधारित समानता और छात्रों में सकारात्मक आत्मबोध विकास हेतु प्रयत्नशील हों। आशा है कि शिक्षक तथा सिखाने वाले इसमें कुछ जोड़ घटा कर क्षेत्रीय भाषा तथा परिप्रेक्ष्य में ऐसी तथा अपने परिवेश की इसमें अच्छी साधन सामग्री बना सकेंगे। यदि ऐसा हो जाता है तो इस सामग्री का संकलन सफल हो जाएगा। हमारा प्रमुख लक्ष्य है इस "आत्म खोज" की

प्रक्रिया को प्रस्फुटित करना, एकजुट होकर कार्यरत होने का परिसंवाद फैलाना .

क. जिससे यह समझ आए कि असमानताए आंत्रिक हैं, और

ख. लड़कियों में (लड़कों मे) सकारात्मक आत्मबोध के विकास में सहायता करने के लिए पाठ्यक्रम में व्यावहारिक मध्यस्थता नियोजित करनी होगी जिससे वे नागरिकों, अभिभावकों, कार्यकर्ताओं, नेताओं के रूप में उभर सकें जिसमे दृढता सक्षमता और सहानुभूति जैसे गुण उपजें।

यदि हम अपनें शिक्षक अथवा इन्स्ट्रक्टर के रूप में लड़को और लडकियों को उनके व्यक्तित्व के विकास की यात्रा को विकसित मानव के परिधान से सजा सके तो हम बच्चों के प्रतिं अपने ऋण से मुक्त हो सकेंगे। तब ही यह नन्हें-मुन्हें आपस मे मिलजुलकर एक सुन्दर भविष्य की संरचना से जुड़ जाएंगे बजाय इसके कि आपस में गुत्थम-गुत्था, मार-पिटाई की प्रवृतियों को बढ़ावा दें।

इस पुस्तिका को बनाने का कार्य यूनेस्को दिल्ली आफ़िस के सौजन्य से सम्पन्न हुआ। प्रो. वारेन मैल्लर, सीनियर स्पेशलिस्ट यूनेस्को के विशेषकर आभारी हैं, जिन्होंने इस संसाधन सामग्री को शिक्षकों के लाभार्थ संकलित करने का एक आगामी कदम उठाया। 'तिन्नारी' सेन्टर फार थर्ड वर्ल्ड वीमेन्स स्टडीज़ ने इस परियोजना को पूर्ण रूप दिया। मैं प्रोफेसर सरोजिनी बिसारिया अध्यक्षा, तिन्नारी की आभारी हूँ, जिन्होंने अपने सतत सहयोग से इस कार्य को सम्पन्न करवाया।

उन सब शिक्षकों को जो इस सामग्री का प्रयोग करते हुए उसमें अपने सुझाव व विचार जोडेंगे उनका हम धन्यवाद करते हैं। आशा है कि यह तिन्नारी का यह छोटा सा प्रयास बालिका की आगे की यात्रा को सुलभ बनाएगा।

ऊषा नय्यर

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष

महिला अध्ययन विभाग

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली

विषय सूची

परिचय

परिप्रेक्ष्य

शिक्षा हरेक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। सब ही को शिक्षा पहुंचाने के प्रयत्न लगातार किए जा रहे हैं । इस संदर्भ में शिक्षा में कार्यरत लोगों को दो प्रमुख चुनौतियों का सामना करना है:

1. पहली चुनौती है कि अच्छे किस्म की पढ़ाई-लिखाई सब तक पहुंचा सकें। विशेषतः महिलाओं और बालिकाओं के लिए क्योंकि वह पुरुषो की अपेक्षा कहीं अधिक पिछड़ी हुई हैं।

2. दूसरी चुनौती है कि वह कौन से यत्न करें जिससे शिक्षा महिला समानता और महिलाओं के सशक्तिकरण को लेकर चल सके और भारतीय समाज को हमारे संवैधानिक मन्तव्यों तक पहुंचा सके।

किसी भी काम को पूरा करने के लिए साधनों की जरूरत होती है। पहली चुनौती में अधिकाधिक संसाधन जुटाना और सब लोगों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना है। यह शायद उतना कठिन नहीं जितना कि प्राणी मात्र में ऐसा मानसिक बदलाव लाना कि वह समानता की अवधारणा को स्वीकार सकें और आत्ससात् कर लें। प्रथमतः उन्हें इस बात से अवगत कराना होगा कि मानव अधिकार और भारतीय संविधान के मूल अधिकार स्त्री-पुरुष समानता के बीजक हैं। अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय संस्थानों ने इस अधिकार को स्वीकारा है। यह बात समझने के बाद वह जनमानस बन जायेगा जो आज की तेजी से बदलती हुई दुनिया में नर-नारी की बदलती हुई सामाजिक भूमिका को आत्मसात् कर लेगा। इस प्रकार शिक्षा नई पीढी को एक शान्तिपूर्ण और समानता पर आधारित भविष्य के लिये तैयार करने की सचेत कोशिश कर पायेगी।

पठन सामग्री तथा कार्यानुभवों के निर्माण में औपचारिक और अनौपचारिक शाला, पाठ्यक्रम और शिक्षकों की प्रमुख भूमिका होती है। विशेषकर तब जब बालक-बालिकाओं मे जीवन के प्रारम्भिक वर्षो में बराबरी की सूझ-बूझ पनपानी हो जिससे साझेदारी और एक सम्मिलित भविष्य के लिएं उन्हें प्रेरित किया जा सके। पारम्परिक परिवार प्रथा तथा मूल्यों पर केन्द्रित सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक संस्थाएँ जो नारी को निम्न स्थान प्रदान करते हैं और उनके आत्म विश्वास तथा पहल शक्ति का हनन करते है, उन्हें समझते हुए, बहुत ही सूझ–बूझ से नकारना होगा। नारी के प्रति रूढिवादी विचारधारा वाली सभी सामाजिक संस्थाएँ स्कूल की समानता चेष्टा की प्रतिद्वन्द्वी हैं।

बालिका जन्म से ही तिरस्कृत है और तबसे ही वह यह महसूस करती है कि उसकी जरूरत नहीं। तरह-तरह के नकारात्मक संकेत उसे मिलते रहते हैं। उसको भेदभाव झेलना पडता है खासतौर से खेल-कूद, खान-पान और स्वास्थ्य संरक्षण में। उपेक्षा तो हर वक्त उसकी होती ही रही है। अक्सर उसे स्कूल जाने से वंचित रखा जाता है। वही बालिकाए तो स्कूल जा पाती हैं जिन्हें जन्म लेने दिया गया हो और जो पांच वर्ष की आयु पा जाएं। पारम्परिक परिवारों में ऐसा होता है कि बालिका के स्वाभाविक कौतूहल और जिज्ञासा को दबा दिया जाता है और यदि वह जरा भी बोले तो उसे रोका जाता है। इस समाजीकरण की प्रक्रिया मे वह स्कूल पहुचने से पहले ही संकोची, परावशी, दब्बू और मूक बन जाती है। और वह यह मान लेती है कि वह घर व घर के बाहर दूसरे दर्जे की प्राणी है क्योंकि पहला दर्जा पुरुषोचित स्थापन में, उसका है ही नही। आस-पास वह लोग होते हैं जिनका उसके जीवन में विशेष स्थान होता है, जैसे माता-पिता, चाचा-चाची, बुआ, मामा-मामी तथा अन्य पारिवारिक संबंधी या मित्रगण। और यह सब जो भी कहते हैं उसे बालिकाऐं सहज मान लेती है। नतीजा यह होता है कि सभी जातियों, आर्थिक श्रेणियों की बालिकाए और महिलाएं चाहे शिक्षित भी हों, अक्सर ऋणात्मक आत्मबोध से जूझती ही रहती हैं। और विद्यालय इस प्रकार के आत्मबोध और स्वधारणा को और मजबूत कर देता है।

स्वाभाविक प्रतीत होने वाला अस्वाभाविक लिग-भेद पनपता है और दोनों लिंगों में वह विभेदीकरण उत्पन्न होता है जो तथ्य पर आधारित नही है। शाला परिवार में पारम्परिक भूमिका से सम्बद्ध प्रशिक्षण और क्रियाओं की ओर बढ़ाती है जिससे वह उन्हीं व्यवस्थाओं और व्यवसायों को चुनते हैं जो लिंग भेद पर आधारित हैं। पढी-लिखी महिलाए भी उन्हीं व्यवसायों को चुनती है जो उनकी पोषक तथा सहायक पारिवारिक भूमिका का विस्तार मात्र होते हैं। और फिर सोचें जरा शिक्षक और शिक्षा प्राशासकों के बारे में। वे भी चाहे नर हो या नारी, उसी सांस्कृतिक वातावरण से उभरे हैं जिनमें से उनके विद्यार्थी आज आ रहे हैं। और उन्होंने भी वही समाजीकरण प्राप्त किया था जिसमें लिंग पर आधारित कार्य विभाजन प्रचलित था, जैसे कुछ काम पुरुषों के लिए और कुछ महिलाओं के लिए ही निर्धारित थे। पुरुष वर्चस्व माने जाते हैं तथा परिवार के साधनों के एक बडे हिस्से पर उनका आधिपत्य अपेक्षाकृत अधिक रहता है और वह सब से अच्छा भोजन, अधिक विश्राम और अवकाश, अधिक स्वतंत्रता के अधिकारी माने जाते हैं। संबद्ध आयुवर्ग की महिलाओं से असीमित सम्मान चाहते हैं जिसके लिए चाहे सब से अच्छा भोजन, अधिक विश्राम और अवकाश, अधिक स्वतत्रता के अधिकारी माने जाते है। संबद्ध आयुवर्ग की महिलाओं से असीमित सम्मान चाहते है जिसके लिए चाहे बल प्रयोग ही क्यों न करे यह

सब मनोधारणायें घुट्टी में ही पिला दी जाती हैं। जब यह दो वर्ग, युवा और वयस्क, स्कूल नामक इस 'सामाजिक युक्ति' के वातावरण में अपने उन पूर्वाग्रहों के साथ मिलते हैं तो वह 'स्त्रीयोचित' व 'पुरुषोचित' भूमिकायें और आचार व्यवहार लेकर चलते हैं और उनकी मानसिकता में दोनो लिंगों के असमान संबध रचे बसे ही रहते हैं। पाठ्यपुस्तक तथा पाठ्यक्रमों का पुर्नावलोकन और संशोधन किया जा रहा है। प्रायः पाठ्य-पुस्तकों में महिलाओं को कमजोर दिखाया जाता है, बहादुर पुरुषों पर पूर्णतया अवलंबित मानते हुए, उन्हे भीरू, बेवकूफ, बुद्धिहीन तथा द्वेषपूर्ण दर्शाया जाता है।

शैक्षिक सामग्री चाहे छपी हुई किताबें हो या विज्ञापन, चलचित्र खबरें तथा अन्य प्रसारण माध्यम-पुरुषों को प्रधानता देते हुए जेन्डर अन्तराल को बढाते हैं और स्त्रीयोचित तथा पुरुषोचित श्रम विभाजन और नर-नारी में असमान क्षमतायें हैं, ऐसी अवधारणाओं को और सुदृढ करते हैं। यह सब पुरुषों को नायक रूप मे प्रस्तुत करते हैं। बड़ी बात है कि महिलाएं रेडियों, दूरदर्शन पर खबरें पढ़ लें किन्तु वे खबरों की निर्माता नहीं होती। निर्णायक भूमिका बस पुरुषों की ही है। महिलाएं केवल प्रक्षालक तथा नहाने के साबुन के चुनने का काम करती हैं। घरेलू होना स्त्रीयोचित है, व्यापार व राजनीति पुरुषोचित। पुरुषों जैसा व्यवहार करने वाली महिला को आक्रामक और नारीत्व विहीन माना जाता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा संसद द्वारा अंगीकृत उसकी कार्ययोजना (पी.ओ.ए.) शिक्षा को महिला समानता तथा सशक्तिकरण का प्रभावी साधन मानती है। इसके प्रांचल हैं :

- महिलाओं में आत्मसम्मान व आत्मविश्वास बढाना,
- समाज, राजतंत्र तथा आर्थिक गतिविधियों में उनका अस्तित्व दर्शाते हुए महिलाओ की छवि को सकारात्मक बनाना,
- समीक्षात्मक क्षमताओं का विकास करना,
- सामूहिक प्रक्रियाओं के माध्यम से निर्णय लेने और काम करने को बढ़ावा देना,
- महिलाओं को विशेषकर शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य (मुख्यतः प्रजनन स्वास्थ्य) के बारे में सूझ-बूझ के साथ विकल्प चुनने के लिए तैयार करना,

- विकासात्मक प्रक्रियाओं में बराबरी की भागेदारी निभाना,
- आर्थिक स्वतंत्रता के लिए जानकारी, ज्ञान और कौशल जुटाना,
- सभी क्षेत्रों में उनकी बराबरी पर आश्रित साझेदारी को बढ़ाने के लिए उनमें सामाजिक अधिकार और अपने हक को समझने के लिए कानूनी स्थिति तथा जानकारी को और बढाना (संशोधित पी.ओ.ए. 1991 पृष्ठ 2)

इसको संचालित करने के लिए प्रत्येक शिक्षा संस्थान से यहं अपेक्षित है कि वह महिला विकास के कार्यक्रम चलाए और शिक्षकों तथा निर्देशकों को महिला सशक्तिकरण के लिए सही ढंग से ट्रेनिग दे जिससे वह इस काम के लिए विशेष प्रतिनिधि की भूमिका निभा सके। वे कार्यक्रम बनाये जायें जिनसे जेन्डर और गरीबी का 'सुग्रहीकरण' हो सके और जिस प्रक्रिया में शिक्षक और प्रशासक मिलजुल कर एक सफल नेतृत्व दे सकें। जेन्डर सुग्रहित पाठ्यक्रम निर्माण में तथा पाठ्यपुस्तकों से लिंग भेद निकालने की प्रक्रिया राष्ट्रीय और राजकीय स्तर पर की जा रही है।

उद्देश्य

प्रस्तुत मॉडयूल शिक्षकों तथा प्रधान शिक्षको के लिए तैयार किया गया है जिससे वह महिला समानता को पनपा सकें और लिंगाधारित विभेदीकरण का उन्मूलन कर सकें। इस मॉडयूल के प्रमुख उद्देश्य हैं :

1. भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्त्री एवं पुरुषों के बीच बसी हुई असमानताओं के विभिन्न पहलुओं को समझना और संवैधानिक, कानूनी तथा निर्धारित नीतियों और कार्यविधियों को समझना और समझाना।

2. लोकतांत्रिक, न्यायशील, समानाधिकार और आधुनिक टेक्नोलॉजी पर आधारित समाज के परिवर्तनशील ढांचे में महिला और पुरुष की बदलती हुई सामाजिक भूमिका के प्रति आस्था व समझ उपजाना और इस संबंध में अपने पूर्वाग्रहों को समझना और निष्कासित करना।

3. लिंगाधारित समानता को बढ़ावा देने के लिए पाठ्यक्रम के लिए व्यावहारिक बुद्धि का विकास और कार्य नियोजन जिससे बालक-बालिकाओ में सकारात्मक आत्मबोध विकसित हो और वे प्रबुद्ध, न्यायशील, विवेकपूर्ण, नागरिकों, कार्यकर्ताओं, नेताओं के रूप में उभर सकें। उनमें हिम्मत, दृढ विश्वास बढे और वे अपने आप को हर स्थिति का सामना करने में सक्षम पाएं।

सीखने की एक सामूहिक प्रकिया

प्रस्तुत मॉडयूल सामूहिक रूप से सीखने के लिए तैयार किया गया है। यह एक बढ़ता हुआ संकेत है कि चाहे समूह स्थायी हो या अस्थाई, वह समूह के सदस्यों में एक दूसरे के लिए प्रेरक वातावरण उत्पन्न करके, अनेकों व्यावहारिक विचार, सामूहिक चेतना, सजग क्रिया और सबसे महत्वपूर्ण सामूहिक वचनबद्धता उत्पन्न कराते हैं। महिला-पुरुष समानता जैसे सुग्राही क्षेत्र में सामूहिक पारस्परिकता से नई सामाजिक भूमिकाओं के निर्माण के लिए बेहतर समझदारी और गतिशीलता उत्पन्न हो सकती है और सामूहिक तथा वैयक्तिक कार्य-प्रक्रिया पनप सकती है।

इस प्रकार की सामाजिक विषमताओं के समाधान के लिए जिनका उल्लेख प्रस्तुत मॉड्यूल में दिया गया है समूह के सदस्य पारस्परिक विमर्श ले सकते हैं और एक दूसरे के लिए रिसोर्स परसन का दायित्व निभा सकते हैं । इस मॉडयूल का उपयोग व्यक्तिगत अध्ययन तथा प्रयोग के लिए भी किया जा सकता है।

यह अध्ययन समूह अनौपचारिक हो सकते हैं तथा शिक्षकों की नियमित बैठकों में भी इस पाठ्यसामग्री का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसको विद्यालय तथा विद्यालय के बाहर के परिवेश को बदलने के लिए एक आंदोलन का रूप देने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इस साधन सामग्री का उपयोग ब्लाक रिसोर्स सैन्टर तथा डी.आई.ई.टी. में जेन्डर प्रशिक्षण के लिए शिक्षकों तथा प्रधान शिक्षकों के लाभार्थ किया जा सकता हैं।

अध्ययन समूह अपने आप ही इस साम्रगी का अनुसरण कर सकते हैं तथा किसी अन्य विशेषज्ञ की आवश्यकता नहीं होगी। वे स्वयं में ही रिसोर्स परसन का समूह हैं और अकसर अनौपचारिक ढंग से अपना नेता तय करके विभिन्न प्रकार की गतिविधियों को चालू कर सकते हैं।

यह मॉडयूल शिक्षकों के कार्यकाल मे प्रशिक्षण के हिसाब से तैयार किया गया है किन्तु सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण को सम्पादित करते समय उतनी ही उपयोगिता से इसका इस्तेमाल कर सकते हैं ।

मॉडयूल की इकाईयां सब अन्योन्याश्रित व एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। किन्तु प्रत्येक इकाई अपने में पूर्ण है और उसमें स्पष्ट निर्देशों, आवश्यक सूचनाओं और संकेतों का विनियोग है। अन्त में संदर्भ तथा अध्ययन सामग्री भी जुड़ी हुई है।

इकाई

1

लिंग भूमिका पहचान और आत्मबोध

परिचय

यह इकाई निम्नांकित विषयों पर दृष्टिपात करती है :

- शिशु तथा पांव चलने वाले नन्हे बच्चे अपने-अपने सांस्कृतिक परिवेश में किस प्रकार वयस्क महिला और पुरुष छवि में अपने आप को देखना शुरू करते है।
- किस प्रकार से लिंग भूमिका की पहचान पनपती है जो कि विषमतापूर्ण और अधिकतर असमान भेदभाव पूर्ण व्यवहार से लैस होती है और बालिकाओं में हेयता और ऋणात्मक आत्मबोध को उत्पन्न करती है।
- यह हेयता की भावना और ऋणात्मक आत्मबोध बालिकाओं में न सिर्फ बालिकाओं के मुखरित होने और उनकी सफलता में बाधा डालती है बल्कि पीढ़ी-दर-पीढी माताओं से बेटियों को हस्तांतरित होती है। इसके लिए सुनियोजित और युक्तिपूर्ण हस्तक्षेप की आवश्यकता है ।

अपेक्षित उपलब्धि

इस इकाई को सम्पन्न करने के पश्चात् आप निम्नांकित दक्षतायें प्राप्त कर लेंगे।

- बालकों तथा वयस्कों में आत्म विकास की उस प्रक्रिया को समझ लेंगे जो उनमें लिंग भूमिका की पहचान और आत्मबोध पनपाती है।
- लिंग आधारित भेदभाव किस प्रकार बालिकाओं में ऋणात्मक आत्मबोध, हीन आत्म सम्मान और धुंधली आत्मछवि और बालकों में वरिष्ठता और प्रभुत्व का बढ़ा-चढ़ा आइना पनपाता है- इसका मूल्यांकन कर सकेंगे।
- आप महिला और पुरुष की लैंगिक और लिंगाधारभूत सामाजिक भूमिका में अंतर समझ पायेंगे।

घर में, बाजार में, कक्षा में, खेल के मैदान में, स्कूल मध्यावकाश में और कहीं भी हम लड़कियों और लड़कों के व्यवहार में बहुत से अंतर देखते है । उदाहरण के लिए सामान्यतः लड़के फुर्तीले, खिलाड़ी प्रवृत्ति वाले, विश्वस्त, निडर, जोशीले, कोलाहलपूर्ण होते हैं और कभी-कभी उद्दंड, आक्रामक झगड़ालू, धौंस जमाने वाले और नियंत्रण से बाहर भी हो जाते हैं।

दूसरी ओर लड़कियां अक्सर विनम्र, शान्त अक्सर शर्मीली, दब्बू, कम बोलने वाली, निश्चेष्ट, आसानी से धमकी में आ जाने वाली और हर आदेश को बिना शर्त मानने वाली, अधिक फरमाबरदार और आसानी से नियंत्रण स्वीकार करने वाली होती है ।

उपरोक्त बिन्दुओं को निम्नांकित प्रतिज्ञाप्तियों के आधार पर विश्लेषित कीजिए और यदि आप चाहें तो अपने अनुभव पर आधारित और बिन्दु शामिल कर लें।

प्रतिज्ञप्ति एक

हम उन भिन्नताओं को न केवल देखते हैं बल्कि यह विश्वास करते हैं कि यह दोनों लिगों के लिए प्रदत्त है- जीव प्राणीगत है और इसलिए बदले नहीं जा सकते हैं।

प्रतिज्ञप्ति दो

यह भिन्नताएं दोनों लिंगों के युगायुग सामाजिकरण प्रक्रियाओं और अनुभवों पर आधारित हैं। समाज में से ही इनका निकास है और समाज में ही इनका स्थापत्य है, इसलिए समाज ही इनको बदल सकता है।

प्रतिज्ञप्ति तीन

नर-नारी की सामाजिक भूमिकाएं सांस्कृतिक देन हैं और अलग-अलग स्थिति तथा समय काल में इनमें अन्तर होता है।

प्रतिज्ञप्ति चार

आज की मानव सभ्यता पूरे विश्व में दोनों लिंगों की सामाजिक भूमिका के लिए नवीन अपेक्षाएं और नई सम्भावनाएं उत्पन्न कर रही है।

लिंग और उसकी सामाजिक भूमिका

पहला जैविक आधार गत है और दूसरा लिंग के आधार पर निर्दिष्ट विविधता को मूल्य देता है ।

प्रत्येक मानव नर या मादा के रूप में जन्म लेता है लेकिन उसकी संस्कृति उसे पुरुष अथवा स्त्री बनाती है। इसलिए लिंग की सामाजिक भूमिका (जेन्डर) लिंग आधार गत सामाजिक व्यवहार की परिभाषा ही तो है।

समाज कृत अन्य भिन्नताओं में से आधारित सामाजिक भूमिका सबसे प्राचीन और सार्वभौम है। यह सामाजिक भूमिका कठिनाई से बदलती है किन्तु चूंकि यह समाज द्वारा निर्मित है इसलिए यह अमिट नही और परिवर्तित की जा सकती हैं।

हम दोनों लिंगों में अन्तर देखते हैं जैसे लड़के अधिक आक्रामक, चुलबुले और प्रतिस्पर्धी होते हैं और लड़कियां अधिक निश्चेष्ट, समाजीकृत और कहना मानने वाली होती हैं जोखिम उठाने वाले पुरुषों का झुकाव स्वार्थपरता, जोखिम उठाने की प्रवृत्ति और हिंसात्मक व्यवहार (जो अक्सर महिलाओं के खिलाफ होता है) की तरफ होता है। महिलाओं का झुकाव सावधानी बरतने, स्वीकारणीय, प्रतिपालकीय और अक्सर निश्चेष्टवान व्यवहार की ओर होता है ।

हम यह भी विश्वास करते हैं कि 'स्त्री-पुरुष जन्म से ही ऐसे हैं'।

लिंग आधारित सामाजिक भूमिकाएं सीखी जाती है। अपने सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक आयामों में यह भूमिकाएं हर अलग-अलग संस्कृति में अलग-अलग ही होती हैं। सामाजिक मूल्य तथा मान्यताएं विभिन्न संस्कृतियों में बहुत कुछ भिन्न होते हैं। लिंग आधारित सामाजिक भूमिकाएं कुछ हद तक सार्वलौकिक हैं किन्तु अधिकतर इनका निर्देशन एक सांस्कृतिक कृत्य हैं।

मार्गरेट मींड ने (1935) न्युगिनी की एक जनजाति के साथ काम करते हुए पाया कि:

अरापेश–पुरुष और महिलाएं दूसरों की आवश्यकताओं और मन्तव्य के प्रतिपाक्षी होते हैं और आक्रामकता तथा प्रतिस्पर्धा से बचते हैं। सारांश यह है कि उनका व्यवहार हमारी संस्कृति में नारी सुलभ माना जाएगा।

मुन्दूगुमोर — नरभक्षी-पुरुष और महिलाएं। शत्रुतापूर्ण, झगड़ालू, दूसरों के अधिकारों तथा भावनाओं से बेरुख होते हैं तथा इनको हमारी संस्कृति में पुरुष प्रधान गुण माना जाता है। चम्बूली-पुरुष संवेदनशील, असीम स्नेह से पाले गए, कलात्मक, भावावेशी और परनिंदा प्रेमी होते हैं। महिलाऐं स्थिर व्यावहारिक और आक्रामक प्रवृत्तियों की होती हैं।

अफ्रीका के पुरुष अपनी प्रकृति और अस्थिपिंजर तथा मांसपेशियों की बनावट के आधार पर कड़ी मेहनत कर सकते हैं। परन्तु अधिकतर अफ्रीकी महिलाऐं इसके विपरित ही सोचती हैं। जब उनसे यह कहा गया कि अमरीका में भारी काम पुरुष करते हैं तो अफ्रीका की महिलाओं ने आश्चर्य और असंतोष प्रकट किया। उनके विचार में अमरीकन गलती कर रहे हैं क्योंकि उनके अनुसार पुरुष शराब बहुत ज्यादा पीते हैं और खाते कम हैं जिससे ताकत का हनास होता है और वह कृषि संबंधित कठिन कार्यों के लिए उपयुक्त सामर्थ्य नहीं समेट पाते। उनके विचार से पुरुष इस प्रकार के कार्य के लिए स्वभाव से ही क्षम्य नहीं है। और शायद आप जानते हों, अफ्रीका में सारा खेती-बाड़ी का काम और बाजार घर महिलाऐं ही करती हैं तथा अफ्रीका का 75 प्रतिशत खाद्यान्न उपजाती हैं।

जुनी इन्डीयनस में (अमरीका निवासी) वर न कि कन्या, सुहागरात को डर और आशंका से चिंतित रहते हैं और जुनी समाज में अधिकतर निर्णय महिलाऐं ही लेती हैं।

ईरान में पुरुषों से सहनशीलता अपेक्षित नहीं बल्कि यह माना जाता है कि वे भावुक होंगे और यहां तक कि अनावश्यक उद्वेग को प्रदर्शित करेंगे। अगर वे यह सब नहीं करते तो उनमें कुछ कमी मानी जाती है और वे विश्वास के योग्य नहीं समझे जाते। ईरानी पुरुष कविता में रस लेते हैं और उनसे अंतर्बोधी और भावुक होने की अपेक्षा की जाती है न कि तार्किक। ईरान में महिलाएं तार्किक और व्यावहारिक बुद्धिवाली समझी जाती हैं।

भारत में मेघालय के मातृ प्रधान समूहों में स्त्री अधिक विश्वस्त और भूमि-संपति की अधिकारिणी है और पुरुष दूसरे दर्जे के अधिकारी माने जाते हैं।

केरल में नायर महिलाऐं जो अभी माक मातृ प्रधान तथा मातृ स्थान पर ही विवाहोपरान्त रहती थीं, उनमें यह प्रथा थी कि ऊंची जाति के पति रात को आते और भोर होते ही चले जाते। सम्पत्ति माता से पुत्री को प्राप्त होती। समुदाय ने अपनी यह प्रथा छोड़ दी है और अब पितृ-सत्ता प्रणाली अपना ली है। फिर भी नायर महिलाऐं अभी भी काफी हद तक साझेदारी के दृष्टिकोण को अपनाती हैं। मध्यभारत तथा उत्तर-पूर्वी प्रदेशों की जनजातियों में अधिक समानता के भाव

हैं। महिलाऐं जीविका मात्र पर सीमित परिवारों की मुख्य भरणी हैं, पुरुष शराब पीते हैं और कुछ नहीं करते। पहाड़ी जनजातियों में भी महिलाऐं अधिक मूल्यवान मानी जाती हैं, विवाह प्रणालियों में "भाग लजाना" या "भगा ले जाना" प्रथा प्रचलित है और यदि कन्या विवाह के लिए राजी नहीं होती तो उसके माता-पिता के पास वापिस भेज दिया जाता है। 1995 की 26 जनवरी को उत्तर के एक पर्वतीय राज्य की एक झांकी में दूल्हे को अपने दरवाजे पर खड़ा होकर, दुल्हन की बारात का इंतजार करते दिखाया गया था।

फिलीपिन में साम्राज्यवाद से पहले मातृ-प्रधान समाज था और आज भी वहां बूढ़े माता-पिता की सेवा-सुश्रुषा बेटियों का दायित्व माना जाता है। इससे बेटियों का मान बढ़ता है और माता-पिता उनके प्रशिक्षण और लालन-पालन पर समय और धन व्यय करते हैं। फिलीपिन में हाईस्कूल और युनीवर्सिटी में लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक संख्या में हैं।

शब्दावली

पितृ-प्रधान : पुरुष परिवार में सर्वशक्ति सम्पन्न होता है।

पैत्रिक : सम्पत्ति पिता से पुत्र को मिलती है और वंशावली भी पुत्र से ही चलती है।

पितृव्य : विवाह के बाद दुल्हन पति के घर पर निवास करती है।

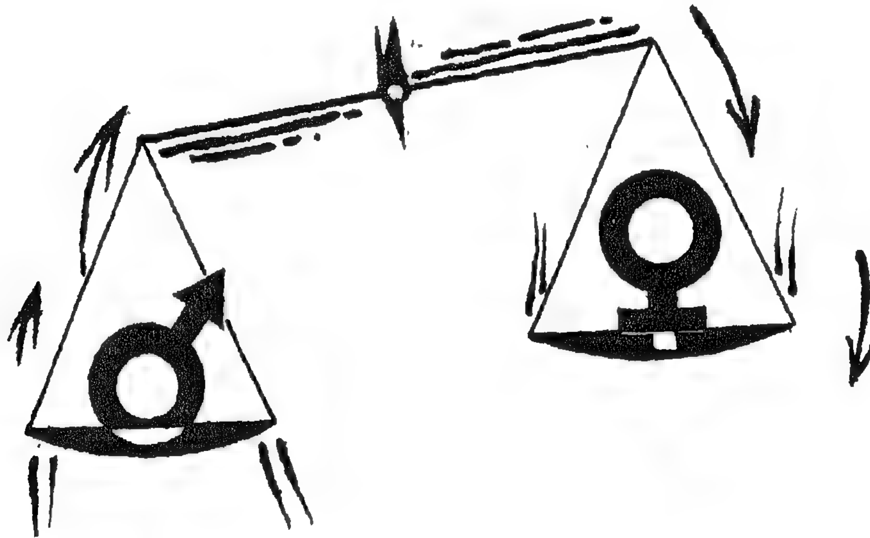
मातृ-प्रधान : परिवार की सबसे बड़ी महिला ही सर्वशक्ति सम्पन्न होती है।

मात्रिक : सम्पत्ति माता की तरफ से बेटी को मिलती है तथा वंशावली बेटी से चलती है।

मातृव्य : विवाहोपरांत पति पत्नी के घर पर ही निवास करता है।



नर-नारी में व्यवसाय का आरोपन इसी प्रकार से बदल जाता है। क्योंकि यह विश्वास किया जाता है कि महिलाओं का सिर ज्यादा सख्त और मजबूत होता है। इसलिए अरापेश महिलाएं सिर पर बहुत बोझा लाद कर चलती हैं वैसे ही जैसे अफ्रीकी, एशियाई और भारतीय महिलाएं। तमिलनाडु की 'हैड लोडर्स' और पहाड़ी तथा मैदानी क्षेत्रों में सिर व कमर पर लकड़ी का बोझ लादे हुए जाती हुई महिलाएं भारत में एक सुपरिचित दृश्य है वैसे ही जैसे दिन-प्रति-दिन सड़कों व भवनों के निर्माण के लिए पत्थर तोड़ती महिलाएं। मरकूसा लोगों का खाना पकाना, घरदारी और शिशु पालन खासतौर पर पुरुषों का काम है और इसको देखकर राल्फ लिन्टन ने कहा 'किन्तु अधिकांश समाजों में लिंग विभाजन के नमूने निरन्तर सतत् हैं'।



आत्म बोध और आत्म सम्मान

आत्म बोध

आत्मबोध से अभिप्राय है कि एक व्यक्ति अपने बारे में क्या अवधारणाएं रखता है, अपनी विशेषताएं, अपने ज्ञान, अपनी त्रुटियां सब समझता है और दूसरे उसे कैसा समझते हैं उसका

आभास रखता है। आत्मबोध ऋणात्मक, नकारात्मक तथा अपर्याप्त हो सकता है। या सकारात्मक और पर्याप्त हो सकता है। इसी से उसकी अपनी आत्म छवि निर्मित होती है। यह समझ में आता है कि अन्य व्यक्ति हमारे बारे में क्या सोचते हैं, हमें कैसा पाते हैं। बहुधा आत्म छवि, आत्मबोध के पर्यायवाची रूप में प्रयुक्त की जाती है। सही बात तो यह है कि आत्म छवि अधिकांश अपने बारे में दूसरों के प्रतिबिंबन पर निर्भर करती हे जबकि आत्मबोध में इस प्रतिबिंब के साथ-साथ अपनी अवधारणाएं, मूल्य प्रेरक, लक्ष्य, अपेक्षाएं जैसे तथ्य भी सम्मिलित हैं।

आत्म सम्मान

आत्म सम्मान आत्मबोध का सक्रिय स्वरूप हैं, जिसमें एक व्यक्ति अपने समाज के परिप्रेक्ष्य में अपना मूल्यांकन करता है। एक व्यक्ति का आत्म सम्मान इस बात पर निर्भर होता है कि वह स्वयं को कैसे मूल्यांकित करता है और जो दूसरों की अपने बारे में राय के सम्मिश्रण से उपजता है। इस प्रकार व्यक्ति का आत्म सम्मान तथा दूसरों द्वारा दिया गया सम्मान अन्योन्याश्रित हो जाते हैं। उच्च आत्म सम्मान और उच्च प्राप्ति प्रेरणा साथ-साथ चलते हैं। हीन आत्म सम्मान से स्वयं प्रताड़ित व्यवहार उत्पन्न होता है नतीजा यह होता है कि लड़कियों की प्राप्तियां कम रहती हैं और फलस्वरूप ऋणात्मक आत्म-सम्मान बढ़ता है। वे लोग जिनके लक्ष्य ऊंचे नहीं होते उनकी आत्मछवि धुंधली ही रह जाती है। ऐसे व्यक्ति असफलता से अधिक डरते हैं बजाय इसके कि सफलता के जिज्ञासी हों उनका अपने बारे में विचार कमतर ही होता है और उनकी अधिकाधिक योग्यता कम जोखिम वाले मामूली कार्यो तक ही सीमित रह जाती है।

स्वायत्व, आत्म सम्मान व सृजनात्मकता

वे व्यक्ति जो अपने फैसले आप करते हैं और जानते हैं कि वे कौन हैं, जो अपने व्यवहार की पूर्ण जिम्मदारी लेते हैं, वे अपने भाग्य की डोर को समूह के हाथ में नहीं छोड़ते। ऐसे व्यक्तियों को अन्तःशासित व्यक्ति भी कहा जाता है। सफल और सृजनात्मक व्यक्ति स्वायत्व के लक्षणों से आभूषित होते हैं और आत्म सम्मान के उच्च पायदान पर खड़े होते हैं। सृजनात्मक व्यक्ति अपने आपको व्यक्तिवादी, स्वायत्व युक्त, निश्चयात्मक, मेहनती और जोशीला समझते हैं। कम सृजनात्मकता वाले लोग अपने बारे में कुछ ऐसे विशेषणों का प्रयोग करते हैं। जैसे जिम्मेदार, निष्कपट, बर्दाश्त करने वाले और दूसरों को समझने वाले इत्यादि और जरा कमतर छवि के होते

है। अधिक सृजनात्मक व्यक्ति अधिक सधे हुये और अपने काम में अधिक रुचि लेने वाले व क्रियाशील होते हैं।



आत्म परिपूर्ण

प्राणी मात्र को दूसरों से प्यार और सहानुभूति पाने की मौलिक आवश्यकता होती है और यदि वह नही मिलता तो रोगात्मक स्थिति हो जाती है जिससे मृत्यु तक हो सकती है। आवश्यकताओं के पांच समूह (मैस्लों 1954) चुने गए, शारीरिक सुरक्षा संबंधी प्रेम, आदर और आत्म परिपूर्ण

इन सब आवश्यकताओं की तुष्टि के लिए दूसरों से तथा अन्य समूहों से आदान-प्रदान आवश्यक होता है। इस प्रकार अन्य समूहों की सदस्यता हमें एक पहचान देती है। हमारी 'खुदी' और दूसरों की खुदी हमें यह समझने की शक्ति देती है कि हम कितने हद तक दूसरों से मिलते हैं और उनसे कितने अलग हैं। अपना सामाजिक समूह-संस्कृति जीवन को अर्थ देती है, तथा एक संदर्भ प्रदान करता है और जिसके माध्यम से हम वातावरण को देखते व समझते हैं। इस प्रकार समूह वह संदर्भ केन्द्र हो जाते हैं जो हमें यह सुझाते हैं कि हम कौन हैं, हम क्या नहीं हैं, हम कैसे व्यवहार करे और हम क्या न करें। आत्म अनुभूति का सबसे पहला लक्षण यही तो होता है कि शिशु किस प्रकार माता-पिता का स्नेह प्राप्त करता है। यह शिशु अपने आपको उनके प्रेम का पात्र समझ पाता है और अपने आपको इसके योग्य समझता है और उसका माता-पिता से स्नेह संबंध स्थापित हो जाता है। यही वह केन्द्र बिन्दु है जहां से 'स्वयं' स्वरूप का ढांचा निर्मित होना शुरू होता है। क्योंकि बाह्य अनुभूति में परिवार प्राथमिक सामाजिक इकाई का रूप ले लेता है और माता-पिता इस पारिवारिक ढांचे में उसके समाजिकरण के वाहक बनकर उसे वह लक्ष्य और मूल्य सुझाते हैं। जिससे आगे चलकर वह अपनी आचरण संहिता बना डालते हैं। दूसरों से आदान-प्रदान के लिये यह आचरण संहिता अधिकार प्रदान करती है और महत्वपूर्ण अन्य लोगों से प्रत्युत्तर प्राप्त करती है। इसी से बच्चों को यह पता लगता है कि वह कौन है और उन्हें दूसरे क्या समझते हैं। सकारात्मक प्रत्युत्तरों से सुरूचिपूर्ण आत्म छवि निर्मित होती है और उसका फल होता है आत्म परिपूर्ति । औरों का अधिक नकारात्मक रवैया और भावनायें जब बच्चों पर थोपी जाती हैं तो उनका व्यक्तित्व कुंठित होने लगता है और आत्म सम्पूरित होने के लक्षण उनमें कम होने लगते हैं। वह अपनी पूर्ण सक्षमता हासिल नहीं कर पाते।

हम सब में सकारात्मक दिशाओं में विकास की क्षमता होती है। जब हमें सकारात्मक, ग्राही वातावरण में रहने का अवसर मिलता है तब आत्म परिपूर्ण प्रक्रिया शुरू होती है।

आत्म बोध में विसंगति

जब व्यक्ति उस वातावरण में पनपता है जहां उसका नकारात्मक आत्म संबंधी धारणाओं से मुकाबला रहता है, तब वह उन धारणाओं को विपरीत प्रमाणों के बावजूद अपना लेता है। कभी-कभी हम अपने लिए उन धारणाओं को अंगीकार कर लेते हैं जो सही नहीं और यह भी जानते हैं कि किस प्रकार दूसरे लोग इन धारणाओं से हमें मुक्त कराने के लिए प्रयत्नशील हैं।



चकमक
जुलाई, 1992

अधिकांश संस्कृतियों में 'लिंग भूमिका पहचान' तथा 'आत्म बोध' का निर्माण

सर्वमान्य व्यवहार के तरीकों के लिये सामाजिक भूमिका एक अपेक्षा होती है। माता-पिता, बड़े भाईयों, बहनों और परिवार के अन्य सदस्यों की व्यवहार प्रणाली से लिंगानुकूल भूमिका सीखी जाती है। उपयुक्त अवसरों पर इसी का पुष्टीकरण होता है। जैविक लिग और समाजीकृत लिंग भूमिका जेन्डर विकास के कल्पनात्मक दृष्टिकोण से अलग-अलग अवधारणायें हैं। दो या तीन वर्ष की आयु के बच्चे अपने को लड़का या लड़की समझने लगते हैं और पाँच वर्ष की आयु तक वे सुनिश्चित ही अपनी लिंग भूमिका में रच बस जाते हैं।

शैशव, बाल्यकाल, स्कूल-पूर्व, किशोरावस्था और वयस्क में भूमिका इंगन



अक्सर देखा गया है कि बालिकाओं तथा महिलाओं में निम्न आत्म-छवि और ऋणात्मक आत्म आवधारणा होती है उनकी जरूरत ही नहीं है, ना ही उनका कोई मूल्य। आत्म अवधारणा के निर्माण में शिशु-पालन प्रक्रिया का बहुत बड़ा दायित्व है। हमारी संस्कृति में बच्चों को उनके लिंगाधार पर अनुभव प्रदान किए जाते हैं। लड़कियों को कम प्रतिष्ठा दी जाती है, अक्सर उन्हें बोझ समझा जाता है जिससे छुटकारा पाना है और 'कमतर' दर्जा मिलता है। लड़कियां बहुत

बालपन से यह जान जाती है कि लडकों को विशेष महत्त्व दिया जाता है । दुलार करने वाले स्नेही माता-पिता के घर में भी आगन्तुक से इस प्रकार का सम्बोधन सुनने को मिल जाता है 'कितनी प्यारी बच्ची है, कितना अच्छा होता यदि यह लड़का होती' छोटी-छोटी बालिकाएं समझ लेती हैं कि कितनी उत्सुकता से एक नर-शिशु को पैदा होने पर उत्साहपूर्वक समारोह किया जाता है। वह माता-पिता जिनके केवल बेटियां होती हैं दया के पात्र माने जाते हैं। 'मेरे विषय में जरा सोचिए। मैं तीन बेटियों की माँ हूँ। मेरा दूसरा दोहिता लड़का हुआ, पहली लड़की थी । घर में अंधेरा छा गया क्योंकि इस शिशु को शारीरिक विसंगति थी जो कि सुधार के आयाम में थीं। फिर भी सब चिन्तित थे। और हमारी पडोसन बधाई देने आई और कहने लगी 'चलो मुंडे दी वाज ते पई' ।

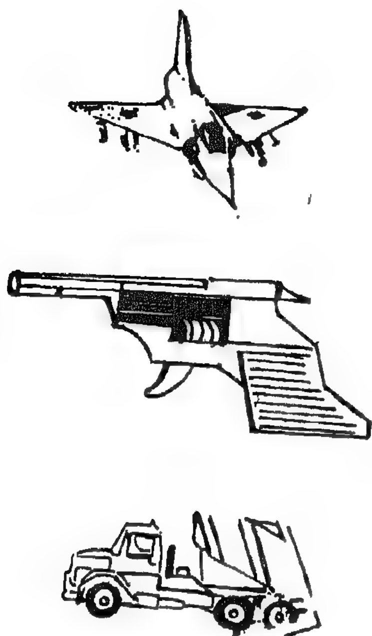
जन्म पर

बेटे के जन्म पर प्रसन्नता और समारोह और बेटी के जन्म पर दुःख की अभिव्यक्ति और भाग्य की पराजय माना जाता है। दाइयां भी लम्बा मुंह बना लेती है क्योंकि उन्हें बख्शीश, बधावा नहीं मिलेगा। दिल्ली के एक सरकारी अस्पताल में दाइयां लड़के के जन्म पर थाली बजाती हैं जबकि लड़की के जन्म पर एक मिट्टी का घड़ा फोड़ती हैं क्योंकि धातु की तरह ही लड़का मूल्यवान माना जाता है और लडकी केवल धूल ही तो है। छोटी-छोटी बालिकाएं यह सब देखती हैं और समझती हैं और संकेत लेती हैं कि भाई अधिक महत्वपूर्ण है। लड़के हीरे हैं और लड़कियां केवल सामान्य पत्थर ही।

शैशव

माताएं बेटों को बेटियों की अपेक्षा लम्बे अर्से तक स्तन-पान कराती हैं। स्वयं माताओं को भी पुत्री जन्म के बाद उपेक्षित किया जाता है। न उन्हें खाना और न ही आराम जितना पुत्र जन्म के बाद मिलता है। वे अपनी निराशा को स्पन्दन के माध्यम से कही अनकही में बालिकाओं को हस्तान्तरित कर डालती है। लड़कों का अधिक दुलार और पुचकार होता है। एक अध्ययन ने यह निष्कर्ष निकाला कि 400 लोरियों में से केवल तीन बालिकाओं के लिए थीं। लड़का बेश-कीमती होता है, राजा बेटा, और लडकी अभिशाप, 'सिर मुंडी, मर जानी'।





घुटने चलने और स्कूल-पूर्व की आयु

दो से तीन साल तक के बालक जान जाते हैं वे लड़के हैं या लड़की । उनको लिंग विशेष भूमिका आधारित नामों से अलंकृत किया जाता है, अलग-अलग तरह के वस्त्र दिए जाते हैं, अलग तरह के खिलौने और अलग-अलग तरह का खान-पान। लड़कियों को गुड़िया और बर्तन तथा लड़कों को बन्दूकें और गाड़ियां, हवाई जहाज की प्रायः दिए जाते हैं। इस प्रकार इसी आयु से ही नर-नारी के दायरे निश्चित हो जाते हैं। लड़कियां और महिलाएं घर के अन्दर और लड़के और पुरुष घर के बारह जिनकी पहुँच आसमान तक।

6-10 वर्ष की आयु

लंबाई और वजन के आधार पर मध्यम वर्गीय परिवारों के बालक-बालिकाओं में विशेष अंतर नहीं है किन्तु सामान्य स्कूलों में अधिकाश लड़कियां अपर्याप्त पोषित और कम वजन की होती हैं। घरों में यह साफ दिखांई देता है कि पहले पिता और पुत्र फिर मां और पुत्री भोजन प्राप्त करते हैं। समृद्ध परिवारों में भी सबसे अच्छा भोजन पुरुष वर्ग को दिया जाता है मांस और मछली के स्वादिष्ट टुकड़े पुरुषों और लड़कों को मिलते हैं । लड़कियां इस स्थिति को देखती हैं समझती हैं और अपनी कमतरी को आत्मसात् कर लेती हैं। अक्सर बड़ी आयुवाली महिलाओं को दृष्टिकोंण यही होता है कि कम पोषण का भोजन लड़कियों के लिए हितकर है अधिक प्रोटीन और पुष्टिकरण वाला भोजन जल्दी ही तारुण्य ला डालता है। इसके प्रमाण स्वरूप भारत के अधिकांश भागों में नगर में रहने वाली बालिकाए जल्दी रजस्वला हो जाती हैं जबकि कम पौष्टिक आहार प्राप्त ग्रामीण बालिका को इस स्थिति से देर तक बचाव मिल जाता है।

तारूण्य अवस्था

बालिकाओं में तारुण्य का प्रवेश एक प्रकोप माना जाता है। क्योंकि इसके बाद विवाह तक बालिका की विशेष देखभाल रखनी पड़ती है। दक्षिण भारत में बालिकाओं के लिए रजस्वला होने पर प्रचलित रीतियां बहुत अलंकृत होती है जिनमे बालिकाओं को काफी उलझन होती है जैसे अपनी लम्बी घघरी पर आधी साड़ी पहननी पड़ती है और लडके चुटकी लेते है। अक्सर

हर महीने में रजस्वला के दिनों मे बालिका को स्कूल नही भेजा जाता। स्कूलों में बालिकाओं के लिए प्रसाधन कक्ष नही होते। अधिकांश लडकिया इस अवस्था में या तो स्कूल से निकाल ली जाती हैं या स्कूल जाना छोड़ देती है। यूं ही आठ-नौ वर्ष की आयु में वे स्कूल जाना शुरू करती हैं और फिर जल्दी ही छोड देने के कारण प्राथमिक शिक्षण भी पूर्ण नहीं कर पाती।

रीतियाँ, त्यौहार और गीत

पारिवारिक रीतियों और त्यौहारों में पुरुष वर्ग की महत्ता को देखते हुए लडकियां बड़ी होती है। छोटी लड़कियां अच्छा पति पाने के लिए व्रत रखती है। महिलाएं पति की दीर्घ आयु की इच्छा से व्रत करती हैं। पुत्र प्राप्ति के लिए व्रत होते हैं। भाईयों को महत्वपूर्ण मानकर त्यौहार मनाए जाते है जैसे रक्षा बन्धन, भाई दूज। इन अवसरों पर बहिनें भाईयो को राखी और कलावे के ध ागे बांधती हैं और माथे को रोली, और केसर के तिलक से सुशोभित करती हैं। प्रार्थना करती हैं उनके लम्बे जीवन की और प्रत्युत्तर में उन्हें सुरक्षा के लिए आश्वासन मिलता है। और भाई चाहे आयु में छोटे ही क्यों न हों, अपनी बडी बहनों के ऊपर आचरण संहिता से आलोचना कर सकते हैं। हर स्थिति में लड़कियां चाहे वह बड़ी हों या छोटी पुरुष वर्ग के सामने हाथ बांधे रहती हैं। यही उनका मुकाम है।

हिन्दू घरानों में वर्ष में दो बार उन बालिकाओं को जो अभी तरुणावस्था तक नही पहुंची हैं मां दुर्गा के प्रतिरूप में पूजा जाता है। जन्म-ग्रह में उनका अस्थाई निवास उन गीतों तथा रीतिरिवाजों से याद दिलाया जाता है। जिसमे हर समय उन्हें अस्थाई सदस्यता का बोध कराया जाता है, जिसमें उन्हें यह बाताया जाता है कि उनका असली घर उनके पति का घर है। हर समय इस बात का दबाव होता है कि उन्हें पति के घर में समायोजित होना है तथा उसके अनुकूल तैयार होना है। उन्हें अपनी आवाज उठाना या जवाब देना वर्जित होता है, उन्हें अपनी नजर झुका कर रखने को कहा जाता है। नौ-दस वर्ष की उम्र के करीब उन्हें घर के बाहर खेलने से रोका जाता है जबकि लड़कों को बाहर रहने, सड़कों पर जाने की खुली छूट होती हैं इससे लड़कों का व्यक्तित्व खुला और स्वच्छन्द (उच्श्रृंखल) और लड़कियों का संकुचित ही रह जाता है।

शादी के गाने ऐसे होते हैं जिसमें पति के घर में लडकियों के लिये बुरे व्यवहार तथा शारीरिक हिंसा का जिक्र होता है। उदाहरण के लिये पत्नी को मारना रात्रि मिलन का स्वाभाविक भाग माना जाता है। एक पंजाबी गीत इस प्रकार से है– 'बीच रात में वह मुझे मारता है और मेरी कोमल हड्डियां तोड़ देता है, फिर सुबह मेरे आंसू पोंछता है और जानना चाहता है कि मुझे

कहाँ–कहाँ लगी है' दूसरा इस प्रकार है, जैसे ही तुम शकरकंद के खेतों को सींचने जाते हो अपने रास्ते जाओ, परन्तु मुझे इतना ज्यादा न मारें क्योंकि मैं एक कोमल लड़की हूँ'।

लगातार एक बात माता-पिता को चिंतित करती है – लडकी के लिये सही जीवन साथी की खोज और दहेज की रकम की चिंता। माता-पिता की परेशानी लड़कियों को शर्म और अपराध की भावना से भर देती है और वे असहाय सी देखती रहती है। कुछ लड़कियाँ तो मां बाप को इस सदमें से उबारने के लिये अपना जीवन खत्म कर देती है। दहेज का उत्पीड़न, बुरा व्यवहार और दुल्हन को जलाना, ऐसा लगता है जैसे ये देश के विभिन्न भागों में बच्ची को मार डालने के रूप में फिर से जी उठा है। हरियाणा और पंजाब में लड़की को गर्भ में ही खत्म कर डालते हैं और वह निरंतर चल रहा है और लडकी शिशु की मृत्यु लड़के शिशुओं की अपेक्षा कहीं अधिक है।

इसके विपरीत, लड़कों को न केवल अच्छा भोजन, अच्छा उपचार दिया जाता है परन्तु उन्हें इस बात के लिये प्रोत्साहित किया जाता है कि वे उद्यमी और उग्र बनें। सड़कों पर लड़ाई और पत्थरबाजी करके 'जीतकर' लौटने पर उन्हें प्रभावी बढ़ावा दिया जाता है बल्कि लड़के यदि मार खाकर घर लौटे और रोते हुए पाये जायें तो उन्हें झिड़का जाता है। कुछ अपमानजनक बातें कही जाती है जैसे 'क्या तुम लड़की हो जो रोये जा रहे हो', 'शर्म आनी चाहिए क्यों नहीं चूड़ियां पहनकर घर बैठ जाते' यह शायद लडकों में एक नकारात्मक उद्विग्नता पैदा करती है जो उन्हें उग्र, हिंसक और लड़ाकू बनाता है।

लड़कों को बाजार के कामों के लिए भेजा जाता है और घरेलू कार्यों के अतिरिक्त कार्य के लिये तैयार किया जाता है। लड़कियों को घर के कामों, पशुओं की देखभाल, पानी भरने, लकड़ी चारा इकट्ठा करने के काम दिये जाते हैं। यह प्रत्यक्ष रूप से भविष्य के लिये घरेलू कामों का एक प्रशिक्षण है जो लड़कियों के लिए भविष्य के दृष्टि दर्शन के लिये होता है। लड़के बहिर्गामी, बहिर्मुखी, हिम्मती हो जाते हैं। लड़कियां घर घुसी, सीमिंत और सीमाबद्ध हो जाती है। लडकों पर इस बात के लिये बराबर दबाव डाला जाता है कि वे कुछ हासिल करें, कुछ बनें, कमाने वाले बनें, माँ-बाप व अपने परिवार की सहायता करें, और उन्हें बड़ी जल्दी बाहरी दुनिया में भेज दिया जाता है। यह सब अक्सर लड़कों को परेशानी में डाल देता है। अपराधी अपराध और मादक द्रव्यों को लेने की और यही सब बातें उन्हें अग्रसर करती हैं।

यह बात बिल्कुल साफ है कि लिंग भूमिका समाजीकरण ने केवल लड़कियों को यह बताता है कि वे भिन्न हैं बल्कि यह भी बताता है कि उनकी घर में ज्यादा जरूरत नहीं है वे निम्न

हैं और अपने को धन्य माने कि उन्हें स्कूल या सहेली के घर या काम करने जाने की अनुमति मिल रही है। उनकी अपनी पसंद या इच्छा का कोई महत्व नहीं होता। 'बाबुल मैं तेरे खूंटे की बछिया जित बाँधें बंध जायेंगे'। लड़की को उसके जन्म गृह में एक अस्थाई सदस्य माना जाता है। और पतिगृह में भी अपनाई नहीं जाती है और हमेशा 'बाहरी' सदस्य का दर्जा ही पाती है। 'हम तो दोनों जहां से गए ना खुदा ही मिला न विसाले सनम'। यदि लडका लंबा हो रहा है तो गर्व से देखते हैं -लड़की लम्बी हो रही हो तो हमेशा ताना ही मिलता है "ताड़ की ताड़ होई जा रही है" (यह तो ताड़ के पेड की तरह बढ़े ही जा रही है)

औरतें अपनी जाति से ही नफरत करती हैं

औरतें जो लडके को जन्म देती है उसे सम्मान दिया जाता है और बहुत अच्छा भोजन आराम, अच्छे कपडे, गहने दिये जाते हैं और अच्छे से रखा जाता है। जिनकी लड़कियां होती हैं उन्हें अनादर, कम भोजन, यहां तक कि अपमानित किया जाता है। कौन औरत ऐसा नसीब चाहेगी। 'लड़कियों को पैदा ही नहीं होना चाहिए'। आजकल उनको पैदा ही नहीं होने दिया जाता जब वे गर्भ में ही होती हैं तभी गर्भपात से नष्ट कर दिया जाता है। अन्यथा लड़की शिशुओं, नवजातों को मार देते हैं । जहर देते हैं या दम घोट देते है। औरतें जिन्हें प्रायः मारा-पीटा जाता है और अपमानित किया जाता है वे अपने औरत होने को घृणित समझती हैं वे उस लड़की का क्या करें जिसे भी बड़े होने पर यही नसीब भुगतना होगा और पारिवारिक साधनों पर एक बोझ माना जाएगा। 'लड़कियों पर खर्च करना तो पड़ोसियों के बगीचे को सींचने के समान है' – ऐसी कहावतें भारतीय और चीनी भाषाओं में बहुत हैं।

घर के बुजुर्ग जवान लड़कियों और महिलाओं को यह आशीर्वाद देते हैं कि उनके बहुत सारे पुत्र हों 'सत पुत्री हों' (पंजाबी) जैसे ही दुल्हन अपने पति के घर में प्रवेश करती है एक रस्म में, उसके गोद में लड़के को बिठाया जाता है। एक तिल के दानों का खेल होता है। दुल्हन के हाथ में तिल रखे जाते हैं और घर की महिलायें गाने गाती हैं 'उसकी हथेली पर रखे तिल के दानों के बराबर उसके पुत्र हों' हर सुबह, जब दुल्हन सास के पैर छूती है तो वह कहती है 'साई जिये बुढ़ सुहागन हो' (भगवान करे तुम्हारे पति की लम्बी आयु हो और बुढ़ापे तक तुम उसकी दुल्हन बनी रहो) छोटी लड़कियां यह देखती हैं कि महिलायें व्रत रखती हैं – लड़के के जन्म के लिये, शिव शंकर के जैसे पति के लिये, पति की लंबी उम्र के लिये। लडकी के लिये या उसकी सुख समृद्धि के लिऐ कोई उपवास नहीं होते। यदि एक लड़की के बाद लड़का पैदा होता है तो उसे शुभ मानते हैं और उसे शुभ दर्शाने के लिए उस लड़की की पीठ पर गुड़ का भेला फोड़ा जाता है।

लडकियों के लिए भोजन, खेल या चिकित्सा, देखभाल में खुला भेदभाव देखने को मिलता है। अच्छा भोजन लडकों व पुरुषों को दिया जाता है लड़कियों को कम खाने देते है ताकि वे खंभे की तरह जल्दी से बढ न जायें। खेल को लडकों के साथ जोडा जाता है और उसकी प्राकृतिक आवश्यकता के रूप में देखा जाता है। यौवनावस्था के बाद लड़कियां तो पूरी तरह चारदीवारी में रह जाती हैं या बाहर जाने को भी मिलता है तो कोई साथ जाता है, अकेले कभी नहीं जाती हैं। उनका लड़की होना हमेशा याद दिलाया जाता है मातायें ये कहती रहती हैं 'कब में इस मुसीबत से पीछा छुड़ाऊंगी, इसकी पहरेदारी से कब उबरूंगी, यह हमारा ज़रूर मुंह काला करायेगी'। लड़कियां दरवाजे पर खडी हों तो छोटे भाई तक झिडक देते है। वे पैर फैलाकर नहीं बैठ सकती, कूद नहीं सकती, फांद नहीं सकती। उसकी शारीरिक गतियां और हिलना डुलना नियंत्रित रहता है। लड़कियों के लिये बहुत से बंधन और आदेश होते हैं, यह करो, यह नही करो। उनके लिये सारे निर्णय, उन्हें क्या खाना है, क्या पहनना है, क्या वे स्कूल जायेंगी या बाहर खेलेंगी, त्यौहार में जायेंगी, किससे शादी करेंगी और कब, दूसरों द्वारा दिये जाते हैं। कई शिशु अवस्था में ही मर जाती हैं- कारण मात्र उपेक्षा है।

लडकियां अक्सर सुनती हैं 'यह तो हमारे गले का पत्थर है'। उसे इस बात के लिये दोषी मानते हैं कि कैसे दहेज इकट्ठा करेंगे और कैसे उससे पीछा छुड़ायेंगे। तीन लड़कियों का कानपुर (उ.प्र.) और केरल में आत्महत्या कर लेना अभी पुराना नहीं है। चंडीगढ़ में बेटे के जन्म के बाद तीन लड़कियों ने माता-पिता से उपेक्षित होने पर आत्महत्या कर ली थी।

अतः इस तरह बढ़ी हुई लडकी अपने में अपर्याप्त, ऋणात्मक आत्मबोध को विकसित करती है। वह अपर्याप्त, पहल शक्ति की कमी, भीरू, बहुधा डरी हुई (अनजाने भय से) संकोची, निर्भर, अपने आप को अभिव्यक्त करने में या निर्णय लेने में कमजोर रहती है। इस प्रकार की ज्यादातर छवि ग्रामीण क्षेत्रों की भारतीय लड़कियों में देखने को मिलती (आदिवासियों को छोड़कर) है। शहरी क्षेत्रो में यह छवि अलग-अलग है परन्तु कुछ समूहों में यही विश्लेषण रहेगा। मध्यम, उच्च मध्यम वर्ग की लड़कियां भोजन व चिकित्सा देख-भाल में भेदभाव नहीं पाती है। किन्तु निम्न मध्यम और यहां तक की उच्च मध्यम वर्ग इस बात के लिये तैयार रहते हैं कि वे लड़कों की पढ़ाई में ज्यादा खर्च करें चाहे उससे कोई लाभ

न हो। लड़कों को प्राइवेट स्कूलों में भेजा जाता है, लड़की के लिये निःशुल्क सरकारी शिक्षा ही ठीक है।



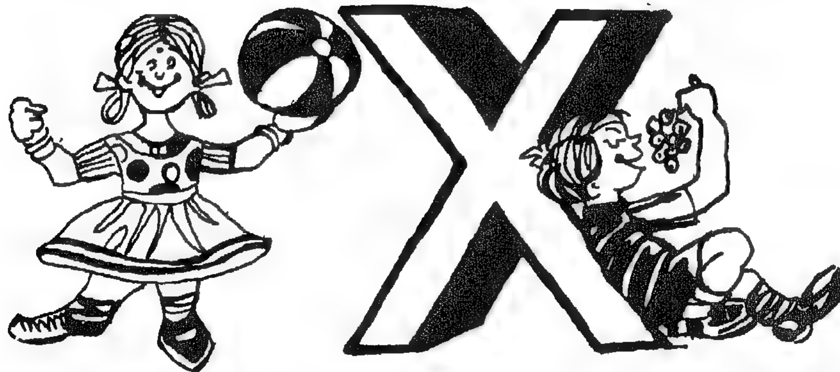
"आपने अपना गृह-कार्य समाप्त कर लिया है? अब शान्ति बर्तन धोने में अपनी मां की सहायता कर सकती है। सुनील, अब आप खेलने जा सकते है।"

मध्यम वर्ग की शहरी लड़कियों पर लड़कों की अपेक्षा स्कूल के बाद कहीं आने-जाने पर ज्यादा रोक-टोक रहती है और यह उन्हें एक प्रकार से मदद भी करता है। वे अपनी माँ की घर पर सहायता करती हैं और फिर भी लड़कों की अपेक्षा बोर्ड परीक्षा में ज्यादा अच्छा परिणाम लाती हैं। अब दस साल से लडकों की अपेक्षा लड़कियां ज्यादा अच्छा, यहाँ तक कि विज्ञान और गणित में लडकों से ऊंचा प्रतिशत ला रही हैं। वे माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं में लड़कों की अपेक्षा अच्छे प्रतिशत से उत्तीर्ण होती हैं वे ज्यादा समझदार आत्मविश्वासी और अपने बारे में दृढ़ हो रही हैं और अपारम्परिक व्यवसायों में अधिक मात्रा में प्रवेश कर रही हैं। प्रसिद्ध पर्वतारोही बच्छेन्द्री पाल का आत्मबोध निश्चित ही सकारात्मक है। किरण बेदी जो एक उत्कृष्ट पुलिस अफसर है, निवेदिता भसीन हवाई पायलट, नई हवाई सेना, जल सेना अफसर, एन.सी.सी., पैरा जम्पर्स, इन सब महिलाओं में आत्म विश्वास और आत्म

सम्मान की कमी नही। नासा के द्वारा अंतरिक्ष में भारतीय महिला भेजी गई, यह बहुत गर्व की बात है। सक्षमता तथा उपलब्धि सकारात्मक आत्म बोध को जन्म देते हैं।

विखण्डन और पुनर्निर्माण

लैंगिक अवरोध कम करने के लिए दोनों का ही प्रयास आवश्यक है।



आत्म विश्लेषण : समूह अभ्यास

अनुदेश : 1,2,3,4, के लिये समूह सदस्यों को छोटी पुर्जों/आधा पेज शीट्स दीजिये। प्रत्येक अभ्यास को खत्म करने के बाद, अंत मे विश्लेषण के लिये सकेत देखिये।

अभ्यास 1

निम्नलिखित जानकारियां दीजिए :

(1) नाम : ______________________________

(2) किसके पुत्र/किसकी पुत्री : ______________________________

(3) पता : ______________________________

अभ्यास 2

याद कीजिए और अपनी संस्था में आयोजित विशिष्ट समारोहों के बारे में लिखिये, जैसे वार्षिक दिन, खेल-कूद, नाटक, वाद-विवाद आदि।

	समारोह	मुख्य अतिथि का नाम
1.	________________	________________
2.	________________	________________
3.	________________	________________
4.	________________	________________

अभ्यास 3

शिक्षक के आवश्यक गुणों की सूची दीजिये।

____

____

____

____

अभ्यास 4

प्रधान शिक्षक के गुणों की सूची दीजिये।

____

____

____

____

अभ्यास 5

प्रत्येक कथन के आगे लगे चौकोर में अपने मतानुसार (✓) का निशान लगाइये।

लड़कियों के लिये शिक्षा की उपयोगिता

		सहमत	असहमत
1.	लड़कियों में सकारात्मक आत्म प्रतिरूप और आत्मविश्वास विकसित करती है।	☐	☐
2.	आर्थिक योगदान के लिये लड़कियों को तैयार करती है।	☐	☐
3.	बच्चों व दूसरे परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य और पौष्टिक स्तर को सुधारती है।	☐	☐
4.	आने वाली पीढ़ी को शिक्षा की सुनिश्चितता करवाती है।	☐	☐
5.	लड़कियों और महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति सजग करती है।	☐	☐
6.	शादी की उम्र को बढ़ाने में मदद व माता, शिशु और बच्चों की मृत्यु दर कम करती है।	☐	☐

7. परिवार को छोटा करने में मदद देती है। ☐ ☐

8. समाज में नेतृत्व की भूमिका के लिये लडकियों को तैयार करती है। ☐ ☐

9. जीवन के हर क्षेत्र जैसे परिवार, पंचायतों, म्युनिसपैलिटी, विधानमंडल में भागेदारी निर्णय प्रकिया के लिये लडकियों को तैयार करती है। ☐ ☐

अभ्यास 6

अपने मतानुसार प्रत्येक कथन के आगे (✓) का निशान लगाइये:

		सहमत	असहमत
1.	लड़कियों और लड़कों को समान शिक्षा की आवश्यकता है।	☐	☐
2.	दोनों को समान मात्रा में भोजन की आवश्यकता है।	☐	☐
3.	जब आवश्यकता हो तो दोनों को ही समान स्वास्थ्य देखभाल तथा चिकित्सा दी जाये।	☐	☐
4.	दोनों को एक से कार्य/जिम्मेदारियां दी जाएं।	☐	☐
5.	दोनों को समान स्वतंत्रता दी जाये।	☐	☐
6.	दोनों को खेलने के लिये समान समय दिया जाये।	☐	☐
7.	दोनों ही हर कार्य को भली प्रकार कर सकते हैं।	☐	☐
8.	दोनों एक से व्यवसाय चुन सकते हैं।	☐	☐
9.	दोनों में एक सी बुद्धि और क्षमतायें होती हैं।	☐	☐

10.	समान कार्य के लिये पुरुष और महिलाओं को समान वेतन मिले।	☐	☐
11.	पति और पत्नी को सभी निर्णय मिलकर लेने चाहिए।	☐	☐
12.	घर का कार्य सभी सदस्यों के द्वारा बांटा जाना चाहिए ।	☐	☐
13.	घर की सम्पत्ति पति और पत्नी के सम्मिलित नामों में पंजीकृत होनी चाहिए।	☐	☐
14.	परिवार की सम्पत्ति/जायदाद में बेटियों की समान हिस्सेदारी के अधिकार को मान्य माना जाये।	☐	☐

अभ्यास 7

यदि आपके एक लड़का व एक लड़की, दोनों तकरीबन एक ही उम्र और क्षमता के हैं तो आप किससे निम्नलिखित करने को कहेंगी। कृपया सही (✓) का निशान लगाइयेः

		लड़कियां	लड़के	अथवा दोनों
1.	बाजार से ब्रेड/सब्जी लाना	☐	☐	☐
2.	झाड़ू लगाना	☐	☐	☐
3.	भोजन बनाने में मदद	☐	☐	☐
4.	मवेशी चराने जाए	☐	☐	☐
5.	आपको एक गिलास पानी दे	☐	☐	☐

6.	आपकी कोट/जैकेट टांग दे	☐	☐	☐
7.	अतिथियों के लिये चाय बनाए	☐	☐	☐
8.	कपडे धोने/उन्हे बाहर सुखाने में मदद करें।	☐	☐	☐
9.	कुएं से पानी खींचें	☐	☐	☐
10.	बिजली का फ्यूज सुधारें या साइकिल टायर पंक्चर ठीक करें।	☐	☐	☐

अभ्यास 8

समूह के सभी सदस्य बारी-बारी निम्नांकित चित्र बोर्ड या पेपर शीट पर बनाने की कोशिश करें।

वकील	पायलट	शिक्षक
नर्स	वैज्ञानिक	किसान
डॉक्टर	शल्य चिकित्सा (सर्जन)	पर्वतारोही
वास्तुकार	जज	सैक्रेटरी
दर्जी	हॉकी खिलाड़ी	

समय सीमा : दस मिनटो में हमें काम चलाऊ चित्र चाहिए, सिर्फ सादी रेखायें, कोई बात नहीं यदि आपने कभी चित्र नहीं बनाया क्योंकि हर काम कभी न कभी तो पहली बार किया जाता है।

चैक लिस्ट

अभ्यास 9

अभ्यासः विश्लेषण/विशेषतायें, "स" सामान्य के लिये "प" पुरुष के लिये और "म" महिला के लिये कोष्ठक में भरें।

स्वावलम्बी	☐	चंचल	☐
लज्जालु	☐	आसानी से हताश	☐
मुखर	☐	बातूनी	☐
शांत	☐	जिद्दी	☐
बहिर्गामी	☐	तर्कसंगत	☐
निष्क्रिय	☐	महत्त्वाकांक्षी	☐
सकारात्मक	☐	व्यवसाय उन्मुख	☐
धनलोभी	☐	सक्षम	☐
यथार्थवादी	☐	अटल	☐
रूखा	☐	दब्बू	☐
विनोदी	☐	हठधर्मी	☐
कलात्मक	☐	सक्षम	☐
गंभीर	☐	व्यक्तिपरक	☐
सहायक	☐	युक्तिसंगत	☐
व्यावहारिक	☐	अप्रत्यक्ष	☐
कठोर	☐	जल्दी से खिन्न	☐
मजबूत	☐	नेता	☐
सुग्राही	☐	आत्मविश्वासी	☐
कल्पनात्मक	☐	साफ	☐
धार्मिक	☐	बेढंगा व्यवहार	☐
उग्र	☐	कोलाहलपूर्ण	☐
धैर्यवान	☐	प्रभावी	☐
नम्र	☐	कोमल	☐
कार्यकुशल	☐	सक्रिय	☐
दयालु	☐	निष्पक्ष	☐

डांवाडोल	☐	सहयोगी	☐
स्वतंत्र	☐	संदिग्ध	☐
भावुक	☐	अव्यस्थित	☐
विनम्र	☐	नम्रभाषी	☐

अभ्यास 10

इस मॉड्यूल के अंत में अब यह एक मजे का खेल है, जो भी आप पर लागू हो उसके आगे सही (✓) चिह्न लगायें।

प्यारा	☐	काबिल	☐
स्वतंत्र	☐	उत्पादी	☐
गर्वीला	☐	मूल्यवान	☐
होशियार	☐	आत्मविश्वासी	☐
मजबूत	☐	सफल	☐
हठधर्मी	☐	स्वस्थ	☐
जिम्मेदार	☐	स्वतंत्र	☐
शक्तिशाली	☐	लिहाजी	☐
सर्वप्रिय	☐	विचारशील	☐
महत्वपूर्ण	☐	सार्थक	☐
प्रतिभाशाली	☐	निष्कपट	☐
रोचक	☐	मैत्रीपूर्ण	☐
सक्षम	☐	उपायकुशल	☐
श्रेष्ठ	☐	प्रतिष्ठित	☐
दक्ष	☐	प्यार का पात्र	☐
निपुण	☐	मूल्यवान	☐
उपयोगी	☐	मदद करने वाला	☐
साहसी	☐	पहलशक्ति	☐

विश्लेषण के संकेत

अभ्यास 1

सभी स्लिप को एकत्रित कर लें। हम दूसरे प्रश्न में केवल यह देखना चाहते हैं कि माता-पिता दोनों के नाम दिये हैं या नहीं। आप यह जानकर आश्चर्यचकित हो जायेंगे कि प्रत्येक समूह सदस्य केवल पिता का नाम देगा और आप सभी उस बात से सहमत होंगे कि हम सभी की मां हैं जिनके नाम भी है। हमें इस खेल से ये समझ लेना चाहिये कि हम इस फॉर्म को ऐसे ही भरने के अभ्यस्त हैं और यह हम बचपन से करते आ रहे हैं। हमेशा पिता का नाम/पति का नाम पूछा जाता है, स्कूल में, अस्पताल में, प्रवेश फॉर्म, पासपोर्ट फॉर्म, राशन कार्ड, चालान, लाइसेंस आदि में।

क्या आप यह नहीं सोचते कि समय आ गया है कि अब माता के नाम को भी सम्मिलित किया जाये। कुछ स्कूलों में यह शुरू भी हो गया है। हम इस बात के आदी हो गये हैं कि स्कूलों में छुट्टी के आवेदन में या स्कूल टेस्ट/अंक सूची/प्रगति पत्र आदि में पिता के हस्ताक्षर ही मांगे जाते हैं। माता क्यो हस्ताक्षर नहीं कर सकती।

अभ्यास 2

समूह सदस्यों से स्लिप एकत्रित करें और पुरुष/महिला मुख्य अतिथियों को आमंत्रित करने की बारम्बारता को देखिए। मुख्य अतिथि ज्यादातर पुरुष होते हैं। जिस जगह औपचारिक स्थिति तथा प्रभाव पुरुष से जुडा होता है वहां बच्चों में असमानता की धारणा में प्रबलता आती है। इस बारे में क्या विचार है कि स्कूल के कार्यक्रमों में महिला मुख्य अतिथियों को बुलाने का प्रयत्न किया जाये। हम एक "महिला सरपंच" आमंत्रित कर सकते हैं और दूसरी प्रभावी महिलाओं को भी निमंत्रण दे सकते हैं जो कि प्रशासक हों, प्रधान शिक्षिकाएं हों, शिक्षाविद्, खिलाड़ी व कलाकार हों।

अभ्यास 3

समूह सदस्यों से स्लिप एकत्रित करें और उसकी सूची ब्लैक बोर्ड पर बनायें। आप देखेंगे कि जितने भी अच्छे गुणों की सूची है वह महिला व पुरुष दोनों में पाई जा सकती है। इसका मतलब शिक्षक की भूमिका से है न कि उसके लिंग से।

अभ्यास 4

अभ्यास 3 के समान ही।

अभ्यास 5

समूह के प्रत्येक सदस्य को प्रत्येक विषय पर अपना ही मत देने दिया जाये। माता-पिता व समुदायों को लड़कियों को शिक्षित करने के लाभों और आवश्यकता के बारे में मनवाने के लिए तरीको की विवेचना करनी चाहिये।

अभ्यास 6

अपनी तुरंत प्रतिक्रिया लिखिये। जबरदस्ती और रचे हुये सही उत्तर पर विवेचना कीजिए। यह कुछ जोश पैदा करेगा परन्तु कुछ प्रकाश भी मुख्यतः जब पुरुष व महिला सदस्य दोनों ही समूह मे हों।

कोई बात नहीं मकसद यह था कि आपकी प्रतिक्रियाओं को सामने लायें और बहुत लिहाजी और अनुकूल उत्तर न हो। अगली मुलाकात में, शायद सहमति के क्षेत्र बढ़ जायें और आप अपने कक्षा के व्यवहार को रूपान्तरित करेंगे और पुरुष व महिलाओं की सामाजिक भूमिकाओं के नजरिये को बदल सकें इसके लिए आपको अपने विद्यार्थियों को तैयार करना है।

अभ्यास 7

हिसाब करने के बाद आप यह पायेंगे कि लड़कों को बाहरी कार्य/इतकार्य दिये गये और सभी घरेलू कार्य लड़कियों के लिये थे। जैसा कि इकाई 1 में देखा कि इन कार्यों में महिला या पुरुष विशेष कार्य नहीं है। आपस में योगदान और गरिमा के भाव निर्मित करने के लिये घरेलू तथा बाहरी कार्यों दोनों को ही लड़कों और लड़कियों से बराबरी से बॉटा जा सकता है।

लड़कों को घर के काम करने के लिय प्रोत्साहित करना चाहिये। ताकि वे सुग्राही बने और पारस्परिक रूप से महिलाओं द्वारा किए गये इन कामों के महत्व को समझें जिन्हें वे तुच्छ समझते थे। दूसरी तरफ, लड़कियों को इस बात के लिए तैयार करने की आवश्यकता है कि वे समान रूप से बाहरी कार्यों के लिये तैयार हों जो कि आजकल दोनों ही लिंगो द्वारा बांट कर किए जा रहे हैं।

अभ्यास 8

आप यह पाएंगे कि अधिकार स्केच आदमियों के ही हैं जबकि महिलाएं अब यह सब भूमिका निभा रही हैं।

अभ्यास 9

इस अभ्यास में, हमने पुरुष व महिलाओं के लिये दिमाग में जमे हुए विचार के अनुसार कुछ गुणों, विशेषताओं, विशेषणों को चित्रित किया है। चलो अब हम इस पर विवेचना करें और देखें कि हमने कोई ज्यादती तो नहीं कर दी। हमें अपने खुद के अनुभवों और उन लोगों के जो हमारे चारों ओर हैं उसके बारे में सोचना होगा और यह निकालना होगा कि जॉंच सूची में तो विषय दिये हैं वह मानव व्यवहार के द्योतक पुरुष और महिला दोनों में ही पाए जा सकते हैं।

अभ्यास 10

दूसरे समूह सदस्यों के साथ इन विचारों को बांटें और यह खोजे कि क्यों आप सोचते हैं यह गुण आप में नहीं है। यह आपको एक माप देगा कि आप अपने आपको किस प्रकार मूल्यांकित करते हैं। यह न भूलें जैसा आप अपने को मूल्यांकित करते हैं वैसा ही दूसरे भी आपको मूल्यांकित करते हैं। तो सकारात्मक सोच व सकारात्मक क्रिया की ओर बढ़ चलें।



इकाई
2

लिंगाधारित भूमिका में समानता नीति और कार्यान्वयन

परिचय

इस एकक में दो तथ्यों का अवलोकन है :

- विद्यमान नीति का ढांचा, संवैधानिक व कानूनी आश्वासन, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते व प्रतिज्ञापन जिनका सबंध महिलाओं-पुरुषों, लड़कियों-लड़कों में समानता तथा समदृष्टि से है और उन विशेष विधाओं से भी जो जनसंख्या के आधे भाग, यानी महिलाओं के प्रति संचित प्रतिकूल परिस्थितियों को भी दूर करने के लिए निर्मित किए गए हैं।
- जीवन-चक्र अभिगमन द्वारा उपयुक्त लिगाधारित संकेतों विषमताओं का विश्लेषण।

अपेक्षित उपलब्धि

इस इकाई को सम्पन्न करने पर आप कुछ इस प्रकार जान सकेंगे।

- वे संवैधानिक वे कानूनी प्रावधान जो विशेषकर,भारत में महिलाओं तथा बालकों के हित में हैं।
- वे अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञापन व समझौते जो महिलाओं व बालकों से संबंधित हैं।
- वे जीवन व समाजकीय संसाधन जिनमें लिंगाधारित भूमिका की विषमतायें तथ्यों तथा सांख्यकीय में मौजूद हैं।

लिंगाधारित भूमिका में समानता के परखी तथ्य

स्वतंत्रता प्राप्ति के तीन वर्ष उपरांत 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान लागू हुआ। संविधान निर्माण सभा में 14 महिला सदस्य थीं। सविधान उन नवीन संरचनात्मक मापक तथ्यों का निर्माता है जो अत्यधिक स्तरित समाज को उसकी गहरी जटिल सामाजिक व आर्थिक असमानताओं से उन्मुक्त कर उस समाज की ओर ले जाना चाहते हैं जो आर्थिक व तकनीकी विकास और सामाजिक न्याय उपलब्ध करा सके।

इन संवैधानिक प्रावधानों की नीतियो, नये कानूनों और पिछले कानूनों के संशोधन द्वारा तथा विकास की पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा क्रियान्वित करने का प्रत्येक सम्भव प्रयास किया गया है।

संविधान न केवल महिलाओं के लिए समानता का प्रतिपादक है बल्कि राज्य को उन सब विशेष प्रावधानों को प्रयुक्त करने के लिए सक्षम बनाता है जिससे महिलाओं पर लदी हुई सदियों की संकलित सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनैतिक विषमाएं दूर हो सकें। (संरक्षात्मक पक्षपात)

मूल अधिकार

अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष-राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15. धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध .

(1) राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर काई विभेद नही करेगा।

(2) कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर :

क. दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, या

ख. पूर्णतः या भागतः राज्य-निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग, के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बंधन या शर्त के आधीन नहीं होगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

(4) इस अनुच्छेद की या अनुच्छेद 29 के खण्ड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

मूल कर्त्तव्य

भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह :

क. संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे।

ख. स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करें।

ग. भारत की प्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करें और उसे अक्षुण्ण रखें।

घ. देश की रक्षा करें और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करें।

ङ. भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।

च. हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्व समझें और उसका परिरक्षण करें।

छ. प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव है, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणी मात्र के प्रति दयाभाव रखें।

ज. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करें।

झ. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखें और हिंसा से दूर रहें।

ण व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों से सभी क्षेत्रो मे उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरतर बढते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले।

लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता -

(1) राज्य, के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों मे सभी नागरिको के लिए अवसर की समानता होगी।

(2) राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबध मे केवल धर्म मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात संसद को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो किसी राज्य या सघ शासित क्षेत्र की सरकार के या उसमें के किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन वाले किसी वर्ग या वर्गों के पद पर नियोजन या नियुक्ति के संबंध में ऐसे नियोजन या नियुक्ति से पहले उस राज्य या सघ शासित क्षेत्र के भीतर निवास विषयक कोई अपेक्षा विहित करती है।

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को पिछडे हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

(5) इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी ऐसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी जो यह उपबंध करती है कि किसी धार्मिक या साम्प्रदायिक संस्था के कार्यकलाप से संबंधित कोई पदधारी या उसके शासी निकाय का कोई सदस्य किसी विशिष्ट धर्म का मानने वाला या विशिष्ट सम्प्रदाय का ही हो।

अस्पृश्यता का अंत

"अस्पृश्यता" का अंतर किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है। "अस्पृश्यता" से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

राज्य के नीति निदेशक तत्व

अनुच्छेद 39 (क) राज्य को अपनी नीतियों को निदेशित करना चाहिए ताकि जीवन सभी नागरिकों, पुरुष तथा महिलाओं के लिये सुरक्षित हो और जीविका के अधिकार भी समान रूप से हों।

अनुच्छेद 39 (स) राज्य को निर्देशित करता है कि समान कार्य के लिये समान वेतन को सुनिश्चित करें।

अनुच्छेद 42 राज्य को आदेशित करता है कि कार्य और प्रसूति सहायता की यथोचित तथा मानवोचितता को सुनिश्चित करे।

अनुच्छेद 44 नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता।

अनुच्छेद 45 संविधान के लागू होने के दस वर्षों के अन्दर सभी बच्चों को चौदह वर्ष की उम्र तक निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है।

अनुच्छेद 47 – राज्य आगे इस बात के लिये वचनबद्ध है कि व्यक्तियों के पौष्टिक स्तर, स्वास्थ्य और रहने के स्तर को ऊंचा उठाये।

भारत में महिलाओं के लिये महत्वपूर्ण कानून

समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976 ने यह प्रावधान किया है कि समान कार्य के लिए महिला व पुरुष को समान वेतन दिया जाये। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 जिसे फिर 1976 में संशोधित किया गया लड़की के लिये यह अधिकार प्रदान करता है कि परिपक्वता के पहले बाल-विवाह को नकार सके चाहे वैवाहिक सहवास हुआ हो या ना हुआ हो। महिला को जायदाद पर उसका हक और पूर्ण अधिकार उसे उसके वारिस की अपनी जायदाद का हिस्सा देने की वसीयत बनाने के लिये हक देता है। अनैतिक अवैध व्यापार (निवारण) जिसे 1986 में संशोधित और नामीकृत किया गया। यह पुरुष या महिला के लैंगिक शोषण को एक अक्षम्य अपराध मानता है। दहेज अधिनियम 1961 को 1984 में संशोधित किया गया उसमें महिलाओं के प्रति अत्याचार को एक अक्षम्य अपराध माना है, 1986 में दूसरा संशोधन किया गया और यह कहा है कि यदि महिला अपने विवाह के 7 वर्षों के अंदर आत्महत्या करती हैं और यह साबित हो जाये कि उसके साथ अत्याचार हुये है तो उसके पति व सास, ससुर को सजा दी जाये "दहेज मृत्यु" के अपराध को भारतीय दंड सहिता में लिया गया है। 1948 का फैक्टरी अधिनियम (1976 में संशोधित) यह उपलब्ध कराता है कि जहां कही 30 महिलायें कार्यरत (अनियमित तथा ठेके के श्रमिक) है वहां झूलाघर स्थापित किया जाये। गर्भावस्था का चिकित्सकीय गर्भपात को मानवीय या चिकित्सीय आधार पर वैध मानता है। अपराध नियम कासंशोधन (1938) बलात्कार की आम घटना के लिये 7 वर्ष तथा कानूनी निगहबानी के दौरान बलात्कार घटनाओ के लिये 10 वर्ष की सजा का प्रावधान करता है। अधिक से अधिक सजा उम्र कैद की है। महिलाओं को अभद्र प्रस्तुति (निषेध) अधिनियम 1987 भी पारित हो गया है ताकि महिलाओं की मान मार्यादा को सुरक्षित किया जाये तथा उनके विरुद्ध हिंसा साथ ही साथ शोषण को रोका जा सके। संसद के अधिनियम के अंतर्गत एमीनियोसिंटेसिस द्वारा भ्रूण लिंग पता लगाने पर भी रोक लगाई गई है। 73 व 74 संसदीय संशोधन (1992) पंचायतों और नगरपालिकाओ में महिलाओं को 33 प्रतिशत प्रतिनिधित्व और ग्रामीण क्षेत्रों कस्बों व शहरों में इन संस्थानों में महिलाओं को 33 प्रतिशत स्थान सुरक्षित है।

भारत में बच्चों के हित में कुछ महत्वपूर्ण कानून

चौदह से कम उम्र के बच्चों को किसी जोखिम कार्यों में न लगाना : बालक रोज़गार अधिनियम 1938, फैक्टरी अधिनियम 1948 जिसे 1949, 1950, 1954 में संशोधित किया गया, बीड़ी और सिगरेट श्रमिक अधिनियम 1966, बच्चों का अधिनियम (श्रम प्रतिज्ञा) 1933, इस उद्देश्य को पूरा करते हैं कि माता-पिता द्वारा श्रम और अग्रिम पैसे के लिए मालिक या नौकरी देने वाले के पास कम उम्र के बच्चों से श्रम कराने या काम कराने के पाप को समूल खत्म कर दिया जाये। बाल-विवाह रोक अधिनियम 1929 जिसे 1976 में संशोधित किया गया यह बना कि शादी की उम्र लडकियों की 15-18 वर्ष और लड़कों की 18-21 वर्ष तक बढाई जा सके। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा अधिनियम को कई राज्यों द्वारा पारित कर दिया गया।)

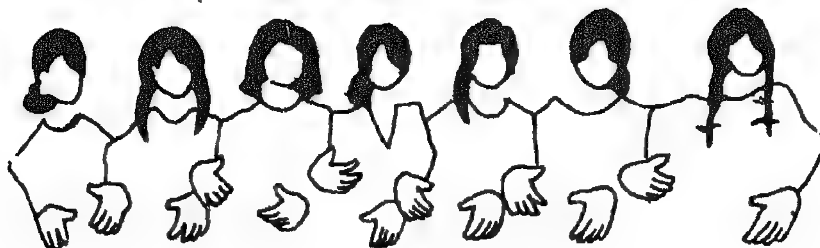
इसके अलावा भारत के कुछ अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों व प्रतिज्ञापनों को स्वीकारा है। जैसे:

मानवाधिकारों का विश्वव्यापी घोषणा-पत्र (1948)
सीडो (1979) संयुक्तराष्ट्र संघ का बाल अधिकार घोषणा-पत्र (1959)
और बालाधिकार प्रतिज्ञापन (1989)

संयुक्तराष्ट्र की आम सभा ने महिलाओं के प्रति व्याप्त सब प्रकार के विभेदीकरण के उन्मूलन हेतु प्रतिज्ञापन 18 दिसम्बर, 1979 को अपनाया था। इस प्रतिज्ञा–पत्र में संयुक्तराष्ट्र के मानव के मूल अधिकारों में पूर्ण विश्वास और मानव मर्यादा के निर्वाहन पर पुनः जोर दिया गया है जिससे स्त्री-पुरुष अधिकारों को पुष्टीकरण होता है।

प्रतिज्ञा–पत्र समानता का अर्थ बताता है और सहयोगी राज्यों को ऐसी कार्य–सूची बनाने का आग्रह करता है जिससे राज्य वे सब उपयुक्त कदम उठा सके जिनमें कानून भी शामिल हों और जिनमें महिलाओं को पूर्ण विकास निहित हो और जिसका लक्ष्य हो कि वे मानव अधिकारों और मुख्य स्वतंत्रता से लैस हो सके तथा पुरुषों के समकक्ष हो जाएं।

भेदभाव का अर्थ बताया गया है - कोई भी अन्तर, विभेदीकरण या अवरोध जो लैंगिक आधार पर किया गया हो चाहे वह किसी भी क्षेत्र में हो - राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या अन्य कोई।



बच्चों के अधिकार

मानवाधिकारों की लोकव्यापी घोषणा (1948) में यह ऐलान हुआ कि बाल्यावस्था विशेष देखभाल और सहायता की हकदार है। बच्चों के अधिकारों की संयुक्त राष्ट्र की घोषणा (1959) यह प्रतिपादित करती है कि प्रत्येक बच्चे को स्नेह, प्यार और सहानुभूति, पर्याप्त पोषण और चिकित्सा देखभाल, निःशुल्क शिक्षा, खेलने और मनोरंजन के लिए स्वतंत्र अवसर, एक नाम और राष्ट्रीयता तथा विकलांगों की विशिष्ट, किसी भी त्रासदी में, राहत में प्राथमिकता, समाज में उपयोगी सदस्य बनने हेतु शिक्षा, व्यक्तिगत क्षमताओं को विकास, शांति, सद्भावना, लोकव्यापी भाईचारे की भावना में लालन-पालन तथा प्रजाति, रंग, लिंग, राष्ट्रीयता और सामाजिक स्तर का लिहाज किये बिना अपने अधिकारों का अनुभव करना उपलब्ध कराया जाए।

बालक के अधिकारों के समझौते को 20 नवम्बर 1989 की संयुक्त राष्ट्र की आम सभा द्वारा अपनाया गया और 29-30 सितंबर 1990 में बालकों के विश्व शीर्ष सम्मेलन के बाद इसका कार्यान्वयन हुआ। विभेदीकरण न करना - मुख्य सिद्धांत -बच्चा अपने अधिकारो का अपने माता-पिता या कानूनी अभिभावक, प्रजाति, रंग, लिंग भाषा, धर्म राजनीति या उसके मत के लिहाज किये बिना उपभोग करे । राज्य

- यह माने कि प्रत्येक बच्चे को जीवन तथा अधिक से अधिक समय तक जीवित रहने और विकास का अधिकार है।(अनुच्छेद 6)
- यह स्वीकारे कि बच्चों को विचारों, विवेक, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हो तथा सभी प्रकार की जानकारियों को पाने और देने का हक हो (अनुच्छेद 13 और 14) यह

देखें कि प्रत्येक बालक स्वास्थ्य के उच्च शिखर के मानव तक पहुच सके उसकी बीमारी का उपचार और स्वास्थ्य की बहाली हो सके (अनुच्छेद 24)

- सब प्रकार के समान अवसर, निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, विभिन्न प्रकार की सामान्य और व्यवसायिक शिक्षा (आवश्यकता अनुसार निःशुल्क), उच्च शिक्षा तक क्षमता और उपयुक्त साधनों की उपलब्धि कराए। सभी बच्चों को शैक्षिक और व्यवसायिक जानकारी उपलब्ध कराना और इस सबसे ज्यादा यह कि उनकी नियमित उपस्थिति को प्रोत्साहित करना और स्कूल न जाने को कम कराना राज्य का दायित्व हो।

- यह निश्चित करें कि शिक्षा बच्चे के व्यक्तित्व विकास, योग्यता और उच्च मानसिक व शारीरिक क्षमताओं के विकास के लिए संचालित हो, उनमें इस बात को विकसित करें कि वे मानवाधिकारो और मौलिक स्वतंत्रता की कद्र करें, बच्चों को इस बात के लिए तैयार करें कि वे स्वतंत्र समाज में सहानुभूति, शांति, सहनशीलता, दोनों लिंगों में समानता की भावना के साथ एक जिम्मेदार जीवन बिताएं (अनुच्छेद 29) द्वारा यह देखा जाये कि बच्चो को अवकाश, खेल तथा मनोरंजन के अधिकार मिलें तथा उनकी सांस्कृतिक जीवन और कलाओं मे स्वतंत्रता से भाग लेने दिया जाये (अनुच्छेद 31)।

- यह निश्चित करवाए कि बालक के आर्थिक शोषण, जोखिम कार्यों, बच्चे की शिक्षा में हस्तक्षेप या ऐसी भी बात जो बालक के स्वास्थ्य या शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, नैतिक या सामाजिक स्थिति मे हानिकर हो उससे मुक्त कराए।



समितियाँ, आयोग, नीतियाँ

महिलाओं की शिक्षा पर दुर्गाबाई देशमुख समिति की रिपोर्ट (1959) ने बोधगम्य सुझाव बनाये और एक नीति दस्तावेज बन गया जो कि पंचवर्षीय योजना के बनाने और लड़के-लड़कियों के लिये समरूप पाठ्यक्रम बनाने की आवश्यकता के लिये निर्देशित करता है जो इस बात को प्रकाश में लाता है कि लड़कियों की शिक्षा को विशेष समस्या मानकर सुलझाया जाये।

- हंसा मेहता समिति द्वारा समरूप पाठ्यक्रम का समर्थन किया गया जो कि पाठ्यक्रम के भेदीकरण (1964) शिक्षा आयोग (1964-66) शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1986), (1992 में संशोधित) और कार्य योजना मे दृढता से दोहराया गया।

- समानता की ओर महिलाओं के स्तर पर समिति की रिपोर्ट (1974) जनसंख्या में महिलाओं का गिरता अनुपात, अधिक महिला मृत्यु-दर, आर्थिक भागेदारी में अवनति और राजनैतिक क्रियाओं में महिलाओ की नगण्य प्रस्तुतिकरण को उजागर किया।

- संयुक्त राष्ट्र विकास दशक (1975-85) ने संस्थागत प्रक्रियाओं की वृद्धि को देखें। महिला व बालक विकास विभाग, महिलाओं के विकास संघ, मुख्यधारा में महिला एकीकरण, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला व बच्चों का विकास गरीबी हटाने के लिये महिलाओं के लिए लक्ष्य समूह माने, कौशल विकास (टी.आर.वाई.ई.एम.) (आई.सी.डी.एस.) "कल्याण" से विकास की ओर गए और अंततः आठवी योजना में "सशक्तिकरण" की ओर बढे।

- महिलाओं के लिये राष्ट्रीय संदर्भ योजना (1988-2000) ने शताब्दी के अंत तक ग्रामीण व अलाभान्वित महिलाओं को केन्द्र बिन्दु मानकर राष्ट्रीय जेन्डर कार्यक्रम बनाये हैं।

- श्रमशक्ति, अनौपचारिक क्षेत्र में महिलाओं की समिति रिपोर्ट 94 प्रतिशत महिला कार्यकर्ताओं पर जो कि अनौपचारिक खण्डों में कार्यरत हैं संकट और घोर परिश्रम सम्बन्धी दस्तावेज है।

- रामामूर्ति सर्वेक्षण समिति जो कि प्रबुद्ध मानवोचित समाज की ओर से है उसने देखा कि उन लड़कियों के हक में शिक्षा के अवसर पर पुनः विचार हो जो कि ग्रामीण और अलाभान्वित वर्गो से आती हैं। उन्हें पर्याप्त सहायता सेवायें (पानी, चारा, ईंधन, बच्चों की देखभाल) और साथ ही शिक्षा के वित्तीय साधनों में 50 प्रतिशत हिस्सेदारी हो।

- 1980-1990 का प्रमाण चिह्न यह हुआ है कि महिलाओं की समस्याओं पर जानकारी उभरी और उसमें सक्रियावादी प्रयत्नों के व अनुसंधान सान्निध्य से महिला अध्ययन, विशेषण बढा है जिसने सक्रिय समर्थक कार्यक्रम बढ़ाए हैं।

प्रमुख नीति विचलन

- वृहत्काय, संकलित, केंद्रित नियोजन के बजाय विसंकलित, विकेन्द्रित सूक्ष्मदर्शी जनसमुदाय के सहयोग से नियोजन।
- कल्याणकारी दृष्टिकोण की अपेक्षा विकासोन्मुख और अन्ततोगत्वा महिला सशक्तिकरण की ओर।
- बच्चे को लिंगाधार शून्य में देखने की अपेक्षा (राष्ट्रीय बाल नीति 1974) लैंगिक भूमिका में न्यायसंगत दृष्टिकोण वाले परिवेश में बच्चों को बालक, बालिका रूप में समझना।
- महिला समस्याओं के अवलोकन से बालिका की समस्याओ पर दृष्टिपात, बालिका के सार्क वर्ष से बालिका का सार्क दशक 1991-2000 तक।
- बालिका शिक्षा को नैतिक प्रतिज्ञा के बजाय एक महत्वपूर्ण लागत के रूप में तौलना।

सार्क की पहल



इस प्रयास के फलस्वरूप वर्ष 1990 को सार्क का बालिका वर्ष घोषित किया गया। और ब्रालिका से संबंधित प्रश्नों के उत्साहित प्रत्युत्तरो को देखकर पूरे 90 के दशक को ही राज्यों के सरकारी मुख्यधिकारियों ने सार्क का बालिका दशक उद्घोषित कर दिया। इसका लक्ष्य यही था कि उस वेग और रफ्तार को कायम रखा जाए जो बालिका वर्ष में उगा था। 1991-2000 तक के लिए राष्ट्रीय कार्यान्वयन नीति के तीन लक्ष्य हैं — जीवन का अधि ाकार, सुरक्षा एवम् विकास विशेषतः मार्मिक वर्गो की बालिकाओं तथा सभी किशोरियों के लिए। बालिकाओं को सुन्दर भविष्य उपलब्ध कराने के लिए यंह योजना सरकारी और गैर–सरकारी सहयोग से क्रियान्वित की जाए ऐसा विचार निर्दिष्ट है। मौजूदा विषमताओं को दूर करके बालिका तथा किशोरी के विकास के लिए समान अवसर की आवश्यकता को अति महत्वपूर्ण माना गया है। इस समानता को हासिल करने के लिए यह जरूरी होगा कि निम्नांकित सुलभ कराया जाय :

- उसको जीने का अधिकार है;
- उसको गरीबी, भुखमरी, अज्ञान तथा शोषण में विमुक्त होने का अधिकार है;
- उसको समानता, प्रतिष्ठा, स्वतंत्रता, अवसर, देखभाल, सरक्षण और विकास पाने का अधिकार है, और सर्वोपरि; और
- उपर्युक्त सब अधिकारों को प्रयुक्त करने का अधिकार है।

> हमारे सामूहिक उदारवादी मानवीय दृष्टिकोण के रहते नीतियां तो अनुरूपकता में उद्घोषित की जा सकती हैं किन्तु जब तक दिन-प्रतिदिन के जीवन में बालिका अपने परिवार प्रावधान तथा वातावरण में इन स्थितियों को नहीं पाती तब तक यह सब अर्थहीन ही रहते हैं। इसीलिए एक वातावरण बनाना है जिनमें यह बालिका अपने अधिकार को निडर होकर प्रयुक्त कर सके उन सामाजिक व सांस्कृतिक बेडियों को, बदलने के लिए मेहनत करनी पड़ेगी जो बालिका को बांधे हुए है और उसे परम्परागत जीवन निभाने को लगभग मजबूर किए हुए है । हर सभा और विचारधारा की इस मेहनत का कर्म-क्षेत्र समझा जाना चाहिए जिससे जागरूकता उत्पन्न हो सके और सक्रिय कदम उठाया जा सके। इसके साथ उन सब कानूनों का प्रतिपालन हो जो बालिका दशक को अवसर प्रदान करने के लिए मौजूद है जिससे उसके अधिकार सुरक्षित हो सके । (सार्क की बालिका दशक संबंधी राष्ट्रीय नीति कार्यान्वयन परियोजना 1991 - 2000 तक)

तो यह बात स्पष्ट है कि निर्देश है सामाजिक संघटन सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों को बदले जिससे बालिका-विकास अवरुद्ध होता है । सामाजिक संघटन कों आज की बालिका स्थिति आंकनी पड़ेगी और ऐसी युद्ध नीति और हस्तक्षेप अपनाने के लिए यह भी देखना पड़ेगा कि आम सामाजिक संघटन क्या कुछ कर रहे हैं।

सामूहिक गतिशीलन

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्लेट फार्म से जो कानून और कानूनी संवैधानिक सुविधाएं हमारे बच्चों के हित में उद्घोषित हैं उनसे अब आप सुपरिचित हो चुके हैं।

पहला सोपान : अपने संदर्भ में व्याप्त और उस से संबंधित विभिन्न नीतियों, कानूनों और परियोजनाओं के सारांश की विवेचना कीजिए।

दूसरा सोपान : कुछ उन ठोस कदमों के बारे मे सोचिए जो इन सब को लागू करने के लिए उठाए जा सकते है और जिसमें अभिभावक, समुदाय और पंचायत को भी शामिल किया जा सके ।

> नीति घोषणाएं संकल्प होते है, कानून उन्हें स्वरूप देते हैं किन्तु शिक्षकों को शिष्यों तथा समुदायों को उनका अनुसरण करने के लिए तैयार करना होता है बजाय इसके कि वह उनके प्रतिपालन आदेश का इन्तजार करें।

आज की स्थिति: भेदभाव परिपूर्ण आजीवन-चक्र

भारत की 846 मिलियन जनसंख्या में 439 मिलियन पुरुषों के मुकाबले केवल 407 महिलाएं हैं। पुरुष 32 मिलियन ज्यादा हैं। (जनगणना 1991)

गिरता हुआ लिंगानुपात

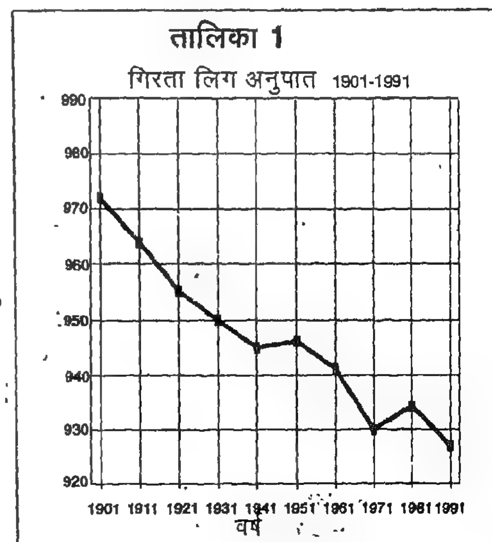
लिगांनुपात को प्रति एक हजार पुरुष के पीछे महिलाओं की संख्या के आंकलन से प्राप्त किया जाता है और यह महिलाओं की सम्यक स्थिति का एक सशक्त संकेत हैं। गैर–एशियाई देशों में महिलाओं की जनसंख्या पुरुषों से अधिक है। क्योंकि नर की अपेक्षा नारी जाति जीवविज्ञान के शोध के अनुसार अधिक मजबूत है इसी कारण प्रति 100 नवजात कन्या शिशुओं पर 102 से लेकर 107 बालक जन्म लेते हैं। भारत मे लिंग आधारित अनुपात महिलाओं के प्रतिकूल ही नहीं है बल्कि निरन्तर गिरता जा रहा है। वर्ष 1901 मे यह 972 था और 1991 में सबसे कम यानी 927.1 प्रत्येक जनगणना दशक में करोड़ो महिलाएं गुम हो जाती हैं।

तालिका 1

लिंग अनुपात-भारत में (1901-1991)

जनगणना वर्ष	लिंग अनुपात
1991	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927

तालिका 1



इस समय की स्थिति में अधिक चौंकाने वाली बात यह है लिंगाधारित अनुपात यदि 1981-91 दशक मे सम्पूर्ण जनसख्या में 8 बिन्दुओं से घटा तो 0-6 वर्ष की आयु वाली जनसंख्या मे यह बहुत तेजी से घटा और 962 से 945 रह गया यानी 17 बिन्दुओं से कम हुआ। वर्ष 1991 में 466 जिलों में दस जिले ऐसे हैं जहां 1000 बालिकाओं की तुलना में 1150 लड़के हैं। सबसे समृद्ध राज्य हरियाणा और पंजाब मे चार-चार जिले, मध्य प्रदेश और तमिलनाडु में एक-एक जिले ऐसे हैं जहां 1000 बालिकाओं के मुकाबले 1150 बालक हैं और 55 जिले ऐसे हैं जहां 6 वर्ष से कम आयु वाले बालकों मे प्रति 1000 बालिकाओं के मुकाबले 1100-1500 बालक हैं। लिंग अनुपात का फैलाव हरियाणा में 865 और केरल में 1040 तक है। 850 से कम वाले 44 जिलो में आधे केवल उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और राजस्थान एक निरापद आयात हैं और यहां का अनुपात 850 से कम ही है। 1000 से अधिक अनुपात वाले क्षेत्र हैं केरल, दक्षिण कन्नड, कर्नाटक, उत्तर के पहाडी क्षेत्र हमीरपुर, कांगड़ा, उना, मंडी और बिलासपुर हिमाचल प्रदेश में, सुगठित जनजातिय क्षेत्र मध्य प्रदेश में तथा उड़ीसा, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के पाच दक्षिणी जिले।

महिलाओं में मृत्यु दर

34 वर्ष की आयु तक महिलाओं में जीवन ह्रास सब आयु वर्गों से अधिक होता है और उसके बाद यह क्रम पलट जाता है। विशेष आयु वर्ग आधारित मृत्युदर पाँच वर्ष से कम बालकों के लिए ग्रामीण क्षेत्र में शहरो से दुगने हैं। जन्म से ही बालिका नारी पर होने वाली भ्रूण हत्या, नारी बाल हत्या, स्वास्थ्य और पोषाहार की सचेत अपेक्षा जो किशोर अवस्था में भी प्रजनन, स्वास्थ्य तथा विकास के प्रसाधनों का अपर्याप्त विकास, अशिक्षा इत्यादि वे कारक हैं जो समाजिक-सांस्कृतिक विभेदकारी मूल्यो और मनोवृत्तियों से प्रज्ज्वलित होकर महिला जीवन को ज्यादा जोखिम में डाल देते हैं। यह तथ्य ग्रामीण भारत में अधिकांश चरितार्थ होता है और गांवों में ही हमारी तीन चौथाई आबादी का आवास है। दो से पांच वर्ष वर्ग में महिला-शिशु की अधिक मृत्यु ही प्रमुख कारण है जिससे जिलों तथा क्षेत्रों में लिंग अनुपात इतना कम है।

जन्म से मृत्यु तक भेदभावपूर्ण जीवन चक्र

- प्रत्येक छः मादा शिशु मृतकों में से एक मृत्यु लिंगाधारित सामाजिक भेदभाव और भंयकर उपेक्षा के कारण होती है।
- गुरुत्व पुत्र-प्रश्रय के कारण मादा शिशु और उसकी माँ की उपेक्षा।
- मादा भ्रूण हत्या एक बढ़ती हुई आंधी है और यदि आज के दरों से बढती रही तो जनसांख्यकिक सतुलन बहुत बिगड़ जाएगा। वर्ष 1984 में बम्बई में चालीस हजार मादा भ्रूण हत्या की गई जिनमें से 16,000 केवल एक निदरना गृह में हुई।
- एक विशेष हस्पताल में 8,000 गर्भपातों में से केवल एक स्थिति में नर भ्रूण हत्या हुई।
- अधिक संख्या में बालिकाओं को अल्पाहार पर रखा जाता है जिससे वे कम सशक्त और रोगी प्रकृति पकड़ लेती है।

अस्पतालों के ओ.पी.डी. रिकार्डो से पता चलता है कि इलाज के लिए बालिकाओं की अपेक्षा अधिक बालक दाखिल किए जाते हैं। लडकियों को अस्पताल तब ले जाया जाता है जब बीमारी लाइलाज हो जाती है।

- बालिकाओं के बालपन में ही विवाह के कारण उनके कष्टों का आरम्भ हो जाता है। विवाहित बालिकाएं स्कूलों से रोक ली जाती हैं। लम्बी अवधि तक प्रजनन क्रम उनके स्वास्थ्य को तो प्रतिकूलित करता ही है और साथ ही कम वजन के बच्चों को जन्म भी देता है।
- बाल विवाह के साथ परिवार की आर्थिक दुर्बलता के दुष्परिणाम स्वरूप बालिका को स्कूल नहीं भेजा जाता। अन्य बालिकाएं स्थानीय निकाय में सुविधा न होने के कारण पढ़ाई से वंचित रह जाती हैं। चूंकि उनकी प्रारम्भिक शिक्षा ही नहीं हो पाती इसलिए व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा उनकी पहुंच से बाहर ही रहती है जिससे वे बेहुनर कम शुल्क वाले और अक्सर विलोम श्रम के कार्यों में लगी रहती है और इन कामों का महत्व भी कम ही होता है।
- यही कारण है जिनसे बालिकाओं में ऋणात्मक आत्म सम्मान उत्पन्न होता है। माताओं से बेटियों को यही विरासत में मिल जाता है।

- दबाई हुई लड़कियों व महिलाओं के पास स्वर नहीं होता। आत्म अनुभूति और आवागमन की स्वतंत्रता नहीं होती और उनके विषय में जो निर्णय लिए जाते हैं उनमें उनकी साझेदारी भी नहीं होती।

- इस प्रकार से पाली पोसी गई बालिकाएं राजनैतिक प्रक्रिया में भाग नहीं ले पातीं। नेतृत्व व निर्णय पुरुषों के ही अधीन रहता है। राष्ट्रीय और राजकीय विधान संगठनों में महिलाएं प्रतिनिधि 6 - 10 प्रतिशत से कम ही होती हैं।



आप मुझे मौका तो दीजिए, मैं चमत्कार कर सकती हूँ

सामूहिक क्रिया कलाप

– ग्रामों के पटवारी से 1991 जनगणना की जानकारी लेने के बाद निम्नलिखित तालिका बनाइये :

आयु समूह	स्त्री संख्या	समूहपुरुष सख्या	योग
0 - 5			
6 -10			
11-14			
15 - 18			
18 +			
योग			

- जैसे हमने राष्ट्रीय स्तर पर देखा है कि क्या किसी आयु वर्ग की गणना में महिलाएं पुरुषों से कम हैं।
- यदि हैं तो इसके लिए कारणों की विवेचना कीजिए।
- अनेक क्षेत्र में लड़कियों और महिलाओं को अधिक मृत्यु के लिये संभावित कारणों की सूची बनाइये।

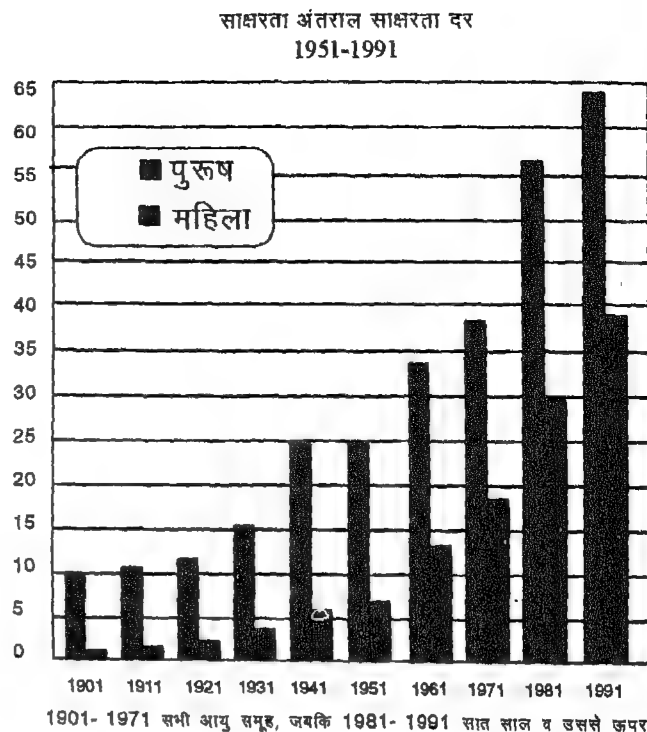
महिला साक्षरता

पूरी साक्षरता दर की तुलना में सामाजिक विकास के लिये ज्यादा सुग्राही सूचक हैं। ऋणात्मक रूप से महिला साक्षरता, जनन क्षमता दर, जनसख्या दर, शिशु व बाल मृत्यु दर, से संबंधित है और घनात्मक रूप से उम्र के समय स्त्री की आयु, जीवन संभावना, आर्थिकता के नये भागों में भागेदारी और सबके ऊपर महिला पंजीयन के साथ जुड़ा है।

तालिका 2. साक्षरता दर			
वर्ष	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.31	40.40	5.34
1971	34.45	42.95	21.97
1981	43.67	56.50	29.85
1991	52.19	64.20	39.19

नायर 1994 अ.

साधन: भारत की जनगणना
अंतिम जनसंख्या योग, 1991



ग्रामीण-शहरी अन्तराल

ग्रामीण शहरी अन्तराल स्वयं महिलाओं के बीच ही बहुत ज्यादा है। शहरी महिलायें स्त्री साक्षरता से दुगुनी से ज्यादा अच्छी अवस्था में हैं। पूरे समूह में आदिम जाति व जनजाति स्त्रियां सबसे नीचे हैं (तालिका 3 देखें)

27 जिलों में ग्रामीण स्त्री साक्षरता 10 प्रतिशत से कम है, 107 जिलों में 10-20 प्रतिशत के बीच तथा 99 जिलों में 20-30 प्रतिशत के बीच है।

तालिका 3 *साक्षरता दरों में असमानता 1991*	
शहरी पुरुष	81.09%
शहरी महिलाएं	64.05%
ग्रामीण पुरुष	57.87%
ग्रामीण महिलाएं	30.62%
आदिम जाति पुरुष	48.91%
आदिम जाति महिलाएं	23.76%
आदिम जनजाति पुरुष	40.65%
आदिम जनजाति महिलाएं	18.19%

जम्मू और कश्मीर को छोड़कर

प्राथमिक शिक्षा का सार्वलौकीकरण

चौदह वर्ष की आयु तक के बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा संविधान के लागू होने के दस वर्षों में उपलब्ध कराना एक संवैधानिक प्रतिबद्धता (अनुच्छेद 45) आज भी अपूर्ण है। इसका विशेष दायित्व उस तंत्र पर है जो बालिकाओं को प्रवेश दिलाने तथा फिर स्कूल में चलने को काबू में नहीं कर पाया। विद्यालीय प्रवेश अनुपात लड़कों के लिए 116.61 प्रतिशत हो गया है जबकि बालिकाओं के लिए केवल 88.09 प्रतिशत है । उच्च प्राथमिक स्तर पर बालिकाएं केवल 47.4 प्रतिशत हैं जबकि बालक 74.19 प्रतिशत हैं। (1991-92 विभागीय आंकडे)

स्कूली स्तर ग्रामीण-नगरीय अन्तराल बालिकाओ के लिए बहुत विषम है और उच्च शिक्षा तो उनके लिए केवल शहरों तक ही सीमित है। गिनी-चुनी ग्रामीण बालिकाएं ही माध्यमिक और उच्च माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच जाती हैं।

बालिका नामांकन का विकास

शिक्षा के सब ही सोपानो में नामांकन में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। तुलनात्मक ढंग से प्राथमिक स्तर पर नामांकन पाँचगुणा बढा जबकि ऊपरी सोपानों में बहुत अधिक है जैसे उच्च प्रारम्भिक का ग्यारह गुना, माध्यमिक शिक्षा में पन्द्रह गुना और उच्च शिक्षा में बीस गुना।

1950-51 में जो बालिका नामाकन 5.4 मिलियन था वह 1991-92 में 42.36 मिलियन हो गया। तदनुरूप उच्च प्राथमिक स्तर पर ०.५ मिलियन से बढकर १३.०० मिलियन हो गया। यद्यपि बालिकाओं का नामांकन बालकों की अपेक्षा अधिक तेजी से बढ़ा है किन्तु बालिकाएं फिर भी पिछडी हुई हैं। क्योंकि प्रत्येक बढ़ते हुए स्तर पर उनका नामांकन अनुपात कम होता जाता रहा है।

माध्यमिक शिक्षा के उपरान्त शिक्षा में बालिकाओं की संख्या 1991-92 में 21.20 मिलियन हो गई जो 1950-51 में 1.5 मिलियन थी।

तालिका 4

भारत में 1950-51 और 1990-91 में प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर पर महिला नामांकन में विकास (मिलियन में)

स्तर	1950-51			1990-91		
	कुल	बालिका	बालिका प्रतिशत कुल मे	कुल	बालिका	बालिका प्रतिशत कुल में
प्राथमिक	19.2	5.4	28.13	101.58	42.36	41.70
उच्च प्राथमिक माध्यमिक	3.1	0.5	16.13	34.45	13.00	37.73

नायर, 1994 (अ)

स्रोतः शिक्षा विभाग, चुनिंदा शैक्षिक आंकडे 1980-81, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 1993

स्थूल नामांकन अनुपात

स्थूल नामांकन अनुपातिक दृष्टिकोण से (जिसका मतलब होता है एक आयु वर्ग का प्रतिशत) 6-11 वर्ष की आयु वाली केवल 88 प्रतिशत बालिकाएं विद्यालयों में नामांकित हैं जबकि 117 प्रतिशत बालक प्रवेश पाए हुए है। 11-14 वर्ष आयु वाली 42 प्रतिशत बालिकाए और 74 प्रतिशत बालक उच्च प्राथमिक स्तर पर प्रवेश पा चुके हैं।

तालिका 5

प्राथमिक स्तर पर स्थूल नामांकन अनुपात

	1950 - 51			*1991 - 92*		
	लडके	*लड़कियां*	*कुल*	*लडके*	*लड़कियां*	*कुल*
प्राथमिक कक्षा 1 - 5 (6 - 11वर्ष)	60.8	24.8	42.6	116.61	88.09	102.74
उच्च प्राथमिक कक्षायें 5 - 8 (11 - 14 वर्ष)	20.28	4.3	12.9	74.19	47.40	61.15

नायर, 1994 (क)

स्रोतः चुनिंदा शैक्षिक आंकड़े, एम.एच.आर.डी. 1993 और पिछली जिल्दें।

स्थूल नामांकन अनुपात में 25-30 प्रतिशत अधिक और कम आयु वाले बालक शामिल हो जाते हैं इसलिए वास्तविक 100 में से 6-14 वर्षीय अनुपात निकालना लम्बा काम हो जाएगा। तो भी केरल में आंकडे वास्तविकता के अधिक निकट है। क्योंकि वहां और अधिक आयु वाले बालकों की संख्या 6 वर्ष से लगभग सब ही बालकों के प्रवेश के कारण समाप्त हो गई है साथ ही प्रारम्भिक स्तर पर यहा छीज दर भी कम है।

अन्तराजकीय विषमताएं बहुत वृहत् हैं। केवल केन्द्र प्रशासित चण्डीगढ़ को छोड़कर सभी उच्च महिला साक्षरता वाले राज्यों में (50 प्रतिशत से अधिक) प्रारम्भिक शिक्षा में प्रवेश सर्वव्यापी हो चुका है। केरल, गोआ, पाण्डिचेरी और लक्षद्वीप में उच्च प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं का नामांकन पर्याप्त संतोषजनक है। दिल्ली, चण्डीगढ मिज़ोरम और मेघालय तक में लिंगाधारित अन्तराल कमतर ही है।

महिला साक्षरता जहां 40-50 प्रतिशत है उन दूसरे दर्जे के राज्यों में बालिकाओं का प्राथमिक स्तर पर नामांकन दर संतोषप्रद है किन्तु उच्च प्राथमिक स्तर पर यह दर एक दम कम हो जाता है। इन राज्यों में लैंगिक आधार पर सामाजिक खाई भी गहरी है।

तीसरे वर्ग के राज्यों में (जहां महिला साक्षरता दर 20-40 प्रतिशत) बालिकाओं के प्राथमिक स्तर पर नामांकन की विकट स्थिति है विशेषकर उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान और जम्मू कश्मीर में। यहां यह कहना उपयुक्त ही होगा कि यह राज्य भारत की जनसंख्या के

आधे भाग के लिए उत्तरदायी हैं (जिसमें 40 प्रतिशत जनसंख्या उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान में निवास करती है) तालिका 6 देखें।

तालिका 6

प्राथमिक स्तर पर लडकियो का राज्यो/केन्द्रप्रशासित प्रदेशो द्वारा नामांकन अनुपात जिसे महिला साक्षरता दर प्रतिशत द्वारा 1991 मे श्रेणीबद्ध किया गया

श्रेणी	राज्य/के.प्र.	साक्षरता दर 1991		जैण्डर समानता की सूची	नामाकन दर अनुपात 1991–92			
					प्राथमिक		उच्च प्राथमिक	
		महिला	पुरुष		लड़के	लडकिया	लड़के	लड़किया
समूह अ राज्य (50 प्रतिशत व ऊपर)								
1.	केरल	87	94	96	100	98	106	104
2.	मिजोरम	78	84	93	140	133	76	73
3.	चण्डीगढ़	74	83	94	91	59	57	57
4.	लक्षद्वीप	71	87	93	157	135	118	97
5.	गोआ	68	86	89	106	97	112	96
6	दिल्ली	66	80	89	100	85	88	76
7.	अंदमान/निकोबार	66	84	88	148	136	135	117
8.	पाण्डीचेरी	61	86	83				
9.	दमन व द्वीप	56	66	96	114	104	70	68
10.	नागालैण्ड	52	75	83	125	109	125	96
11.	हिमाचल प्रदेश	52	75	82	142	128	109	86
12.	तमिलनाडु	51	75	80	132	119	92	67
13.	महाराष्ट्र	51	75	80	132	119	92	67
14.	त्रिपुरा	50	70	83	144	122	90	71
15.	पंजाब	50	64	87	102	95	79	66
समूह ब राज्य (40-50 प्रतिशत)								
16.	मणिपुर	49	73	80	117	104	67	59
17	गुजरात	49	73	80	142	111	85	59
18	पश्चिमी बंगाल	47	67	82	140	108	74	56
19.	सिक्किम	47	64	84	127	113	49	48
20.	मेघालय	45	52	93	67	63	64	54
21.	कर्नाटक	44	67	79	115	107	66	47
22.	असम	44	62	82	117	109	69	55
23.	हरियाणा	41	68	74	94	79	75	51
समूह स राज्य (40 प्रतिशत से नीचे)								
24	उड़ीसा	34	62	71	120	87	65	38
25.	आंध्रप्रदेश	34	56	71	123	95	71	43
26.	अरुणाचल प्रदेश	29	51	71	128	91	57	37
27.	मध्य प्रदेश	28	57	65	119	89	74	36
28.	दादरा एवं नगर हवेली	26	52	65	116	87	56	35
29.	उत्तर प्रदेश	26	55	63	105	67	68	33
30.	बिहार	23	53	60	105	56	53	21
31	राजस्थान	21	55	54	107	50	66	23
32.	जम्मू कश्मीर	-	-	-	102	71	76	47

द्वारा . ऊषा नायजर, भारत मे ग्रामीण लडकियों को प्राथमिक शिक्षा का लोकव्यापीकरण, एन सी.ई आर टी, नई दिल्ली, 1994

1. प्रौढ़ शिक्षा के साक्षरता राष्ट्रीय संस्थान के लिये साख्यकीय आकडो से साक्षरता आकड़े लिये गये, नई दिल्ली, 1992

2. नामाकन आकडो की चुनी हुई सांख्यकीय शिक्षा, 1990-91, शिक्षा विभाग, मानव ससाधन मत्रालय, नई दिल्ली, 1993 से लिया गया

अन्त जिला अन्तराल

साक्षरता दर में अन्तर है। केरल के कोट्टयम जिले में 96 प्रतिशत साक्षरता है जबकि मध्य प्रदेश के झंबुआ जिले में कवेल 19 प्रतिशत है। कोट्टयम के शहरी पुरुषों की साक्षरता सबसे अधिक और राजस्थान के बाड़मेर जिले की महिलाएं सबसे कम यानी 4.2 प्रतिशत साक्षरता थी।

तालिका 7

महिला साक्षरता दर आधारित जिलों का वितरण		
महिला साक्षरता दर	*जिलों की संख्या*	
–	*योग*	*ग्रामीण*
0 - 10	2	27
10 - 20	71	107
20 - 30	104	99
30 - 40	92	82
40 - 50	74	74
50 - 60	56	28
60 - 70	27	11
70 - 80	12	7
80 के ऊपर	14	11
योग	452	446

स्रोतः साक्षरता की सांख्यकीय परिधिः जिल्द 2

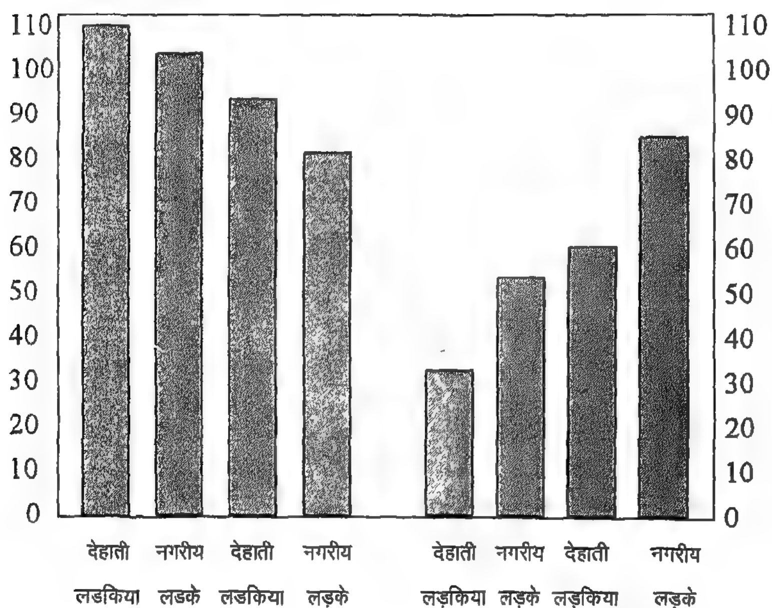
महिला साक्षरता 73 जिलों में 20 प्रतिशत से कम है जिसमें दो जिले राजस्थान के ऐसे हैं जहां 10 प्रतिशत से भी कम महिलाएं साक्षर हैं। इनमें से 66 जिले मध्य प्रदेश (10), बिहार (18), राजस्थान (19), और उत्तर प्रदेश (19) में स्थित हैं।

ग्रामीण महिला साक्षरता 27 जिलों में सबसे नीचे है यानी 10 प्रतिशत से कम। 15 राजस्थान में और 7 उत्तर प्रदेश में, बिहार और उड़ीसा में एक-एक जिले इस हालत में हैं।

भारत के सब जिलों के 30 प्रतिशत यानी 134 जिले ऐसे हैं जहाँ ग्रामीण महिला साक्षरता दर 20 प्रतिशत से कम है।

स्थूल नामांकन

1986-87



तालिका 8

1986-87 में बालिकाओं का शैक्षिक स्तर और देहाती-नगरीय निवास आधार पर शिक्षा में भागीदारी

स्तर	देहाती		नगरीय		कुल	
	सख्या	प्रतिशत	सख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
प्राथमिक	25.98 (40)	74.1	9.08 (45)	25.9	35.06 (41)	100.00
माध्यमिक	5.64 (32)	58.6	3.99 (37)	41.4	9.63 (32)	100.00
सेकेन्डरी	1.77 (27)	48.5	1.88 (37)	51.5	3.65 (32)	100.00
हायर सेकेन्डरी	0.32 (24)	29.6	0.76 (35)	70.4	4.08 (31)	100.00
उच्च शिक्षा	–	–	– (31)	–	1.13	100.00

स्रोत : नायर 1991

नोटः- 1. लघु कोष्ठक के आंकड़े पूरी संख्या में लड़कियों का प्रतिशत दर्शाती हैं।
2. उच्च शिक्षा केवल शहरों में है इसलिए नगर और देहात में वितरित शैक्षिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

आठवीं तालिका दर्शाती है कि

1. बालिकाओं की संख्या बालकों से हर स्तर पर कम है। लडकियों का अनुपात हर स्तर पर कम होता जाता है किन्तु हायर सैकेन्डरी के उच्च शिक्षा तक ठहराव है।

2. नगरों में बालिका और बालको के बीच का अन्तराल कम हो रहा है किन्तु देहातों में बहुत काफी है।

3. देहाती बालिकाएं बहुत अधिक पिछडी हुई हैं। कुल छात्राओं की 71 प्रतिशत प्राथमिक स्तर की साझेदारी सैकेण्डरी स्तर तक आते-आते 30 प्रतिशत रह जाती है। यह ध्यान में रखते हुए कि 74 प्रतिशत सख्या ग्रामीण है नगरीय बालिकाओं को अनुपात से अधिक प्राथमिक स्तर तक पढ़ाई का अवसर मिला हुआ है।

तालिका 9

स्तर-वार नामांकन 1991-92
अखिल भारतीय आंकड़े (000 में)

क्रम सं.	स्तर	कुल	लड़कियां	कुल नामांकन बालिकाओं को प्रतिशत
1.	पूर्व प्राथमिक/पूर्व बेसिक	1436	639	44.52
2.	प्राथमिक/जूनियर बेसिक 1-5	101577	42359	41.70
3.	माध्यमिक/सीनियर बेसिक 6-8	34446	12997	37.73
4.	उच्चतर सैकेण्डरी/इंटर 9-10	15028	5050	33.60
5.	हायर सैकेन्डरी/इंटर 11-12	62	1944	32.16
6.	तकनीकी-औद्योगिक-कला तथा क्राफ्ट	431	86	19.91
7.	पौलीटेक्नीक संस्थागत	280	34	11.99
8.	शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय	125	62	49.26
9.	एम.बी.सी.एस.	83	29	34.75
10.	बी.एड/बी.टी.	97	44	453.33
11.	बी.ई./बी.एस.सी./बी.आरचीटैक्ट	280	20	8.68
12.	बी.काम/बी.काम/(आनर्स)	1079	278	25.77
13.	बी.एस.सी./बी.एस.सी./ (आनर्स)	742	231	31.13
14.	बी.ए./बी.ए./(आनर्स)	1693	675	39.87
15.	एम. काम.	89	17	19.29
16.	एम.एस.सी.	78	26	33.47
17.	एम.ए.	214	80	37.52
18.	पी.एच.डी./डीफिल	31	10	33.09
	भारत	163859	6631	39.44

नायर, 1994 क

स्रोत : शिक्षा विभाग के चुनिंदा आंकड़े एम.एच.आर.डी., नई दिल्ली, 1993 ख

शिक्षा के सभी स्तरों पर बालिकाओं की साझेदारी बहुत अधिक बढ़ी है। डिप्लोमा स्तर पर तकनीकी, औद्योगिक व कला हस्तकला की शिक्षा में 20 प्रतिशत और पोलीटेक्नीक में केवल 12 प्रतिशत है। प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण में बालिकाएं लगभग आधी हैं । कला की उच्च शिक्षा में महिलाएं लगभग 40 प्रतिशत हैं। विज्ञान में एक तिहाई और डाक्टोरल विद्यार्थी में भी एक तिहाई। कामर्स शिक्षा मे भी महिलाएं अधिक भाग ले रही हैं और स्नातक स्तर के विद्यार्थियों में एक चौथाई साझेदार हैं। तीन प्रमुख व्यावसायिक कोर्स में पहली डिग्री में 45 प्रतिशत महिलायें बी.एड., बी.कॉम हैं, 35 प्रतिशत एम.बी.बी.एस. किन्तु बी.एस.सी. इन्जीनियरिंग और बी. आरचीटैक्ट में केवल 9 प्रतिशत महिलायें ही हैं (तालिका 9)।

विद्यालय छोड़ना

अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी प्राथमिक स्तर पूरा करने से पहले स्कूल छोड़ने वाले बच्चों में अधिकांश बालिकाएं ही हैं। इन बालिकाओं में भी अनुसूचित जातियों की बालिकाओं को और अनुसूचित जनजातियों की बालिकाओं का अपेक्षाकृत बड़ा भाग है। क्योंकि वे आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन में हमारी आबादी में सबसे ज्यादा उत्पीड़ित भी हैं।

तालिका 10

ड्रॉप आउट रेट-अखिल भारत 1988-89

	कक्षा 1–5		*कक्षा 6–8*	
	लड़के	*लड़कियां*	*लड़के*	*लड़कियां*
कुल	47	50	61	69
एस.सी.	47	55	65	74
एस.टी.	64	70	79	85

स्रोत : शिक्षा विभाग की वार्षिक रिपोर्ट 1993-94 एम.एच.आर.डी., 1994

शिक्षा में ठहराव का एक सरल मापक है बालिकाओं का एक निश्चित समय पर कक्षा 1

में नामाकंन का 5, 8, 10, और 12 कक्षा में नामांकन प्रतिशत जैसा कि निम्नांकित तालिका से स्पष्ट होता है कि 100 देहाती लड़कियों में से केवल 40 ही कक्षा 5 तक पहुंच पाती हैं। कक्षा 12 सामान्य और तकनीकी शिक्षा का प्रवेश द्वार है जिसमें शिक्षण प्रशिक्षण भी शामिल हैं और इसलिए देहातों में महिला शिक्षकों की सतत् कमी रहती है।

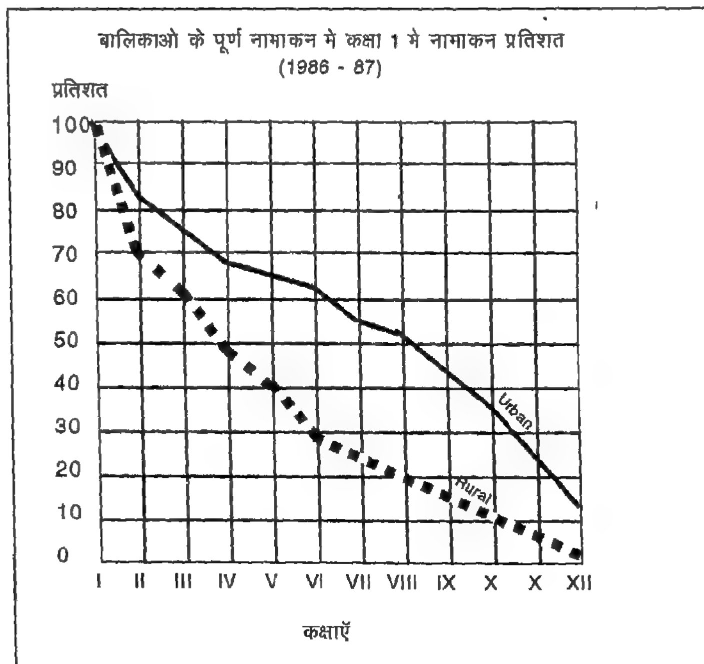
तालिका 11

बालिकाओं के पूर्ण नामांकन में कक्षा 1 से चुनिंदा कक्षाओं में नामांकन प्रतिशत 1986-87

कक्षा	देहाती	नगर	कुल
कक्षा 1	100.00	100.00	100.00
कक्षा 2	70.19	82.55	72.94
कक्षा 5	39.56	62.24	45.06
कक्षा 8	17.77	51.82	25.35
कक्षा 10	9.33	35.85	15.24
कक्षा 12	1.44	14.04	4.24

नायर 1991 क

स्रोत : पाँचवी अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वे, एन.सी.ई.आर.टी. (1989)



सामूहिक क्रियाकलाप

(1) परिशिष्ट में सभी जिलों के लिये साक्षरता आंकड़े हैं। आप अपना जिला इसमें से खोजें।

(2) अपने क्षेत्र में लिंग आधार पर साक्षर, निरक्षर व्यक्तियों की संख्या को निकालें और निम्नलिखित तालिका बनायें।

आयु	पुरुषों की संख्या	स्त्रियों की संख्या
7 वर्ष +		

(3) कुछ संस्थाओं जैसे महिला मंडल, पंचायतों की मदद से अपने समुदाय/ग्राम को साक्षर बनाने के रास्तों व तरीकों को खोजने के लिये विचार–विमर्श करें।

बालिकाओं में नामांकन न होने और अधिकतर स्कूल छोड़ने के कारण।

पूर्वकालीन अध्ययन जिनमें शामिल है, प्रारम्भिक शिक्षा मे बालिकाओं की निरन्तरता हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियों तथा वंचित वर्गों के छात्र-छात्राओं के लिए प्राथमिक शिक्षा को बढावा देने हेतु एक अग्रगामी परियोजना, जिला प्रारम्भिक शिक्षा प्रोग्राम (डी.पी.ई.पी.) लिंगाधारित भूमिका अध्ययनः यह दर्शाते हैं कि परिवार में निहित कुछ ऐसी बाते होती हैं जो बालिका को स्कूल से निकाल लेती हैं न की स्कूल से संबंधित। अध्ययनो से यह भी पता चलता है कि सामान्यतः बालिकाएं स्कूल वातावरण पसन्द करती है, अपने शिक्षकों को भी चाहती हैं, पढ़ना चालू रखना चाहती हैं और अवसर मिलने पर फिर से पढ़ाई शुरू करना भी चाहती हैं।

माता-पिता, समुदाय स्वयं बालिकाएं और शिक्षाकर्मी निम्नाकित को बालिकाओं के स्कूल छोड़ने के प्रमुख कारण बताते हैं

- घरेलू काम-धन्धे
- भाई-बहिनों की देखभाल
- माता-पिता की निरक्षरता
- बाल-विवाह
- मां-बाप के घरेलू काम/धंधे में हाथ बटाना
- सामाजिक निषेध

- प्रेरणा की कमी।
- मां-बाप की फीस इतर व्यय न कर सकने की स्थिति।

बालिकाओं का नामांकन न होने के प्रमुख कारणः

- शैक्षिक सुविधाओं की अपर्याप्त और उपलब्धि तक पहुंचने में कमी।
- बाल देख-रेख, स्वास्थ्य तथा औषधि सेवा में पर्याप्त सहायता पहुंचाने वाली समर्थक सेवाओं की कमी।
- नारी जीवन का अवमूल्यन और बालिका के लिए भोजन, स्वास्थ्य और शिक्षा के प्रति भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण।
- गरीबी।
- मां-बाप की निरक्षरता तथा उनमें शिक्षा के प्रति प्रेरणा में कमी।

महिला शिक्षक

1991-92 में प्राथमिक स्तर पर 29.47 प्रतिशत, मध्य स्तर पर 33 प्रतिशत सेकेण्डरी स्तर पर 33.77 प्रतिशत और उच्च सैकेण्डरी पर 31.20 प्रतिशत शिक्षक महिलाएं थीं। देहाती क्षेत्रों में आज भी महिला शिक्षकों की विकट कमी है।

1. देहाती क्षेत्रों में प्रारम्भिक स्तर पर महिला शिक्षकों का अनुपात केवल 21 प्रतिशत है। जबकि नगरों में 56 प्रतिशत महिलाएं इस स्तर पर कार्यरत हैं।

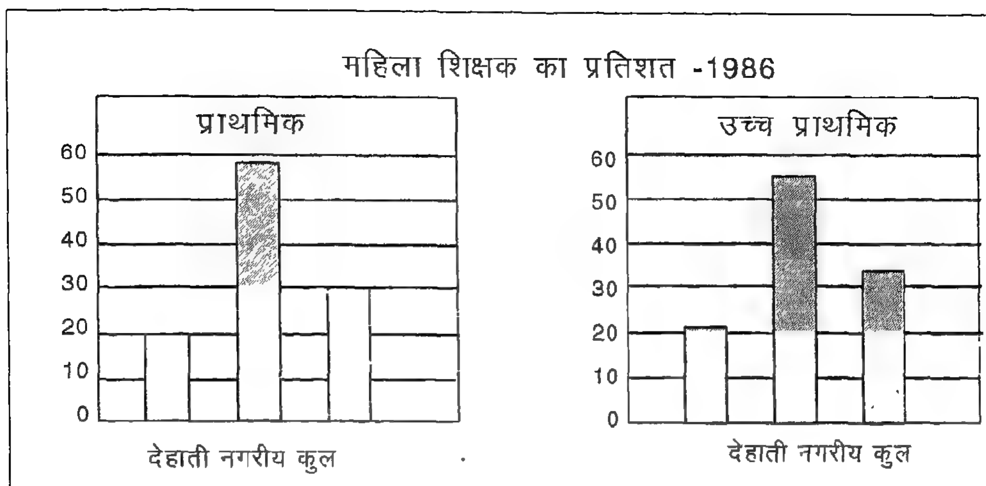
2. उच्च प्रारम्भिक स्तर पर महिला शिक्षक देहाती क्षेत्र में केवल 23 प्रतिशत और नगरों में 57 प्रतिशत।

तालिका 12

1986-87 में महिला शिक्षक-प्रतिशत				
क्षेत्र	*प्राथमिक*	*उच्च प्राथमिक*	*सैकेण्डरी*	*हायर सेकेण्डरी*
देहाती	20.84	23.40	22.42	12.92
नगरीय	55.62	56.62	47.62	30.89
कुल	28.20	32.80	31.27	27.79

स्रोतः पाँचवी अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण, 1989

चित्र 6



3. यह स्मरणीय है कि जिन राज्यो मे महिला शिक्षकों का अनुपात कम है वहां महिला साक्षरता की दर भी कम है, और महिला नामांकन भी कम है। सामान्यतः देहाती क्षेत्रों के पिछड़ेपन और विशेषतः शैक्षिक अविकास के कारण बालिकाएं यहां से यदा-कदा सीनियर सैकेण्डरी स्कूल और शिक्षक प्रशिक्षण तक पहुचं पाती है। देहाती बालिका विषमता के इसी चक्र में फंसी हुई हैं।
4. अध्ययनों से पता चलता है कि देहाती इलाकों में महिला शिक्षक की उपलब्धि माता-पिता के लिए विशेष प्रेरक होगी जिससे वे अपनी बेटी को स्कूल भेज सकेंगे। यह स्थिति मैदानी क्षेत्र में सर्वत्र व्याप्त है और यहाँ पर लैंगिक आधारगत विषमता भी अत्यधिक है।

महिलाएं और अर्थव्यवस्था

अर्थव्यवस्था में महिला योगदान की अप्रत्यक्षता

1. मानव जाति के सृजन (प्रजनन) और प्रतिपालन तथा संरक्षण में महिलाओं का योगदान दूगना होता है। वह कामकाजी शक्ति की एक तिहाई मात्रा प्रदान करती है किन्तु उनका यह योगदान प्रकट नहीं होता।
2. भारत की अधिकांश महिलाएं पारिवारिक या घरेलू काम में लगी रहती है। यह बहुत महत्वपूर्ण किन्तु काफी अवमूल्यित क्रियाकलाप रह जाता है। भारतीय सेन्सस की परिभाषा में घरेलू काम-धन्धे को उत्पादक मान नहीं माना जाता। काम-काजी महिलाएं वे हैं जो घरेलू काम-धंधे के साथ-साथ दूसरे काम भी करती हैं।

3. काम में महिलाओं की साझेदारी-सरकारी आकड़ों में महिलाओं के काम की साझेदारी बुरी तरह से अप्रतिबिम्बित रहती है। फिर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उनका योगदान परिवारो को होता है। उसमें पारिवारिक आय अंकन में उनका योगदान अपर्याप्त रूप में गिना जाता है। पारिवारिक आय बढाने के बहुत से कामों में महिलाएं लगी रहती हैं किन्तु बाजार की अर्थव्यवस्था में उनकी भागेदारी पूरी तौर से नहीं के बराबर ही रहती है। इसके अलावा अधिकांश महिलाएं व बालिकाएं पारिश्रमिक रहित घरेलू काम-काज करती हैं जैसे ईधन बटोरना, चारा और पानी लाना, बालकों और पशुओं की देख-भाल करना, फल सब्जी का बगीचा सजोना, खाद्य सामग्री बनाना, सिलाई और बुनाई करना इत्यादि।

महिला कर्मियों की विशेषताएं

1. अनेकों सामाजिक व सांस्कृतिक कारणो से महिलाएं काम-काजी दुनिया में केवल पार्श्व भूमिका में रह गई हैं।

2. अधिकांश महिला केवल पार्श्व कर्मी होती हैं (उन्होंने 12 महीनों में केवल 183 दिन से कम काम किया होता है)। 1991 की जनगणना के अनुसार 86 प्रतिशत महिला पार्श्व कर्मी मात्र है। महिला पार्श्व कर्मी अनुपात पुरुषों से कई गुना है।

3. ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में निवास करने वाली महिलाओं के काम-काज के जीवन की साझेदारी में बहुत बडा अन्तराल है।

4. महिलाएं अधिकतर कम आय वाले प्राथमिक क्षेत्र में कार्यरत होती हैं। महिला कर्मियों के पास चुनने के लिए सीमित धन्धें होते हैं। लगभग 80 प्रतिशत महिला कर्मी कृषि उत्पादन में लगी है, विशेषकर श्रमिक भूमिका में।

5. द्वितीय और तृतीय क्षेत्र में केवल 8.9 प्रतिशत और 9.5 प्रतिशत महिला कर्मियों की भागीदारी है। इन दोनों क्षेत्रों में यह पारिवारिक गृह उद्योग में लगी रहती है जहां इनको बहुत कम पारिश्रमिक मिलता है तथा यह परम्परागत अपूर्ण कौशल वाले कार्य करने में ही फंसी रहती है।

6. नई तकनीकी के श्रीगणेश होने के कारण महिलाओं को काम-काजी दुनिया में साझेदारी बराबर घटती जा रही है।

कामकाजी दुनिया में महिला शोषण

1. विकास प्रक्रिया ने महिलाओं को पार्श्व स्थिति में पहुंचा दिया है।
2. निश्चित कार्य अवधि में कहीं अधिक घन्टों तक महिलाओं को कार्य करना पड़ता है।
3. लिंगाधारित उत्पीड़न।
4. महिलाएं अनियमित मजदूरी और अन्तर्विराम के दुष्परिणाम भी झेलती हैं।
5. बाल महिला श्रमिकों की संख्या बढ़ी है। इनकी बढ़ी संख्या जवाहरात पर चमक लाने, बीड़ी बनाने, और अनेकों जोखिम वाले कार्यों में लगी हुई है।

अप्रत्यक्ष बालिका श्रम

चौदह वर्ष से कम आयु के बालकों को जोखिम वाले काम पर (जैसे फैक्ट्रियों या खदानों में) पाबन्दी लगाने वाले कानून की अवहेलना में कार्यरत किया जाता है। भारत में बाल श्रमिकों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है।

1981 की जनगणना के अनुसार 23.59 मिलियन बाल श्रमिक आंके गए थे। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण को 17.36 मिलियन बाल श्रमिक मिले। दूसरे अंकन के हिसाब से ऑपरेशन रिसर्च ग्रुप (बड़ोदरा) ने अनुमान लगाया है कि 44 मिलियन बाल श्रमिक भारतीय देहाती और नगरीय निर्धन वर्ग के ही हैं। बालिका का श्रम तो दिखाई नहीं पड़ता वह परिवार के धंधे समेटती रहती है और स्कूल से वंचित रह जाती है। नगरीय क्षेत्र में बालक-बालिकाओं की अपेक्षा अधिक परिवार इतर कार्यों में लगे हुए हैं। महिला बाल-श्रमिकों में से लगभग आधे श्रमिक नगरों के कुटीर धंधे में लगी हुई है।

बालिका का शोषण महिला का शोषण का ही परिणाम हैं। जबकि बालिकाएं पूरे समय ही धनोपार्जन के कामों मे लगी रहती हैं और देहाती इलाकों में वे प्रमुख कर्मियों की संख्या की आधा होती हैं बालिकाएं अक्सर छुटपुट काम करती है जिसका पारिश्रमिक वयस्क महिलाओं को मिलता है। बाल श्रमिकों के लिए निषेधक कानून बिल्कुल प्रभावहीन हैं। इन कानूनों को लागू करने की प्रक्रिया बहुत ढीली है। सामाजिक-आर्थिक विषमताएं जो बाल श्रमिक को घेरे हैं, विशेषकर बालिका श्रमिक को, और वह भी देहाती क्षेत्रों में अधिक ध्यान और अभिलेखों की दरकार करते हैं।

देहाती बालिका कर्मी का योगदान दिखाई ही नहीं देता इसलिए उसका अंकन भी कम होता है। अधिकांश देहाती बालिकाए छोटे भाई-बहनों की देखभाल जैसे कार्यों में लगी रहती हैं अलावा इसके कि वे अपने परिवारों की बोआई, तराई, कटाई, आरोपन और सामग्री को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने जैसे कार्यों में मदद करती हैं। महिलाओं के कृषि संबंधी कार्यों की 20 प्रतिशत भागीदारी बालिकाओं की होती है। परिवार में ऊर्जा का 50 प्रतिशत महिलाओं व बालिकाओं की देन है। एक अध्ययन से प्राप्त अनुमान है कि जब तक बालिका अपना बचपन पार करती है तब तक वह आर्थिक रूप में अपने परिवार को 39,600 रू. का योगदान दे चुकी होती है।



अनेकों राज्यों में बड़ी संख्या में बालिकाएं बीड़ी बनाने जैसे जोखिम वाले धंधों में लगी है। पत्थर पालिश, चूड़ी बनाना, कपड़े सीना, कपास और मूंगफली छीलना, हाथ से कढ़ाई, अनाज साफ करना, लाल मिर्च पीसना जैसे कार्य भी बालिकाओं द्वारा, किए जाते हैं। चूंकि बालिकाएं फैक्ट्री और बड़े फॉर्मो में काम नही करती और अधिकतर परिवारों में ही जुटी रहती है इसलिए उनका कार्य न तो दिखाई पड़ता है आर न आंका जाता है। जब तक ग्रामीण परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर नहीं उठाया जाएगा तब तक बालिकाओं वाला आर्थिक रूप ही अधिक जन्मदर और बड़े परिवारों को प्रोत्साहित करता है। परिवारों की आय बढ़ाने की योजनाएं अवश्य जन्मदर कम करने और उन्नत नामांकन तथा स्कूलों से सतत् पढ़ने में सहायक होगी। पारिश्रमिक वाला या बिना उसके किया गया काम ही बालिकाओं को स्कूल और खेल से अलग रखकर उन्हें कोल्हू का बैल बना देता है। अगर इन श्रम में लगी बालिकाओं को स्कूल में लाना है तो उन्हें यह विश्वास दिलाना होगा कि शिक्षा व्यक्तिगत रूप में उन्हें अधिक धनोपार्जन की कार्यक्षमता सिखाएगी और इस प्रकार उज्जवल भविष्य बनाएगी। इसके लिए जागरूकता की आवश्यकता है जिससे उन्हें सावधानीपूर्वक हस्तकौशल पनपने वाले कार्यक्रम संजोए और सिखाए जाएं जिससे बालिकाएं अपने मूल्य की शक्ल पहचान सकें। पाठ्यक्रम निर्माण भी अत्यावश्यक है। शिक्षा के विशेष प्रोत्साहन, विशेषकर देहाती क्षेत्रों में, शिशु देखभाल सुविधा का

सार्वलौककरण, स्कूल पूर्व शिक्षा का प्रावधान और व्यस्क महिलाओं के लिए उपयुक्त रोजगारों की व्यवस्था ही ग्रामीण बालिका को स्कूल तक पहुंचा सकेगी।

राजनैतिक क्षेत्र

1. महिलाओं को वोट देने का अधिकार है और वह किसी भी राजनैतिक पद के लिए निर्वाचन में भाग ले सकती हैं।

2. संसद के पंचायत राज कानून के पारित करने के पश्चात् सब स्थानीय निकायों जैसे पंचायत; म्युनिसपेलिटी/कॉरपोरेशन की एक तिहाई सदस्याएं महिला ही होंगी। साथ ही इन संस्थानों में से एक तिहाई संस्थाओं की अध्यक्ष भी महिलाएं होंगी।

3. विश्व के इतिहास में यह पहिला अवसर है जब कि सवा दो लाख पंचायतों में एक तिहाई सदस्य महिलायें होंगी और 75000 सरपंच महिलाएं होंगी। जनपदों और जिला परिषदों में ऐसा ही होगा।

विश्लेषण

1. बड़ी संख्या में महिलाएं मतदान कर रही है किन्तु उच्चतम राजनैतिक पदों पर आसीन नहीं है।

2. लोकसभा में कभी भी उनकी भागीदारी 10 प्रतिशत से अधिक नहीं रही है, आठवीं लोकसभा में सबसे अधिक थी यानी 8 प्रतिशत इस समय केवल 7 प्रतिशत ही है।

3. राज्य सभा में स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर है, 1971 में 10 प्रतिशत से कुछ अधिक 1985 और आज इस सदन के 250 सदस्यों में से 15 प्रतिशत (38) महिला सदस्य है। किन्तु राज्य विधानसभाओं में महिला सदस्यता नगण्य है।

4. राजनैतिक दल महिलाओं को निर्वाचन के लिए मनोनीत नहीं करते । महिलाओं के पास पर्याप्त धन और पाश्विक बल की कमी होती है इसलिए वे चुनाव लड़ने में संकुचित हो जाती हैं।

5. सामान्य महिलाओं और पंचायत की निर्वाचित महिला सदस्याओं में हर्ष और उल्लास है।

परिचर्चा के लिए विचार बिन्दु

1. संसद और राज्य विधानसभाओं में महिला साझेदारी इतनी कम क्यों है।

संकेत

पुरुष राजनैतिक नेता जानबूझकर महिलाओं को राजनैतिक दलबन्दी से अलग रख रहे हैं। इस समय केवल एक राज्य मुख्यमंत्री है कोई महिला गवर्नर नहीं।

2. स्कूलों में बालिकाओं को राजनैतिक क्रियाकलापों में साझेदारी के लिए किस प्रकार तैयार किया जा सकता है यदि महिला साझेदारी को गांव से जिला, राज्य और राष्ट्र तक पहुंचना है।

संकेत

1. एक राजनैतिक नेता के अधिकारों और जिम्मेदारी की सूची बनाएं, देखें कि वहां कौन सी दक्षता की आवश्यकता पड़ती है। जैसे निर्णायक भूमिका बातचीत करने की क्षमता।
2. कक्षागत गतिविधियों को निर्मित करें जिनसे जागृति, लोकतांत्रिक प्रक्रिया इत्यादि पनप सके जो बालक और बालिका को नेतृत्व के लिए तैयार कर सकें।



इकाई
3

लिंगाधारित समानताः पाठ्यक्रम के माध्यम से

परिचय

भारत में नीति बालक-बालिकाओ के लिए समरूपक पाठ्यक्रम कब से निर्धारित किए हुए है किन्तु पाठ्यक्रम के विषय मे पूर्वाग्रह, पक्षपात और रूढ़िवादी छिपे पांव पठन सामग्री, कक्षा में और खेल के मैदानों मे उन लोगों द्वारा प्रवेश कर लेते हैं जिन पर इनकी प्रयुक्त करने का दायित्व लिए रहते हैं। इससे बालिकाओं में व्याप्त उनके असमान आत्म प्रतिबिम्बन और निम्न आत्म सम्मान का पुष्टीकरण हो जाता है। इस एकक में शिक्षकों तथा प्रशासकों में लिंगाधारित भूमिका में पूर्वाग्रहों को दूर करके समानता और सकारात्मक आत्म संकल्पना का पाठ्यक्रम द्वारा प्रयास कर सकने की क्षमता बढ़ाने का उपक्रम किया गया है।

अपेक्षित उपलब्धि

इस एकक के अंत मे आप जान जाएंगे कि कैसे मौजूदा पाठ्यक्रम, स्कूल कार्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों और पठन सामग्री में लिगांधारित भूमिका गत पूर्वाग्रह आ जाते हैं और आप निम्नांकित दक्षता प्राप्त कर लेंगे :

- बालिकाओं और बालकों को लिंगाधारित भूमिकाओं में वांछनीय परिवर्तनों को ढूंढा जाए जिससे वह अनुरूप साथी बन कर साथ-साथ चल सकें।
- "बालिका हितैषी स्कूल" कैसे संकलित किया जाए, उसकी गतिविधियां क्या हो जिससे बालक-बालिकाओं में समानता और सकारात्मक आत्म सम्मान उत्पन्न हो सकें।
- समुदाय की भागीदारी बढ़ाई जाये।

प्रारम्भिक स्कूल

प्राथमिक शाला चाहे औपचारिक हो अथवा अनौपचारिक कुछ महत्वपूर्ण दायित्व निभाती है :

(क) बालको में बोध जन्य योग्यता उत्पन्न करने के लिए उन्हें भाषा, गणित, वातावरण अध्‍ययन, कार्य अनुभव, शारीरिक शिक्षा, कला और कौशल का ज्ञान कराती है,

(ख) उन्हें समानता, मानवीय प्रतिष्ठा, सामाजिक चेतना और संवेदनशीलता जैसे सार्वलौकिक मानव मूल्यों से परिचित कराती है, और

(ग) इन नन्हें-मुन्हों को परिवर्तन में भागीदार होना सिखाती है।

एक विद्यालय का पाठ्यक्रम तीन स्थितियों का समावेश होता है : नियोजित पठन पाठन प्रोग्राम, सहगामी क्रियाकलाप और जो बालक स्कूल के वातावरण से ग्रहण करता है जिसे "परोक्ष पाठ्क्रम" भी कहते है।

अनुकरणीय व्यवहार, पाठ्यक्रम निदान और कक्षा में बात-चीत द्वारा शिक्षक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि शिक्षकों क़े व्यवहार का विद्यार्थियों के आत्म सम्मान बढ़ाने में विशेष योगदान रहता है। प्रत्येक स्कूल के प्रधान को उन सब व्यक्तियों, वित्तीय प्रसाधनों और सामुदायिक संगठन की सहायता को जुटाना पड़ता है जिससे शिक्षक अपने कर्तव्य पूरे कर सकें ।

राष्ट्रीय पाठ्यक्रमणी ढांचा (राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986)

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम का सारभाग बालक-बालिकाओं के लिए समरूपक तो है ही साथ ही उसमें कुछ सार मूल्यों का विनियोग भी है जैसे अन्तः लिग समानता, महिलाओं के लिए बर्ती जाने वाली अनादरपूर्ण व्यवहारित सामाजिक कुरीतियो का विरोध, लोकतंत्र धर्मनिर्पेक्षता, राष्ट्रीय एकता, वातावरण का संरक्षण इत्यादि। राष्ट्रीय शिक्षा नीति और कार्यान्वयन प्रोग्राम ने बालिका के सामाजिक, आहारिक रख रखाव पर ध्यान दिया है साथ ही साथ उन सहायक तथ्यों को भी मजबूत करने को कहा है जिससे सार्वलौकिक प्रारम्भिक शिक्षा सम्पन्न हो सके जैसे पीने के पानी की व्यवस्था, चारा, ईधन और शिशु कल्याण का प्रबन्ध। कार्यान्वयन नीति ने पाठ्यपुस्तकों के पुनर्वलोकन पर भी बल दिया है जिससे उन्हें लिंग भूमिका पूर्वाग्रहों से मुक्त किया जा सके और सारे शिक्षा कर्मियों को लिंगाधारित भूमिका के प्रति संवेदनशील, पारदर्शी पाठ्यक्रम का विक्रय करना आ सके।

सारे शिक्षकों और अनुदेशकों को महिला सशक्तिकरण का कर्ता बनने का प्रशिक्षण दिया जाएगा। एन.सी.ई.आर.टी., नीपा, डी.ए.ई., एस.आर.एस., डाइट, एस.सी.ई.आर.टी. और विश्वविद्यालय ढांचा प्रशिक्षण कार्यक्रम संगठित करेंगे। अग्रगामी प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्मित किए जाएंगे जिनमें महिला समूहों और अन्य संबंधित संगठनों की मदद की जाएगी" (पी.ओ.ए. 1992)

अभ्यास

अपने आप से प्रश्न कीजिए :

1. क्या हम लड़के–लड़कियों के लिए अलग–अलग तरह के क्रियाकलाप संयोजित करते हैं।
2. एक ही क्रियाकलाप में क्या हम लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग भूमिकाएं संयोजित करते हैं।
3. पढ़ाते और बातचीत करते समय क्या हम अधिकतर पुरुषों का ही उदाहरण देते हैं।
4. क्या हम वाक्य बनाते समय लड़कियों की अपेक्षा लड़को के नाम अधिक प्रयुक्त करते हैं।
5. क्या हमारी लड़के-लड़कियों से अलग-अलग व्यवहार की अपेक्षा होती है।
6. क्या हम लड़के-लड़कियों के प्रति अलग-अलग तरह से स्नेह और रोष प्रकट करते हैं।
7. क्या हम लड़के और लड़कियों के लिए अलग-अलग तरह की सजा तजवीज करते हैं।
8. क्या हम लड़के-लड़कियों को अलग-अलग कामों के लिए अलग-अलग तरह से प्रोत्साहित करते हैं।
9. क्या हम लड़के-लड़कियों से बराबर प्रश्न करते हैं।
10. क्या हम लड़के-लड़कियों को माने हुए लिंगोचित संकेत देते हैं जैसे :
    - लड़कों को यह करना चाहिए या नहीं
    - ब्रड़े लड़के ऐसे नहीं करते-वैसे नहीं करते
    - अच्छी लड़कियां ऐसे नहीं करती।
11. क्या हम लड़के-लड़कियों दोनों को बराबरी से प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

12. क्या हम लडके-लड़कियों में कार्य विभाजन और जिम्मेदारी बराबरी से बांटते हैं।

अपने उत्तरों पर विचार कीजिए और अपने साथियों से खुलकर विवेचन कीजिए। सम्भवतः हमें अपने व्यवहार को बदलने की आवश्यकता महसूस हो क्योंकि हमारी अवधारणाएं हमारे बचपन से उपजी हैं जहां कि न केवल लड़के-लड़कियों, महिला-पुरुष के आपस में मिलने जुलने पर पाबंदी थी। अपितु नारी सदस्याओ को कुछ कमतर माना जाता था।

इकाई 1 और 2 में हमने यह समंझने की कोशिश की है कि लिंगाधारित भेदभाव नारी वर्ग पर किस प्रकार हावी हो जाता है और फिर आगे चलकर लड़की के आत्मबोध को कुंठित कर देता है। आइए अब मिलकर सोंचे कि अब हम ऐसे कौन से कार्य कलाप संयोजित करें जिससे बालिका के प्रगति के रास्ते के पत्थर हम हटा पायें।

(क) उसके जीने के हक को महफूज रखें

(ख) उसको हर प्रकार की शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना से बचा कर रखें।

(ग) उसको किस प्रकार स्वतंत्र राष्ट्र के स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में विकिसत करें जिससे वह पूर्ण मानवीय विकास प्राप्त कर सकें।

यह शायद हमारे जीवन की सबसे बडी चुनौती है कि हम ऐसा क्या करें कि लडकियां स्कूल जाएं, विद्या ग्रहण करें और आगे चलकर सुनियोजित व्यक्ति बने जिनमें आत्मविश्वास हो जो सकारात्मक बोध सम्पन्न हों और जो देश और सम्पूर्ण मानव जाति के विकास में अपना योगदान दे सके। लेकिन हां बालिकाएं ऐसे विकास के फल की भी पूर्णाधिकारी हैं।

अगले पृष्ठों में आपको कुछ ऐसे सुझाव देंगे क्योंकि हमें पूरा विश्वास है कि आप स्वतः क्रियात्मक और सम्भव हल ढूंढ लेंगे जो कि आपके देश और कालानुसार उपयुक्त होंगे और आपकी रोजाना की जिंदगी से जुडे होंगे क्योंकि एक बालिका की स्थिति उसकी समूहंगत महिला स्थिति को प्रतिबिम्बित करती है। और यह भी उतना ही आवश्यक है कि परम्परागत स्थिति में लडकों का आत्मबोध कैसा है उसे भी देखें और यदि आवश्यकता समझें तो समानता और परम्परिक मर्यादा के संदर्भ में उनके आत्मबोध को परिवर्तित करें। क्योंकि नारी सुलभ और

पुरुष सुलभ भूमिकाएं और आचार व्यवहार सामाजिक कृतियां है।

शिक्षक का प्रबंधक स्वरूप

बालिकाओं के प्रवेश, नामांकन, सतत् परिचलन और शैक्षिक उपलब्धि हेतु

प्राथमिक स्तर के शिक्षक अक्सर मुख्य अध्यापक भी होते हैं और इसलिए शिक्षा प्रशासक भी होते हैं। प्रशासक की भूमिका में वे निम्नलिखित कृत्य निभाते हैं :

- ब्लाक जिला अधिकारियों से संपर्क करना ताकि औपचारिक तथा अनौपचारिक स्थितियों में अधिक सुविधाएं प्रदान करते हुए विशेषकर बालिकाओं के लिए प्रसाधन सुविधा, और सब ही बालकों के लिए चिकित्सा का प्रबन्ध करके अधिक संख्या में पढाई की सुविधा जमा करना।
- बालक व बालिकाओं को यथा समय प्रोत्साहन सामग्री जैसे पुस्तकें, वर्दी और उपस्थिति-छात्रवृत्ति जुटा कर देना।
- यह सुनिश्चित करना कि स्कूल के पास आंगनवाड़ी, शिशुसदन की सुविधा है और यदि नहीं तो अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र को आंगनवाड़ी के पास स्थापित करवाना।
- माता-पिता से सम्पर्क करके बालिका शिक्षा की उपयोगिता को प्रसारित करना।
- महिला मंडल, ग्रामपचायत और गैर-सरकारी संगठनों के सहयोग से बालिका के हित में अभियान चलाना।
- महिला मंडल, ग्राम्यशिक्षा समिति और युवा संगठन के सहयोग से बालिकाओं के लिए विशेष प्रयास चालू करना।
- बालिकाओं को नामांकन और विद्यालय अवरोधन तथा शिक्षा प्राप्ति की उपलब्धता पर बालिकाओं का ध्यान आकर्षित करना उनके माता-पिता से बातचीत करके प्राथमिक शिक्षा के उपरान्त शिक्षा विभाग की सहायता से मुक्त विद्यालीय शिक्षा अथवा अनौपचारिक शिक्षा का प्रबंध करवाना।
- उच्च अधिकारियों से माध्यमिक कक्षाएं चालू करने के लिए विचार विमर्श करना चाहे वे औपचारिक हों अथवा अनौपचारिक क्योंकि अन्वेषणों से पता चला है कि संयुक्त स्कूलों के कारण बालिकाएं शिक्षा में शामिल रहती हैं।

- अगर आवश्यक हो तो आने जाने की सुविधा उपलब्ध करायें जिससे नजदीक के गांवों से बालिकाएं आ जा सके – बस द्वारा या साईकलों पर।
- बालिकाएं जो पढ़ाई छोड़ने के आस-पास हैं अवश्य ढूंढी जाएं। वे बालिकाएं जो नियमित रूप से स्कूल नहीं आती, देर से आती है, जिनका पढ़ना-लिखना कमजोर है, अवश्य ऋणात्मक आत्म छवि वाली होती हैं, भाई-बहनों क़ी देखभाल, धनोपार्जन वाले कार्यो में सहायता या माता-पिता की अस्वस्थता भी वह कारण है जिनसे बालिकाएं स्कूल में पढ़ना छोड़ देती हैं। इनका पता पाने पर आवश्यक कदम उठाना।
- कम दक्षता वाली बालिकाओं को उनकी शैक्षिक कठिनाइयों में मदद देना।
- अधिक अच्छी पढने वाली बालिकाओं को पढाई जारी रखने के लिए उत्साहित करना और उनके लिए आधुनिक धन्धों के दरवाजे खोलना।
- लघु नाटिका, नाटक, वाद-विवाद प्रतियोगिता, इश्तहार द्वारा जागरूकता उत्पन्न करने के लिए स्कूल प्रिंसिपल, शिक्षकों, कलाकारों की एक कमेटी बनाना जो स्कूल का इस दिशा का कार्यक्रम निर्धारित व चालू कर सके।
- माता-पिता और बालकों में सकारात्मक विचार और अभिवृत्तियों को बनाने में अभिभावक शिक्षक समितियां बहुत बड़ी भूमिका निभाती है इसलिए विद्यालयी स्तर पर उनका विन्यास करना।

पाठ्यक्रम सम्पादन के लिए सामान्य सुझाव

1. बालकों को प्रभावशाली चित्र और उदाहरण के निरूपण से वह तथ्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे वह नारी की मातृत्व भूमिका के साथ-साथ यह देख सके कि वह नारी शिक्षक, डाक्टर, प्रोफेसर, इन्जीनियर, प्रशासक, राजनीतिक, कूटनीतिज्ञ जलकपोत का कप्तान, वायुयान चालक, समाज सुधारक, मदर टेरेसा की तरह की समाज सेवक, स्वतंत्रता संग्रामी जंगली पशुओं की प्रेमी भूमिका में भी देखी जा सकती है। उक्त वर्णित स्थितियों में महिलाओं को पाठ्य पुस्तकों तथा कक्षा की दीवारों पर दिखाया जाना चाहिए।

2. शिक्षक बालकों को सब प्रकार के उपकरणों जैसे कठपुतलियों द्वारा महिलाओं का कठिन श्रम प्रदर्शित करें। वे कैसे पुरुषों के समकक्ष अस्पतालों में, फैक्ट्रियों में कार्यरत होती हैं साथ ही कैसे खतरनाक उपक्रमों में वह लगी रहती है जबकि कितना ही समय वह कुएं से पानी भरने, ईंधन चीरने, परिवार में पुरुष सान्निध्य में अन्य काम करने में जैसे कपड़े धोने इत्यादि पर खर्च करती है।

3. महिला लेखक, कलाकर, संगीतज्ञ और कुशल महिला व्यक्तियों को समय-समय पर बुलाकर प्रदर्शन करवाना चाहिए। जिससे उनकी क्षमता का पता चले।

4. पाठ्यपुस्तकों की पंक्तियों में झांकने वाले पूर्वाग्रहों को शिक्षक कुचल डाले।

शिक्षक और कक्षा

1. बालक-बालिकाओं को प्रारम्भिक शिक्षा स्तर पर अलग-अलग न करें।
2. हर कक्षा में दो मौनीटर हों, एक लडका और एक लड़की।
3. सामूहिक क्रियाकलाप व खेल के लिए मिले जुले समूह बनायें।
4. बालकों और बालिकाओं दोनों को ही पढ़ने, सुनाने और बोलने का समान अवसर दें जिससे वे आप बीती उन्मुक्त ढंग से बोल सके।
5. शर्मीली बालिकाओं तथा बालकों से अवश्य प्रश्न पूछें।
6. विद्यालय में आने से पहले ही जो लिंगाधारित भूमिका बालक-बालिकाए स्वतः ही ग्रहण कर लेते हैं उसमें परिवर्तनकारी तथ्य मिलाकर भेदभाव दूर करने का प्रयत्न करें।
7. बालिकाओं को आवश्यकता से अधिक संरक्षित न किया जाए क्योंकि उससे लड़कों में आक्रोश और लड़कियों में आश्रितता पनपती है।
8. इस तरह के वाक्यों का प्रयोग न करें जैसे "अबे तू क्या लड़की है जो रोता है"।



9. बालकों के साथ-साथ बालिकाओं में भी नेतृत्व की सकत पनपाई जाए जिससे वे निर्णय ले सके और दोनों एक दूसरे को बराबरी के स्तर पर देख सके।

पाठ्य-पुस्तकें

राज्य और राष्ट्रीय एजेन्सी पाठ्य-पुस्तकें निर्मित करते है। लिंगाधारित समानता को शामिल करते हुए पहिचाने हुए मार्मिक मूल्यों को पाठ्यपुस्तकों मे शामिल करने का प्रयास जारी हैं। कुछ राज्यों में ऐसी पाठ्यपुस्तकें और अभ्यास पुस्तकें बना ली हैं जो लिंगाधारित भेदभाव से मुक्त तो है ही साथ ही लडके-लडकियों, महिला-पुरुष को साझेदारी से काम करते दर्शाती है। यह सामग्री महिलाओं को गैर परम्परागत कार्यो मे सलग्न दिखाती है और उसमें उनका योगदान सुर्खो से बताती है। तो भी अधिकांश शिक्षकों को अभी भी उन पुस्तकों का प्रयोग ही करना पड़ेगा जिसमें बालिका का कमजोर और रूढ़िवादी स्थिति में ही नर-नारी का चित्रण किया गया है। और महिला ऋणात्मक स्थिति में ही है। आजकल पाठ्यपुस्तकों में निम्नांकित दुर्बलताएं हैं :

1. पुरुषपात्र और पुरुष लेखकों का बाहुल्य।
2. पुरुष प्रमुख भूमिका में और कुछ महिलाएं जिनका जिक्र भी होता है वे परिचारिका की भूमिका में ही होते हैं जिनसे भृत्योचित या सहायक का कार्य ही अपेक्षित होता है।
3. निडर, हिम्मत, बहादुरी, आगुआई, उपायकुशलता, पुरुषों को सुशोभित करती बताई जाती है और महिलाओं को निश्चेष्ट भीरू, असंगठित, कमजोर और मूर्ख दर्शाया जाता है।
4. पुरुषो की कर्मशीलता, शिक्षक, नेता, डाक्टर, किसान के रूप में दिखाई जाती है और महिलाओं को गृहणी, मां, परिचारिका और यदा-कदा कृषक, फैक्ट्री कार्मिक, डाक्टर, वायुयान चालक और दफतरों में कार्यरत भूमिका में दर्शाया जाता है।

इस समय जो पाठ्य पुस्तकें काम में आ रही है उनके उदाहरण लें और देखें तथा सोचे कि ऊपर दिए गए विश्लेषण कहा तक सही है और वस्तुस्थिति को किस प्रकार मोड़ दिया जा सकता है जिससे लिंगाधारित भूमिका में समानता और बालिकाओं की आत्म परिकल्पना जड़ पकड़ सके।

उदाहरण : 1
परी

बालिकाओं और महिलाओं को परी रूप में प्रस्तुत करना। अस्वाभाविक होने से साथ-साथ यह नर-नारी समानता के सिद्धान्त का खंडन करता है। हम पुरुष को "सुपरमैन" के रूप में तो प्रदर्शित नहीं करते क्योंकि यह गप्प है। तब फिर महिलाओं और बालिकाओं को क्यों । एक बालिका भी तो वह सब कर सकती है जैसे –– "सरला बाजार में खरीदारी करने गई"।

जब वह खरीदारी करने जाती है तो
सबसे पहले मछली खरीदती है;
और उसे थोड़ी देर घर पर
पानी के लोटे में रखकर
निहारती है और फिर
झरने में धीरे से छोड़ देती है।





उसके बाद वह एक रंग-बिरंगी चिड़िया
उसके पिंजड़े के साथ खरीदती है
उसे घर लाकर पहले तो
उसका मधुर गाना सुनती है;
और फिर पिंजड़े का द्वार खोलकर
उसे उड़ जाने देती है।

तत्पश्चात् वह एक
प्यारी चुहिया खरीदती है।
यह चुहिया तमाम दिन नीचे से ऊपर
उसके छोटे से घर में घूमती है
जिससे परी हर्षित होती है
फिर परी उसे पुचकारती है और भाग जाने देती है।



इन तीनों स्थितियों में वह संवेदनशील दर्शाई गई है। मछली को जीवन दान दिया और चिड़िया और चुहिया को उनकी आजादी लौटा दी। यह एक नेक परी की कहानी है परन्तु यह एक आम लड़की की भी हो सकती है। यदि लड़की की होगी तो हर पाठक बालिका अपने आप को पात्र के साथ जोड सकेगी।

उदाहरण : 2

बेवकूफ महिला

आइए जरा इस पाठ्यपुस्तक में से टीनी-वीनी की कहानी सुनें।



टीनी-वीनी को एक पाच रुपये का नोट मिला। उसने चट एक कुत्ता खरीदा और उसे घर लाकर मेज़ के नीचे बांध दिया। कुत्ते ने भौ-भौं करके उनके कान खा लिए। परेशान होकर टीनी-वीनी उसे दो रुपये में बेच आई और काली बिल्ली खरीद लाई। जब बिल्ली ने बहुत म्याऊं-म्याऊं की तो टीनी-वीनी ने उसे एक रुपये में बेच दिया और एक चिडिया खरीद लाई। चिड़िया कुछ देर उनके हाथ पर बैठी गाती रही और फिर फुर्र से उड गई बस रह गई टीनी-वीनी हाथ मलती, फिर से झाड़ू उठा कर बुहारने लगीं।

उदाहरण : 3

आलसी लापरवाह लड़का

कहानी में लड़का मां की आवाज के प्रति लापरवाह है और पलंग पर सुस्ती करे पड़ा रहता है और अन्त में उसके सपने में अण्डों की वह टोकरी गिर जाती है जिसे उसे बेचना था।

बहिन जाग रही है और दैनिक क्रियाओं में संलग्न है। बहिन और मां दोनों ही नबूम को जगाने की कोशिश करते हैं। पर वह है कि उठकर ही नहीं देता।



प्रस्तुत पाठ लड़के व लडकियां दोनों ही पढेंगे। इसको कहीं लडके रोल माडेल ही ना बना बैठें और यह समझ बैठें कि सोना, आराम करना, सपने देखना और मां तथा बहिन की बात को अनसुनी कर देना उनका अधिकार है।

उदाहरण : 4

पुरुष और लड़के बहादुरी के बाने में और महिलाएं भीरू और डरपोक

बहुत से पाठ पुरुष को बहादुर और महिलाओं को भीरू प्रदर्शित करते हैं शिक्षक को बहादुरी के उन इनामों को चर्चा करनी चाहिए जो गणतंत्र दिवस पर महिलाओं और पुरुषों को दिए जाते हैं। आगे दी गई उत्तर-पूर्व की एक बालिका की कहानी सुनाई जा सकती है तथा इसी प्रकार की अन्य सच्ची कहानियाँ भी।

1. प्रस्तुत पाठ में एक बालिका यना यह कहती पाई गई कि पुरूष लबे, ऊँचे और मजबूत होते हैं और पहाड पर चढ़ सकते हैं किंतु मैं बेचारी नहीं कर सकती। बच्चों के मन में यह धारणा पुष्ट हो जाएगी कि उनकी तुलना में. पुरुष विशालकाय और शक्तिमान होते हैं और लड़कियां या स्त्री वर्ग कमजोर और असमर्थ ही है।



2. अब वहीं देखिए। इन दोनों बालकों नबूम और यना, के माता पिता जब रात को शयन कक्ष में जाते हैं तो उनकी मां चमगादड़ से भयभीत हो जाती है और पिता उसे भगा देते हैं।

यह पाठ महिलाओं को डरपोक और पुरुषों को बहादुर दर्शाता है।



उदाहरण : 5

बच्चों को बहादुर और मजबूत बनाने के लिए यह जरूरी है कि उन्हें नीचे दी गई तथा अन्य भूतों की कहानियाँ बिल्कुल न सुनाई जाएं। वास्तव में शिक्षक को बिल्कुल नकारना पड़ेगा की भूत जैसी कोई चीज नहीं जैसे कि परियाँ और जादूगरनियाँ।

प्रस्तुत पाठ में यह दिखाया गया है कि एक घर में मस्ताना नामक एक भूत रहता है। यह

भूत घर में रात को निकलता है और लडकियों की सीढियो व दरवाजों पर खट-खट, चूं-चूं की आवाजें होती हैं।

हमे यह समझना कठिन है कि सिवाय बच्चों के दिमाग में भूत का डर डालने के इस कहानी ने और क्या बताने का प्रयास किया।





उदाहरण : 6

जादूगरनी महिला : महिला का जादूगरनी रूप में प्रस्तुतीकरण।

संविधान के अनुच्छेद 51 (ए) (ई) में प्रत्येक नागरिक को यह कर्तव्य सौंपा गया है कि उन सब बातों को बहिष्कृत करें जो महिलाओं को अप्रतिष्ठित करती हैं। सूचना यह है कि बिहार के आदिवासी क्षेत्रों में लगभग 100 महिलाएं प्रतिवर्ष जादूगरनी घोषित कर दी जाती है और दंड स्वरूप जिंदा जला दी जाती हैं, बहुतों को मारा-पीटा जाता है और बेइज्जत करके गांव से निकाल दिया जाता है। उनकी जमीन, सम्पत्ति और कुटिया समुदाय द्वारा हड़प ली जाती है। राज्य में इस दुष्प्रथा के विरोध में बनाएं चल-चित्र को पुरष्कृत करके इस प्रथा के विरूद्ध अपना मन्तव्य स्पष्ट कर दिया है।

शिक्षक इस पाठ को पढ़ाते समय इसके दुष्प्रभाव को यह कह कर दूर कर सकते हैं कि जादूगरनी का बात करना असंवैधानिक है। यह भी बात है कि अन्त में यनी नामक बालिका कहती है "मैं कभी भी घर से रात में नहीं जाऊंगी" इससे छोटी बालिकाओं के मन में डर बैठ जाता है। साथ में बच्चे यह विश्वास करने लगते हैं कि जादूगरनी सच में होती है और वह प्रथा जिसमें उन्हें अन्त में जीवित जला दिया जाता है ठीक ही तो है।

पहाड़ कभी नहीं गाएगा

प्रस्तुत कहानी "पहाड़ कभी नहीं गाएगा" मुख्यतः एक महिला जादूगरनी की पहाड़ की गुफा में



रहते हुए दर्शाती है। यह बूढी डायन सोचती है कि वह अकेली रहती है क्यों ना एक बालिका को ले आए जो उससे बातचीत भी करे तथा कभी बाहर खेले भी।

वह फुसला कर यनी नाम की एक बालिका को ले आती है। किंतु बालिका कुत्ता और मेंढक से मित्रता स्थापित कर बच निकलती है और तीनों मित्र पहाड पर चढ कर आते हैं और फिर बालिका अपने माता-पिता के पास पहुंच कर रात को घर से अकेले कभी न निकलने का निर्णय कर लेती है।



डर तो उसके मन में बैठता ही है साथ अन्य पाठकों को भी डर लगने लगेगा ऐसा निश्चित है। बढ़ते हुए अत्याचारों के युग में बालक-बालिकाओं में डर नहीं साहस पनपाना ही श्रेयकर है।

उदाहरण : 7

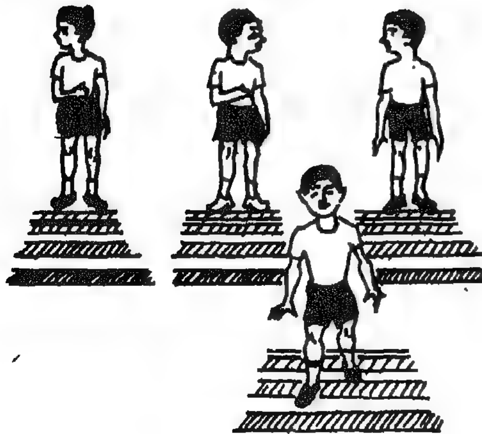
वे दृष्टांत जिनमें केवल पुरुष और बालक काम करते और खेलते दिखाए जाते हैं। शिक्षकों को

यह बताना पडेगा कि यह सत्य नहीं, और अगर ऐसा होता भी है तो उसे बदलना पड़ेगा जिससे लड़के-लडकियां, स्त्री-पुरुष सब काम साझेदारी में कर सकें।





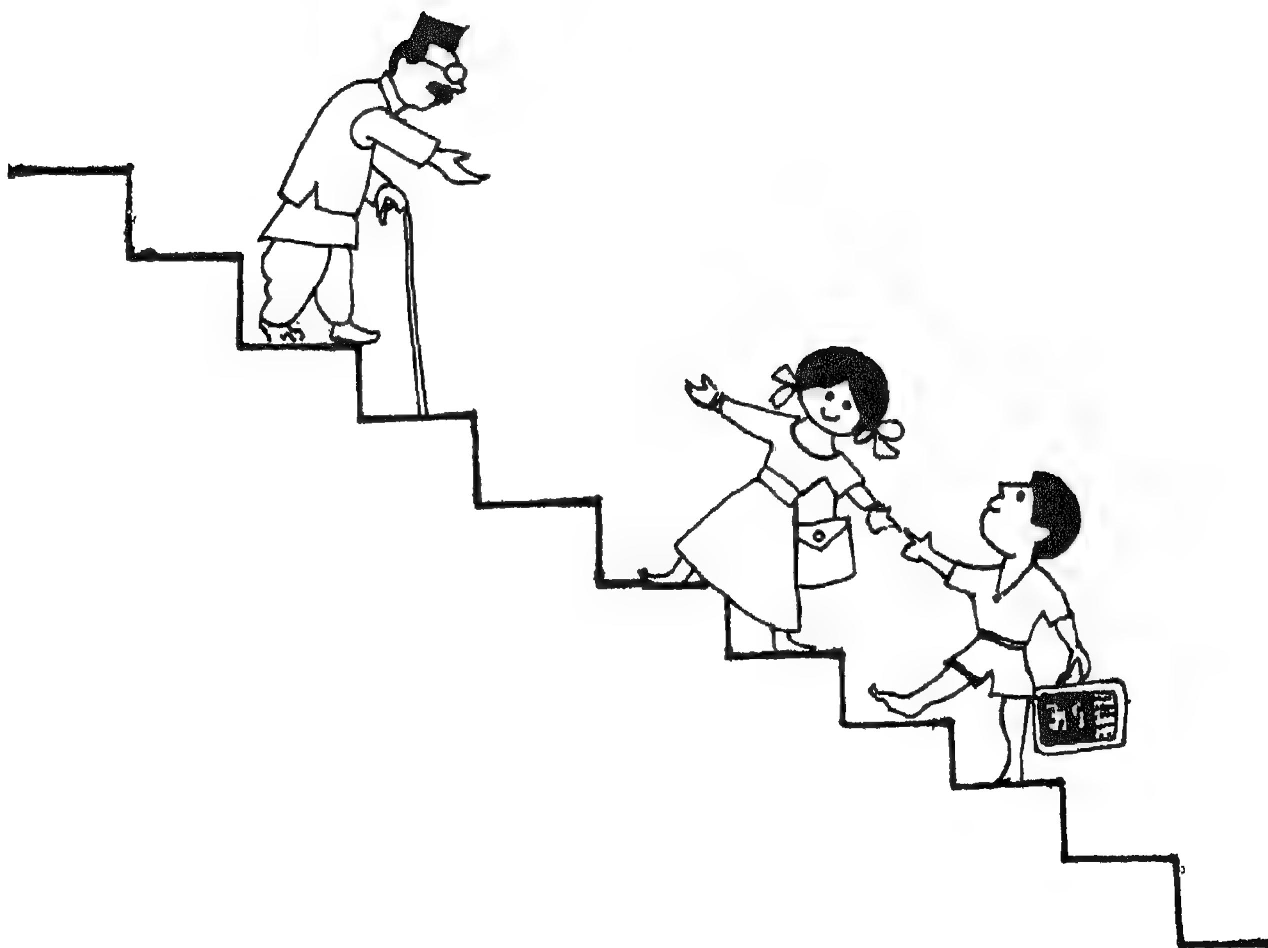




उदाहरण : 8

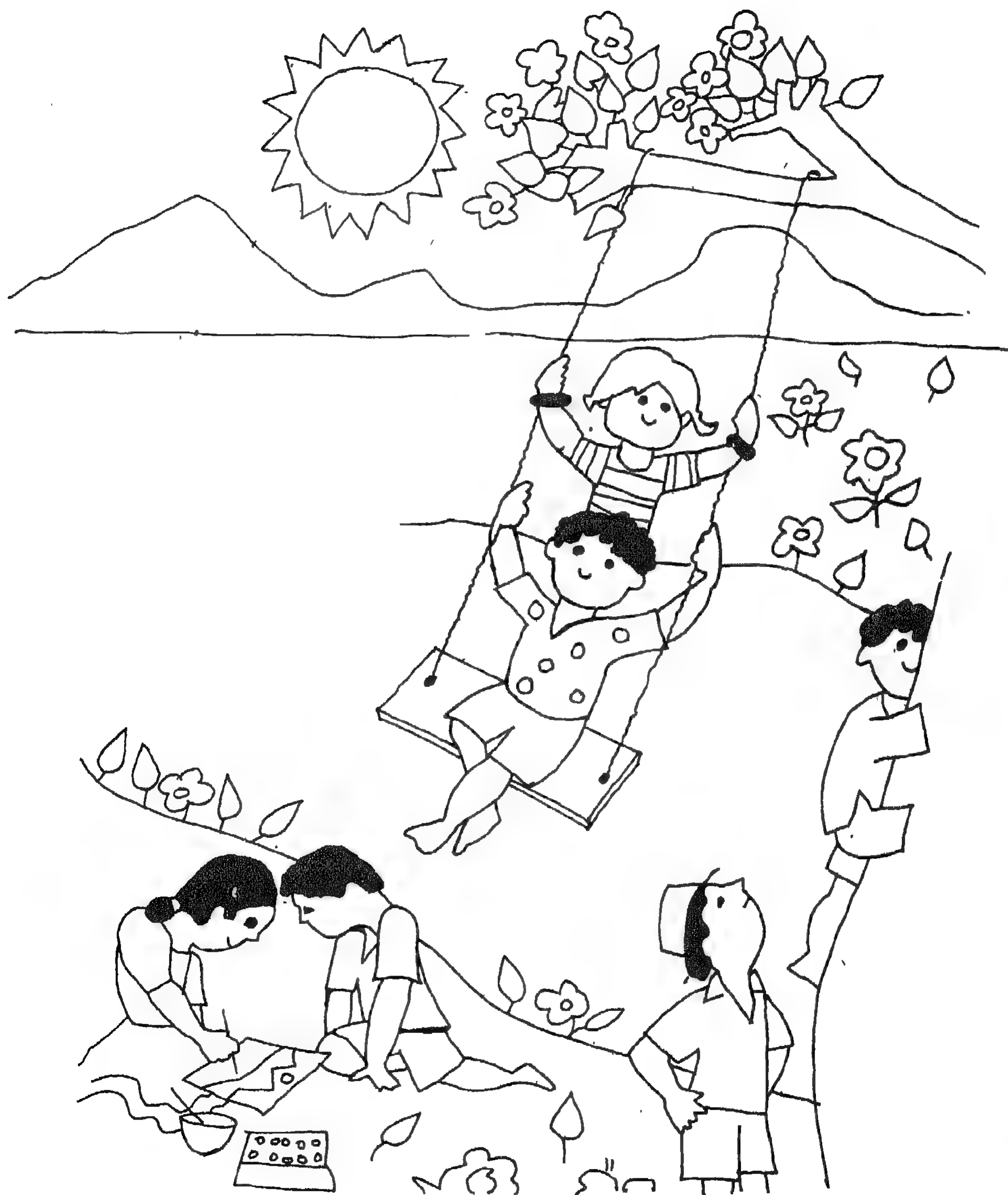
समानता की ओर

नवीन पाठ्यपुस्तको व सहायक सामग्री में दृष्टात











पाठ्यचर्चा गत सम्पादन

भाषा (कक्षा 1-5)



प्राथमिक स्तर पर "भाषा" पाठयक्रम एक प्रमुख भूमिका निभाता है। भाषा अधिगम द्वारा जिन मूलभूत कौशलों की दक्षता प्राप्त की जाती है वे अन्य क्षेत्रों की संकल्पनाओं के अधिगम को सरल बनाते हैं। साथ ही बच्चे के व्यक्तित्व के विकास तथा दैनिक जीवन की क्रियाकलापों में उसके आचरण को प्रभावी बनाने में भाषा प्रयोग तथा शब्दावली-नियंत्रण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्राथमिक कक्षाओं में भाषा अधिगम निम्नांकित दक्षताओं की अपेक्षा करता है :

- भाषा को समझते हुए सुनना।
- औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही स्थितियों में प्रभावपूर्ण ढंग से बोलना।
- समझते हुए पढ़ना तथा विभिन्न प्रकार की शैक्षिक सामग्री का आनन्द लेना।
- तार्किक तथा मौलिकता के साथ सुन्दर एवं स्पष्ट लिखना।
- सुनकर तथा पढ़कर विचारों को ग्रहण करना।
- विभिन्न प्रकार के संदर्भो में व्याकरण का उचित प्रयोग करना।

भाषा के चार महत्वपूर्ण कौशल, सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना है। किसी भी प्रभावी भाषा अधिगम के संदर्भ में इनकी दक्षता प्राप्त करना अनिवार्य होता है। इस रूप में यह चारों मूलभूत कौशल एक-दूसरे से संबद्ध है।

शिक्षकों के लिए सुझाव

1. लगी हुई पाठ्यपुस्तकों को प्रयुक्त करते समय शिक्षकों को सचेत विषय वस्तु तथा उदाहरणों को इस प्रकार संशोधित या परिवर्तित करना पड़ेगा जिससे (क) जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं का योगदान उभर सके। और (ख) परिवार बाजार तथा निर्णय लेने में और सरकार बनाने में पारस्परिक मान और निर्भरता स्त्री-पुरुष चरित्रों के बीच में प्रदर्शित की जाए।

2. शिक्षक लिंगाधारित ऐसी भाषा का उपयोग नहीं करेंगे। जिससे स्त्री या पुरुष की मर्यादा का अपहरण होता है।

3. शिक्षक भाषा का प्रयोग करेंगे जिससे पारस्परिक सम्मान, प्रतिष्ठा सहयोग और साझेदारी की परिस्थितियां उत्पन्न हो सकें।

4. शिक्षक ऐसी उन क्रियाकलापों को बढ़ावा देंगे जिसमें लड़के-लड़कियां स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचार स्पष्ट कर सकें।

वार्तालाप

1. बालक-बालिकाओं को उनके अपने अनुभव बताने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। यह अनुभव उनके पारिवारिक और स्कूली क्रियाकलापों पर आधारित हो।

2. उपयुक्त उदाहरणों से शिक्षक घर के काम में हाथ बंटाने के मूल्य और साथ-साथ खेलने और काम करने की उपयोगिता पर बल दें।

3. बालिकाओं को प्रोत्साहित करने के लिए और बालकों की इस स्थिति को स्वीकार करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिभावान महिलाओं के चित्र दिखाए जाएं।

4. बालिकाओं को बोलने और अन्य क्रियाओ मे भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करें जिससे आत्म सकोच दूर हो सके।

5. बालक-बालिकाओं को आपस में बातचीत करने को प्रेरित किया जाए और एक दूसरे के प्रति विनम्र व्यवहार को पनपाया जाए।

कहानी सुनाना

शिक्षक, बहादुर, विख्यात और प्रवीण महिलाओं की जीवंत कथाएं समाचार पत्रों, जीवनियों और सस्मरणों से सुनाएं और महिलाओं की ऋणात्मक स्थिति जिसमें उन्हें मूर्ख, भीरू या निकृष्ट दिखाया जाता है उसे नकारें।

मौखिक पठन

बालक-बालिकाओं को शुद्ध उच्चारण और व्यायाम के साथ उच्च स्तर में शुद्ध पाठ सिखाया जाना चाहिए जिससे भाषा का स्वर सामंजस्य के साथ उचित प्रयोग करना आ सके।

बोध परीक्षण

1. शिक्षक बालक और बालिकाओं दोनों से ही प्रश्न करेंगे और बालिकाओं से कठिन प्रश्न करना नहीं टालेंगे।
2. शिक्षक बालिकाओं को प्रश्न करने के लिए प्रोत्साहित करें।
3. शिक्षक इस बात पर विशेष ध्यान देंगे कि सब ही छात्र कुछ न कुछ बोले और अपनी अपनी बारी से बोलें।

भूमिका नाट्य

1. इस समय जिस प्रकार श्रम विभाजन परिवार में चल रहा है उसे नाट्य प्रक्रिया में बालकों को पुरुष और बालिकाओं को महिला भूमिका निभाने को कहा जाये और फिर पूछा जाये कि घर के काम का अधिकतर बोझ किस पर आता है और क्या यह सही है कि महिलायें व लड़कियां ही इस काम में जुटी रहें या फिर बालक और पुरुष भी हाथ बटायें।

2. बालक-बालिकाओं से कुछ काल्पनिक स्थितियों में सक्रिय भूमिका निभाने की नाटिका कराई जाए जैसे कोई प्राकृतिक अथवा रेल/सड़क दुर्घटना, डकैती, छूत की बीमारी या अन्य संकट की स्थिति में, वह क्या-क्या कर सकते हैं।



पढ़ने की आदत

शिक्षक बच्चों को अच्छी पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें और नेशनल बुक ट्रस्ट की "रीडर्स क्लब" और एन.सी.ई.आर.टी. की एक रूपये वाली सीरीज आदि बाल साहित्य से उनको परिचित करायें। शिक्षक हास्य-व्यंग साहित्य और प्रसार माध्यम के दुष्प्रभाव को नकारे जिनके द्वारा पुरुष आक्रामक, शक्तिशाली, उन्नत (सुपरमैन) छवि में और लड़कियों को इसके विपरीत मूर्ख, बेमतलब हंसने वाली और हास्यप्रद और पुरुषों की मैली छाया की तरह बेकार स्वरूप में दर्शाया जाता है और बच्चों में संवेदनशीलता, सक्रियता और निष्ठा को पनपायें।

पढने का क्लब



जनवरी 1994

नोट : यह जानकारी प्राप्त करने के लिए कि रीडर्स क्लब कैसे शुरू किया जाएं, और.वह भी अपने स्थानीय आवास में शिक्षक नेशलन बुक ट्रस्ट, ग्रीन पाक्र, नई दिल्ली से सम्पर्क करें।

कविता पाठ व सम्मिलित स्वरों से गायन

शिक्षक कविता और गायन जैसी विधाओं का अपनी-अपनी दक्षतानुसार उपयोग कर सकते हैं। बालिका शिक्षा और महिला समानता के विषयों पे कविता गीत आदि रच सकते हैं जैसे नीचे दिया गया गीत जो राजस्थान के एक लोकप्रिय गीत की धुन पर रचा गया। वह लोक गीत है पल्लू लटके, गौरी का पल्लू लटके।

बिटिया बोले

चली पढ़ने ओ मैं तो चली पढने
ओ अम्मा ले दे कॉपी किताब
मैं तो चली पढ़ने, ले दे कलम दवात
मैं तो चली पढ़ने, तो मैं तो चली पढने
लाडो चली पढने।

जो मैं पढ लूं और कुछ बन लूं
अपने पांव पे चल लूं, सही कदम लूं
आगे बढ़ लूं, अपनी राह बदल लू
धारी सेवा करूंगी दिन रात
मैं तो चली पढने, ओ अम्मा, ओ बापू
चली पढने, मैं तो चली पढ़ने
लाड़ो चली पढ़ने।

कायदे और कानून मैं पढ लू
लेबर सर्विस रूल मै पढ़ लूं
सब सखियों संग हिल-मिल बैठूं
सोचू और समझ लूं
फिर तो पूछूंगी सौ-सौ सवाल
मैं तो चली पढ़ने, लाड़ो चली पढ़ने।

भईया मेले मौज मनाये और बापू सग जायें
मेरे हिस्से झाडू बूंहारी और यह चार दिवारी
मैं भी साईकल लूंगी इस बार सुना जी
चली पढ़ने, मैं तो चली पढ़ने,
लाड़ो चली पढ़ने ।

भईया बन गये खेल-खिलाड़ी, मै खिड़की से झांकू
उसके हाथ में बैट-बॉल और मैं तो बिट-बिट तांकू
अब तो लेदो मुझे भी फुटबाल, मैं चली पढ़ने
लो मैं तो चली पढ़ने, लाडो चली पढ़ने।

भईया पाते दूध मलाई और मक्खन का पेढ़ा
थारी जाई अब हक मांगे, यह सवाल है टेढ़ा
अब न सिर्फ पियूंगी मैं छाछ, मैं चली पढ़ने
लो मैं तो चली पढ़ने, लाडो चली पढ़ने।।

पक्षी-पत्ते, चॉद-सितारे, सब है मेरे साथी
आसमान पे उड़ना है, बस यही है मन में ठानी
मुझे करने हैं पर्वत पार, औ अम्मा ले दे कॉपी किताब
मैं तो चली पढ़ने, लाडो चली पढ़ने।।

-: ऊषा नैय्यरः-

क्यूं-क्यूं छोरी



"पर क्यूं?"

छोटी-सी लड़की थी वह, करीब दस साल की। एक बड़े से सांप को पीछा कर रही थी। मैं उसके पीछे भागी, उसकी चोटियां पकड़ घसीट कर लायी, उस पर चिल्लायी, "ना, मोइना, ना!"

"क्यूं?" उसने पूछा।

"वो कोई धामन–वामन नहीं है, नाग है, नाग!"

"तो नाग को क्यूं न पकडूं?"

"क्यूं पकड़ो?"

"पता है हम सांप खाते हैं। मुंडी काट दो, चमड़ा बेच दो, मांस पका लो।"

"नहीं, इस बार नहीं।"

"हां, हां करूंगी।"

"पर क्यूं?"

मैं उसे समिति के आफिस तक घसीट कर लायी। वहां उसकी मां खीरी एक टोकरी बुन रही थी।

"चलो थोड़ा आराम कर लो," मैंने कहा।

"क्यों"

"क्यों नहीं? थकी नहीं हो क्या?"

मोइना ने सिर हिलाया। "बाबू की बकरियां कौन घर लायेगा? और लकड़ी लाना, पानी लाना, चिड़िया पकडने का फंदा लगाना, ये कौन करेगा?"

खीरी ने कहा, "बाबू ने जो चावल भेजा है, उसके लिये उसे धन्यवाद देना न भूलना।"

"क्यूं? क्यूं दूं धन्यवाद उसे? उसकी गोशाला धोती हूं, हजारों काम करती हूं उसके लिये। कभी धन्यवाद देता है मुझे? मैं क्यूं उसे धन्यवाद दूं?"

मोइना अपने काम पर भाग गयी। खीरी सिर हिलाती रह गयी। "ऐसा बच्चा नहीं देखा कभी। बस कहती रहती है "क्यूं? क्यूं?" – गांव के पोस्टमास्टर ने तो उसे 'क्यूं-क्यूं छोरी' का नाम दे रखा है।"

"मुझे तो अच्छी लगती है मोइना।" "इतनी जिद्दी है कि एक बात पकड़ ले तो उससे हटती नहीं।"

मोइना आदिवासी लड़की थी, शबर जाति की। शबर लोग गरीब और भूमिहीन थे। पर

बाकी शबर लोग कभी शिकायत करते सुनाई नहीं देते थे, सिर्फ मोइना ही थी जो सवाल पर सवाल करे जाती।

"क्यू मुझे मीलों चलना पडता है नदी से पानी लाने के लिए? क्यूं रहते हैं हम पत्तों की झोपडी में? हम दिन में दो बार चावल क्यों नहीं खा सकते?"

मोइना गांव के बाबुओं की बकरिया चराने का काम करती, पर न तो वह अपने आप को दीन-हीन समझती, न ही मालिकों का अहसान मानती। वह अपना काम करती, घर आ जाती, और बुदबुदाती रहती, "क्यो उनका बचा-खुचा खाऊं मैं?" मैं तो बढ़िया खाना बनाऊंगी शाम को – हरे पत्ते और चावल और केंकडे और मिर्ची वाला – और सारे घर वालों के साथ बैठ कर खाऊंगी।"

वैसे शबर लोग आम तौर पर अपनी लड़कियों को काम पर नहीं भेजते हैं। पर मोइना की मां एक पैर से लंगड़ाती थी। वह ज्यादा चल फिर नहीं सकती थी। उसके पिता जमशेदपुर काम की तलाश में गये हुए थे और उसका भाई गोरो जलाऊ लकड़ी लाने जंगल जाता था। सो मोइना को भी काम पर जाना पडता था।

उस अक्तूबर मैं समिति के वहां पूरा एक माह रूकी। एक सुबह मोइना ने घोषणा की कि वह समिति वाली झोपड़ी में मेरे साथ रहेगी।

"बिल्कुल नहीं," खीरी ने कहा।

"क्यों नहीं, इतनी बड़ी झोपड़ी है। एक बुढ़िया को कितनी जगह चाहिये?

"तुम्हारे काम का क्या होगा?"

"काम के बाद आया करूंगी।"

"और वह एक जोडी कपडे और एक नेवले का बच्चा लिये आ पहुंची। "ये बस जरा सा खाना खाता है और बुरे सांपों को दूर भगा आता है," उसने कहा। "अच्छे वाले सांपों को मैं पकड़ कर मां को दे देती हूं। क्या बढ़िया तरी वाला सांप बनाती है मां। तुम्हारे लिये भी थोड़ा लाऊंगी।"

हमारी समिति की शिक्षिका मालती बोनाल ने मुझ से कहा, "आप तो तंग आ जायेंगी इसकी क्यूं-क्यू सुनते हुए।" और वाकई, वह अक्तूबर ऐसा बीता कि पूछो मत! क्यों मुझे बाबू की बकरियां चरानी पड़ती हैं? उसके लड़के खुद ही कर सकते हैं। मछलियां बोल क्यों नहीं पातीं? अगर कई सारे तारे सूरज से भी बड़े हैं तो वो इतने छोटे क्यों नजर आते हैं?"

"और हर रात को : "तुम सोने के पहले किताबें क्यों पढ़ती हो?"

"क्योंकि किताबों में तुम्हारी क्यूं-क्यू के जवाब मिलते हैं।"

इस एक बार मोइना चुप रही। उसने कमरा ठीक-ठाक किया, रंगन के फूलों वाले झाड़

को पानी दिया, नेवले को मछली दी। फिर उसने कहा, "मैं पढ़ना सीखूंगी और अपने सारे सवालों के जवाब ढूंढ निकालूंगी।"

जो-जो वह मुझसे सीखती, वह बकरियां चराते समय दूसरे बच्चों को बताती। "कई तारे तो सूरज से भी बडे हैं। सूरज पास है इसलिए बड़ा दिखता है... मछलियां हमारी तरह बातें नहीं करती। मछलियों की अपनी भाषा है जो सुनाई नहीं देती ... तुम्हें पता है, पृथ्वी गोल है।"

एक साल बाद जब मैं उस गांव में दुबारा पहुंची, तो सबसे पहले सुनाई दी मोइना की आवाज। "स्कूल क्यों बंद है?" समिति के स्कूल के अंदर एक मिमियाती बकरी को अपने साथ घसीटते हुए उसने मालती को ललकारा।

"क्या मतलब है तुम्हारा 'क्यों बंद है'?"

"मैं भी क्यूं न पढ़ूं।"

"तो तुम्हें रोक कौन रहा है?"

"पर कोई कक्षा ही नहीं लगी।"

"स्कूल पूरा जो हो चुका।"

"क्यूं?"

"तुम जानती हो मोइना, मैं सुबह नौ से ग्यारह बजे तक कक्षा लगाती हैं।"

मोइना ने पांव पटक कर कहा, "तुम समय बदल क्यो नहीं सकती? मुझे बाबू की बकरियां चरानी होती हैं सुबह! मैं तो सिर्फ ग्यारह बजे के बाद ही आ सकती हूं। तुम पढ़ाओगी नही तो मैं सीखूंगी कहां से? मैं बूढ़ी मां को बता दूंगी कि बकरी चराने वाले या गाय चराने वाले, हम मे से कोई भी नहीं आ सकेगा अगर स्कूल का समय नहीं बदला तो।

तभी उसने मुझे देखा और बकरी ले भाग खड़ी हुई।

शाम को मैं मोइना की झोपडी पर गई। चौके की अगार के पास मजे से बैठी मोइना अपनी छोटी बहन और बडे भाई को बता रही थी, "एक पेड़ काटो तो दो पेड़ और लगाओ। खाने के पहले हाथ धो, जानते हो क्यों? पेट दर्द हो जायेगा अगर नहीं धोओगे तो। तुम कुछ नहीं जानते – जानते हो क्यों? क्योंकि तुम समिति की कक्षा में नहीं जाते।"

तुम्हें क्या लगता है, गांव में जब प्राइमरी स्कूल खुला तो उसमें दाखिल होने वाली पहली

लडकी कौन थी?

मोइना।

मोइना अब अठारह साल की है। वह समिति के स्कूल में पढ़ाती है। अगर तुम उसके स्कूल के पास से गुजरो तो निश्चित ही तुम्हें उसकी बेचैन आवाज सुनाई देगी।

"आलस मत करो। सवाल करो मुझसे। पूछो, क्यों मच्छरों को खत्म करना चाहिये ... क्यों ध्रुव तारा हमेशा उत्तरी आकाश में ही रहता है।"

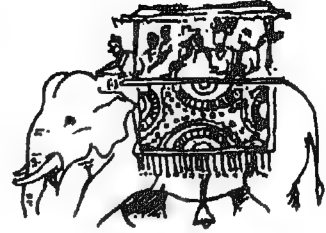
और दूसरे बच्चे भी अब सीख रहे हैं पूछना – "क्यों?"

वैसे मोइना को पता नहीं है कि मैं उसकी कहानी लिख रही हूं। अगर उसे बताया जाये तो कहेगी, "क्यूं? मेरे बारे में? क्यूं?"

- महाश्वेता देवी



साहसी लड़की



कुछ बच्चे हाथी पर बैठे जा रहे थे। हाथी सजा-धजा था।
वह झूम-झूम कर चल रहा था। मैने भैया से कहा--
भैया मैं हाथी पर बैठूँगी।
भैया बोले-- छुटकी, तुझे पता है, ये साहसी बच्चे है।
इन्हें इनके साहस के लिए पुरस्कार मिला है।

इतने छोटे-छोटे बच्चे! इन्होंने ऐसा कौन-सा साहस का कार्य किया होगा? मैने भैया से पूछा।

वे बताने लगे-देखो उधर, वह दुबली-सी लडकी है, साँवलें रंग की। उसका नाम सयाल है। गुजरात में एक गाँव है – बरहाटा। सयाल उसी गाँव की रहने वाली है। बहुत मेहनती लडकी है। अपने माँ-बाप की प्यारी बेटी है। वह उनके हर काम में मदद करती है।

एक दिन सयाल ढोर चराने जंगल में गई। पेड के नीचे बैठी थी। अनजान जगह थी। तभी उसने एक जोर की चीख सुनी। कोई चि्ल्ला रहा था- बचाओ-बचाओ। वे लम्बे-लम्बे डग भरती उधर ही दौड़ पडी।



उसने देखा- अरे! यह तो मेरी सहेली निर्मला है। इसे तो अजगर लपेट रहा है। इतना मोटा अजगर। निर्मला की तो हड्डी-पसली ही टूट जाएगी। सयाल काँप उठी।

तभी अजगर गुस्से से फुफकारा। वह इसे अनदेखी नहीं कर सकी। सयाल डरी नहीं। उसने एक ज़ोर की लाठी अजगर पर दे मारी। अजगर फिर जोर से फुफकारा। सयाल ने फुर्ती से अजगर का मुंह पकड़ लिया। वह उसका जबड़ा खोलने लगी।

अरे, यह तुझे डस लेगा, सयाल डर से काँपते हुए निर्मला बोली।

यह कुछ नहीं कर सकता निर्मला। इसका तो मैं जबड़ा फाड़ कर ही रहूंगी। सयाल ने दाँत भींचे और जोर लगाया। उसके हाथों से खून बहने लगा। माथे पर पसीना आ गया। आखिर उसने अजगर के जबड़े फाड़ ही दिए। अजगर की कुण्डली ढीली पड़ गई।

सयाल चिल्लाई झटका दे, निर्मला। निर्मला ने वैसा ही किया। वह कुण्डली से दूर जा गिरी।

भाग जा निर्मला....भाग जा। सयाल बोली। तभी अजगर ने सयाल पर हमला कर दिया। सयाल औंधे मुँह गिर पड़ी। अजगर ने सयाल को कुण्डली में लपेट लिया। निर्मला ने सोचा-कहीं अनहोनी न हो जाए। वह चिल्लाई-सयाल....सयाल।

भाग जा निर्मला....भाग जा – अजगर की कुण्डली में लिपटी सयाल बोली।

लेकिन निर्मला भागी नहीं। उसने सयाल की लाठी उठा ली। उसे अजगर पर पूरी शक्ति से दे मारा। अजगर चोट खाकर ढीला पड़ा। इससे सयाल को अवसर मिल गया। उसने अजगर को पूरी शक्ति से झटका दिया। घायल अजगर की पकड ढीली तो थी ही। सयाल अजगर की कुण्डली से छूट गई। वह दूर जा खड़ी हुई।

निर्मला ने सयाल का हाथ पकड़ा। दोनों घर की ओर दौड पड़ीं। घर पहुंचकर ही उन्होंने दम लिया।

लोगों ने सयाल की बहुत प्रशंसा की। वही सयाल आज हाथी पर बैठी है।

सब लोग ताली बजा रहे थे। मैंने देखा साहसी बच्चों को पुरस्कार दिए जा रहे हैं। सयाल का नाम भी पुकारा गया। मैंने सोचा - मैं भी साहसी बनूंगी सयाल की तरह साहसी।

जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में महिलाओं के योगदान पर आधारित कहानियाँ और समाचार-पत्र संवाद

समाचार-पत्र संवाद

1. पूना शहर के नानापेठ क्षेत्र में शकुन्तला परदेसी एक ऐसी कार्यशाला चलाती है जहां लोहा जोडने व अन्य मशीनों के मरम्मत का काम होता है। वह बालपन से ही मशीनों की मरम्मत में रुचि लेती रही है। लघु उद्योगों में उनके प्रशिक्षित नौसीखिये की भारी मांग है क्योंकि वे ऊँचे स्तर की आवश्यक दक्षताएं उन्हें सिखाती है।

2. आकाश से गोता लगाना साहसी कार्य है। महाराष्ट्र की रविबाला काकातिकर उच्च्य कोटि की आकाश-गोताखोर हैं। वह हवाई छतरी से छलांग भी लगा सकती हैं।

3. भारतीय एयर लाइन्स ने अपनी कलकत्ता-सिल्चर चीन यात्रा पूरी तौर से सौदामनी देशमुख और निवेदिता भसीन महिला यान चालकों को सौंप दी हैं। दोनों ही पिछले कई वर्षों से हवाई जहाज़ उड़ा रही हैं। उनसे पूर्व कप्तान श्रीमती बनर्जी को उच्च्य कोटि का चालक माना जाता था । यह महिलाएं अब बड़े यानों की चालक बनने की उत्सुक हैं।

4. 1984 में नवयौवना बछेन्द्री पाल ने एवरेस्ट पर्वत पर चढ़ाई की। उनसे पूर्व केवल तीन महिलाओं ने यह श्रेय प्राप्त किया था। बछेन्द्री संस्कृत में एम. ए. पास है। पहाड़ पर चढ़ना उनका मनोरंजन है। उनके एवरेस्ट अभियान में सब महिलाएं ही थीं।

5. भारत के अधिकांश अभियानों में 1983 से अदितिपंत समुद्र वैज्ञानिक एक सदस्य रही है। अदिति ने जीवविज्ञान में पूना विश्वविद्यालय से स्नातक और उत्तर स्नातक व डाक्टरेट की उपाधि लंदन विश्वविद्यालय से प्राप्त की । वह राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान की एक शोध कर्मी हैं। यह अंटार्कटिका को उनका तीसरा अभियान था।

सच्ची कहानियां

1. सरोजिनी नायडू महात्मा गाँधी की अनुयायी थीं। उन्होने लगभग 30 वर्ष भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया। स्वतंत्रता संग्राम में उन्हें जेल भोगना पड़ा। सरोजनी नायडू एक विख्यात थीं। बंगाली, अंग्रेजी, उर्दू और फ़ारसी पर उन्हें प्रवीणता प्राप्त थी। उनकी लिखी कविताएं अंग्रेजी साहित्य की विशेष देने मानी जाती हैं। वह उत्कृष्ट

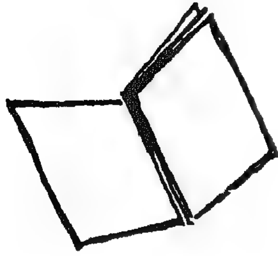
प्रवक्ता भी थीं। वह बहुत धनाढ्य परिवार की सदस्या थीं, किन्तु देश की आजादी के संग्राम में उन्होंने सब कुछ तज दिया और देश सेवा में जुट गईं।

2. मुगलकाल में आजादी के लिए महाराष्ट्र में शिवाजी महाराज ने संघर्ष किया। कूटनीति में उनकी माँ जीजाबाई ने उन्हें प्रशिक्षित किया। उन्होंने शिवाजी को अच्छा प्रशासक और शासक होना भी सिखाया।

3. रानी लक्ष्मी बाई ने अंग्रेजो से चोट ली और भारत की आजादी की मशाल को रोशन किया। वह झांसी नामक राज्य की महारानी थी। उन्होने अपनी सेना के लिए महिलाओं की एक टुकड़ी संगठित की। यह टुकड़ी पुरुषों के सेना दल से अधिक बहादुर और निष्ठावान थी। झांसी की रानी की वीरता की कहानियां पूरे देश में व्याप्त हैं।

4. आज के बहुत पहले सावित्री बाई फूले पूणे में पहली महिला शिक्षक बनी। रुढ़िवादी लोगों की भयंकर आलोचना के बावजूद उन्होंने बालिकाओं के लिए स्कूल प्रारम्भ किए। इसका विरोध करने वालों ने उन्हें तंग किया उन पर पत्थर बरसाये और हद तो यह कि उनको मारा-पीटा। किन्तु उन्होंने अपना प्रयास जारी रखा और महाराष्ट्र में बालिका शिक्षा की नींव डाली। आज भी उनका नाम घर-घर में लिया जाता है।





मुझे पढ़ना है

बाप - बेटी से : पढ़ना है! पढ़ना है! क्यों पढ़ना है?
पढ़ने को बेटे काफी है, तुम्हें क्यों पढ़ना है?

बेटी - बाप से : जब पूछा ही है तो सुनो
मुझे क्यों पढ़ना है!
क्योंकि मैं लड़की हूँ
मुझे पढ़ना है!
सपनों ने ली अंगडाई है सो पढ़ना है!
कुछ करने की मन में आई है सो पढ़ना है!
क्योंकि मैं लड़की हूं मुझे पढ़ना है!
मुझे दर-दर नहीं भटकना है सो पढ़ना है!
मुझे अपने पॉवों चलना है सो पढ़ना है!
मुझे अपने डर से लड़ना है सो पढ़ना है!
क्योंकि मैं लडकी हूँ मुझे पढ़ना है!
कई ज़ोर जुल्म से बचना है सो पढ़ना है!
कई कानूनों को परखना है पढ़ना है!
क्योंकि मैं लड़की हूँ मुझे पढ़ना है!
मीरा का गीत, गाना है सो पढ़ना है!
क्योंकि मैं लडकी हूँ मुझे पढना है!



(दिल्ली साक्षरता समिति का गीत)

गणित

प्राथमिक स्तर पर गणित शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य यह है कि बालकों में सही रूप से गणनीय क्षमता उत्पन्न हो सके जिससे वह परिवार व समुदाय के दैनिक क्रियाकलापो में भागीदार हो सके। चूंकि गणित सीखने से बालक तत्कालिक स्थितियों से उत्पन्न संकल्पनाओं को समझ सकते हैं। इसलिए उन्हें पुरुष और महिलाओं की बराबरी की हिस्सेदारी प्रत्येक जीवन क्षेत्र में समझाई जा सकती है जिससे श्रम और संसाधन में भागीदारी क़ी समरूपकता वाली अभिवृत्ति का सूत्रपात हो सकता है।

शिक्षकों के लिए सुझाव

शिक्षक गणित प्रशिक्षण करते समय निम्नांकित विचारों को समविष्ट करेंगेः

1. घरेलू काम काज उतने ही उत्पादक कृत्य हैं जितने कि बाहर वाले और वे परिवार के सभी सदस्यों की साझेदारी में जिम्मेवारी है।
2. जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में किए गए हर काम की गरिमा को समय, श्रम शक्ति के आंकलन द्वारा सिखाया जाना चाहिए।
3. जीवन के हर क्षेत्र मे बढ़ता हुआ महिलाओं का योगदान स्पष्ट किया जाना चाहिए साथ ही यह भी सिखाया जाना चाहिए कि यदि यह योगदान नहीं होगा तो श्रम का ह्रास होगा।
4. गणित शिक्षा से तार्किक शक्ति को बढावा मिलना चाहिए जिससे शिक्षार्थी दहेज प्रथा व वधुधन की बुराइयों को तोल सकें और परिवार कल्याण के दृष्टिकोण से छोटे परिवार के मूल्य को समझ सकें।

अंक सिखाना

इस क्रिया कलाप का मतलब यह होता है कि पहली कक्षा में छात्रों को 1 से 10 तक के अंकों को सिखाना।



5. गणित शिक्षण के द्वारा लड़के और लड़कियों में निर्णय लेने की क्षमता बराबर-बराबर सिखाई जाए।

6. बराबर अवसर के संदर्भ में आंकडों द्वारा इस बात को सुझाया जाए कि महिलाएं बराबरी से जिम्मेदारियां उठा सकती हैं।

7. दहेज, मृत्यु संस्कार जैसी सामाजिक कुरीतियों से निग्रह पाने के लिए इन कामों पर किए गए अपव्यय को अंक गणित के माध्यम से सुझाना ।

8. सोने, चांदी तथा अन्य कीमती वस्तुओं के प्रति प्रलोभन की भावना को बहुत कम करना था इस प्रकार के व्यवहार को बढ़ावा देना जहां बैंक में अल्पराशि बचत योजना अपनाई जाए।

9. इस स्थिति को समझना जिसमें प्रत्येक जनगणना में महिलाओं की जनसंख्या पुरुषों की संख्या से घटती जाती रही है। प्रारम्भिक स्तर के बालक इस तथ्य को साधारण 'अंकगणित' द्वारा समझ लेंगे।

कक्षा 2

जोड़, घटा, गुणा, भाग :

1. निम्नांकित प्रकार की प्रश्नावली से शिक्षक इस बिन्दु को उभार सकते हैं कि यदि परिवार में सब लोग काम में हाथ नहीं बंटाते तो एक व्यक्ति पर कितना बोझ पड़ता है। जैसे–

   (क) अरुणा आठ घण्टे दफतर में काम करती है। सारे दिन में वे तीन घण्टे खाना बनाने पर व्यय करती है। वह एक दिन में कितने घंटे काम करती है?

(ख) अंशुला के माता-पिता एक घंटा पैंतालीस मिनट मिलजुल कर घर में काम करते हैं। उनमें अंशुला पैंतालीस मिनट अपने सवाल हल करना सीखती हैं। उसे माता-पिता को कितना समय घर पर काम करने में खर्च करना पड़ता है?

2. जिम्मेवारियों को बांटने से किस प्रकार पारिवारिक संसाधन बढ़ जाते हैं। बालकों को इसका विवेचन किया जा सकता है, कैसे? जैसे –

(क) रशीदा की माँ रु० 80/- प्रति माह झाड़ू पोचे के लिए मौसमी को देती है। और फिर उसी को रु. 20/- प्रतिमाह कपड़ों पर स्त्री करने के देती है। रशीदा रु० 20/- महीना बचाना चाहती है। वह क्या करे?

(ख) एक तालिका बनाइये जिसमें बताइये कि प्रतिदिन परिवार का प्रत्येक सदस्य क्या काम करता है और कितने समय तक करता है। फिर पता कीजिए कि कौन ज्यादा काम करता है और कितना अधिक।

3. शिक्षक महिलाओं का जीवन के सब क्षेत्रों में बढ़ता हुआ योगदान निम्नांकित प्रश्नों के द्वारा सुझा सकते हैं।

(क) फ़िरोज एक विक्रेता है। उनकी बेटी सुषमा ने सोमवार को उनकी मदद की और आमदनी रु० 982/- हुई। सुषमा के भाई यतीन ने उनकी बुध को सहायता की और आमदनी रु० 879/- हुई। बच्चों की सहायता से उनकी इन दो दिनों में कितनी आय हुई।

(ख) एक गाड़ियों की वर्कशाप में 80 पुरुष और 31 महिला कार्य-कर्मी हैं। यदि मैनेजर एक महिला और एक पुरुष की टीम बनाना चाहे तो कितने पुरुष टीम बनाने से रह जायेंगे?

(ग) रामू और बिमला की एक बिसाती की दुकान है। बिमला 90037 मोती खरीदती है और उनमें से रामू 90 मोती वाली मालाएं बनाता है। हर माला में एक पैन्डेन्ट होगा। कितने पैन्डेन्ट खरीदने होंगे रामू के पास कितने मोती बचेंगे?

(घ) पुष्पा ने स्कूल से रिटायर होने पर अपने दोनों बेटों और बेटी को बराबर-बराबर 9325/- रु० दिये। 5000/- रुपये उन्होने निश्चित समय के लिए अपने नाम से जमा कर दिए। पुष्पा को रिटायर होने के समय कुछ कितने रूपये मिले थे?

कक्षा 3

जीवन के हर क्षेत्र में लडकियों की बढती हुई साझेदारी को शिक्षक निम्नलिखित प्रकार के उदाहरणों से उजागर कर सकते हैं :

(क) स्कूल में लड़कों ने रु० 2,800/-- और लडकियों ने रु. 3,210/-- "संचायिका" (लघु बचत) के लिए जमा किए। लड़कियों के योगदान के बराबर पहुंचने के लिए लड़कों को कितनी राशि और जमा करना है।

(ख) रमेश और **कैथरीन** अपनी मां की मदद पर प्रतिदिन ढाई घण्टे खर्च करते हैं। यदि महीना 28 दिन का हो तो दोनों ने मिलकर कितने घण्टे मां की मदद की?

(ग) कक्षा में 12 बालिकाएं और 24 बालक हैं शिक्षक कुल 9 खिलाड़ियों की कबड्डी टीम बनाना चाहते हैं जिनमें पांच लड़कें और चार लड़कियां हों। कितनी टीम बनेगी, कितने विद्यार्थी बच जाएंगे?

(घ) अल्पना ने 12/- के भाव से सूरजकुण्ड मेले से पांच खिलौने हाथी खरीदे। वह प्रत्येक को रु० 23 और 50 पैसे में बेचती है। वह कितना लाभ प्राप्त करती है?

कक्षा 4

मुद्रा, मैटर के माप, पूर्णांक :

5. महिलाओं की गृहस्थी प्रबन्धक भूमिका को उजागर करने के लिए और संकट उन्मूलन में उनके योगदान को समझाने के लिए शिक्षक बालकों के साथ वास्तविकता की रचना करे फिर निराकारी स्थितियों के प्रश्न हल कराएं। भारतीय मुद्रा मीटर माप और पूर्णाक का प्रयोग पाठ्यक्रम के अनुसार चलेगा। कुछ उदाहरणार्थ प्रश्नावली नीचे दी गई है :

(क) नीलम को प्रति माह हाथ खर्च के लिए रु. 2000/- मिलते हैं। रेखा (10 वर्ष) और टिंकू (5 वर्ष) उसके दो बच्चे हैं। वह रू. 1200/- खाने पर व्यय करती है तो कपडों और शिक्षा और अन्य खर्चों के लिए क्या बचता है।

(ख) दीपिका ने माह के आरम्भ में 2 किलो और 500 ग्राम घी खरीदा। महीने के अंत में उसके पास 125 ग्राम बचा। महीने में उसने कितना खर्च किया।

(ग) 1981 की जनगणना के अनुसार भारत की महिलाओं की संख्या 318,244,919 थी जिसमें से केवल 78,942,915 साक्षर थीं। वर्ष 1981 में निरक्षर महिलाओ की संख्या बताइये?

कक्षा 5

अंक तथा अंकीय व्यवस्था :

बालिका की आत्मछवि के विकास पर महिला निरक्षरता का बहुत बुरा प्रभाव पडता है। स्कूल में पढ़ने वालें बालकों को यह अनुमान लगाना कठिन होता है कि माताओं के निरक्षर होने से बालक-बालिकाओं का विकास कितना अवरुद्ध हो जाता है। इसी प्रकार परिवार की आर्थिक व्यवस्था पर जल्दी विवाह, दहेज और मृत्यु पर विघटनकारी अपव्यय का भी असर पडता हैं। नीचे बनी जैसी तालिकाएं समस्याओं को उजागर करने में सहायक होती है। इन समस्याओं को सुलझाने के समाधान खोज-बीन वाले प्रश्नों की सहायता से ढुंढवाए जाएं जिससे वस्तुस्थिति से निर्गुण तथ्यों की तरफ, मस्तिष्क विकसित हो सके और वह भी इस परिस्थिति में जिसमें परिवर्तन के लिए साझेदारी हो जिसमें सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन संभव हो।

(अ) निम्नांकित तालिका में 15-24 आयु वर्ग के 1961 और 1971 के साक्षर पुरुष और महिला संख्या का निरूपण है।

	1961		1971	
क्षेत्र	साक्षर लोगों की संख्या		साक्षर लोगों की संख्या	
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
देहाती	12515727	4142795	19492761	8316906
शहरी	6221799	3451150	9585889	6255373
कुल	18737526	7593945	29078650	14572279

1. 1961 में पूरे साक्षर पुरुषों की संख्या
2. 1961 में पूरे साक्षर महिला की संख्या
3. 1971 में पूरे साक्षर पुरुषों की संख्या
4. 1971 में पूरे साक्षर महिलाओं की संख्या
5. 1961 में भारत में कुल साक्षरों की संख्या
6. 1971 में भारत में कुल साक्षरों की संख्या
7. 1971 में 1961 की अपेक्षा कितने अधिक देहाती साक्षर थे
8. 1971 में 1961 की अपेक्षा कितने अधिक शहरी साक्षर थे
9. 1961 में महिलाओं की अपेक्षा कितने पुरुष साक्षर थे
10. 1971 में महिलाओं की अपेक्षा कितने अधिक पुरुष साक्षर थे
11. 1971 में 1961 की अपेक्षा कुल कितने महिला-पुरुष साक्षर थे

(ब) 1991 में कुल महिला जनसंख्या 406518417 थी जिसमें से केवल 131767519 महिलायें साक्षर थीं। निरक्षर महिलाओं की संख्या बताइये?

(स) यदि लक्ष्मी एक घंटा शाम को और 1/2 घंटा सुबह पढ़ाई में गृह कार्य करती है तो बताओं कि एक सप्ताह में वह कितना समय घर पर पढ़ती है?

(द) एक कक्षा की पिकनिक में 10 लड़कियां और 12 लड़के थे। हर छात्र को 50 ग्राम मिठाइयां दी गईं। बताइये कुल कितनी मिठाई बांटी गई?

(क) रेशमा के माता-पिता 2,550 रु. प्रतिमाह कमाते हैं और अलग-अलग मदों पर निम्नांकित ब्यौरे से खर्चते हैं :

शिक्षा	————	10%	————	रू.
कपड़े	————	15%	————	रू.
भोजन	————	30%	————	रू.
घर कर किराया	————	12%	————	रू.
अन्य	————	16%	————	रू.

(1) प्रतिमाह बचत प्रतिशत बताइये

(2) प्रत्येक मद का प्रतिशत निकालिये

(ख) सुषमा 10 महीने में रु. 750/- की सिलाई मशीन खरीदना चाहती है। उसकी मासिक आय केवल रु. 100/- है। इसकी आय का कितना प्रतिशत वह बचाएं कि अपनी अभिलाषा पूरी कर सके।

(ग) स्पोर्टस डे के लिए प्रत्येक बालिका को 0.75 मीटर रिबन चाहिए। 45 लड़कियों को कुल कितना रिबन चाहिए?

(घ) आशा ने एक छोटी वर्कशॉप स्थापित करने के लिए रू. 5,000/-उधार लिए। उसको प्रति वर्ष 9 पतिशत ब्याज देना था। यदि वह सारा पैसा पाँच वर्ष में वापस करने का निर्णय करे तो उसको कितना नकद धन चाहिए?

7. शिक्षकों को मालूम है कि महिलाओं का काम करने का समय पुरुषों के काम से अधिक होता है क्योंकि वह प्रत्येक दिन सबसे पहले ही से काम शुरू कर देती हैं और रात को जब सब परिवार आराम करने लगता है तब देर तक काम करती हैं। इस मेहनती जीवन के प्रति निष्ठा जगाने के लिए "समय-बजट" विधि अपनाई जाती है। शिक्षक विद्यार्थियों से एक दिन का कार्यक्रम निम्नांकित विधि से बनवा सकते हैं।

(क)

दिन समय	क्रियाकलाप	व्यय किया गया समय	कौन करता है	दूसरे लोग क्यों नहीं करते

विद्यार्थियों की सूची बनाकर प्रश्न किए जा सकते हैं।

(ख) सरोजनी ने 19500 ईंटे खरीदीं। एक कमरा बनवाने में उसने 6375 ईंटें लगाईं कितनी बची? उनका वह क्या करे?

(ग) प्रेमलता ने अपनी दो बेटियों और एक बेटे के लिए रु. 48,000/- छोड़े। सबको बराबर बांटा जाएगा तो प्रत्येक का हिस्सा कितना होगा? यदि प्रेमलता को बेटा न होता तो दोनों बेटियों का हिस्सा क्या होता

(घ) घरेलू अपव्यय को समाप्त करके सुमन की मां रु. 75/- प्रति माह बचाती है। उन्होंने 9 महीने में कितना बचाया? अल्प बचत का महत्व बताए। जो माताओं का चमत्कार है। यह तथ्य शिक्षक बालकों को समझा सकते हैं।

(ङ.) पारिवारिक कार्यों में हाथ बंटाने की कुछ ऐसी स्थितियां बनाइये जिसमें घटाना पड़े। इस तरह की प्रश्नावली जुटाने से बालकों में सृजनात्मक बुद्धि का विकास होता है विशेषकर जब जब वह दिन-प्रति-दिन के जीवन क्रम से संबद्ध हो।

(च) एक ऐसी तालिका बनाइये जिसमें प्रतिदिन आपके परिवार का प्रत्येक सदस्य कितने घण्टे काम करता है अंकित हो। फिर पता कीजिए कि कौन अधिक काम करता है और कितने घण्टे अधिक ?

कोई तालिका का प्रतिरूप न दें। बालक ग्रुप में बैठकर अपने-अपने प्रकार से तालिकाएं निर्मित करें।

8. समिधा और कृतिका एक पैट्रोल पम्प पर काम करती हैं। एक घण्टे में उनकी बिक्री :

खरीदार 1 = 10 लिटर
खरीदार 2 = 12 लिटर
खरीदार 3 = 15 लिटर
खरीदार 4 = 23 लिटर

यदि पैट्रोल रु. 15.60 पैसे प्रति लिटर बिक रहा है तो कुल बिक्री कितने रुपये की हुई ?

पर्यावरण अध्ययन

पर्यावरण के आमतौर पर दो मुख्य पक्ष हैं – प्रकृति और मानव। यह वर्गीकरण पर्यावरण के अध्ययन के पाठ्यक्रम के सामाजिक अध्ययन तथा विज्ञान की समन्वित इकाई के रूप में परिलक्षित होता है। पर्यावरण अध्यन का प्रमुख उद्देश्य यह है कि बच्चे सम्पूर्ण पर्यावरण को एक समन्वित इकाई के रूप में देखें। वे इसे मानव के परस्पर संबंध के कार्य की उपलब्धि, प्राकृतिक पर्यावरण तथा सामाजिक वस्तु के रूप में समझें। वे यह भी समझ सकें कि इसके विकास में उनकी साझेदारी आवश्यक भी है और एक कर्त्तव्य भी। बच्चों को समझाना है उनके शरीर की बनावट, वैयक्तिक स्वास्थ्य रक्षा, परिवार, उसका स्वभाव व आकृति और बालक के प्रति कर्तव्य, पालतू जानवरों के प्रति प्रेम, स्कूल, गांव, पंचायत, पौधे और जीव जन्तु, शरीर, आहार-स्वास्थ्य और सफाई, धरती, मिट्टी, पानी, वायु, उर्जा के स्रोत – ईंधन, गोबर और गैस। इसलिए शिक्षक को यह प्रयास करना होगा कि लड़के-लड़कियां अपने शारीरिक और सामाजिक कल्याण के प्रति सचेत हों जैसे जीवित रहने का अधिकार, विचार प्रकट करने का अधिकार, पारस्परिक संपर्क रखने की आजादी और एक दूसरे की मर्यादा निभाने का अधिकार।

हमारा शरीर

1. शारीरिक गुण तथा असमानताएं उत्कृष्टता तथा निकृष्टता की ओर इंगित नहीं करतीं।
2. आकार और वजन में असमानताएं वैयक्तित्व होती हैं और उनके कारक है आयु, लिंग,

वातावरण और अनुवंशिता। रंग व्यक्ति-व्यक्ति में अलग-अलग होता है और उसे वातावरण बदलता है। यह लक्षण किसी को ऊंचा और नीचा नहीं बनाता इन विभिन्नताओं से वैयक्तिकता प्रकट होती है। इससे अलग-अलग कार्य अलग-अलग क्षमता और कार्यक्षमता को अलग-अलग व्यक्तियों की ताकत पर आधारित होते बताएं।

3. लडके और लडकियों में मांसपेशियों और हड्डियों के ढांचे में अंतर होता है इससे केवल अलग-अलग कामों को करने की विशेष क्षमता मिलती है। एक घर को चलाने के लिए सामूहिक क्षमता की जरूरत होती है न कि वैयक्तिक। एक अंतर के कारण वे कोई विशेष काम अधिक कुशलतापूर्वक कर सकते हैं। लेकिन सब ही काम बराबर महत्वपूर्ण होते हैं।

4. किन्तु दोनों की लिग के व्यक्तियो के आवश्यक तंत्रो में एक समरूपता होती है जैसे श्वास प्रक्रिया, आहार, रुधिर संचालन, स्नायुतत्र इत्यादि।

हमारा शरीर—आहार और स्वास्थ्य

1 हड्डियों और मांसपेशियों के ढाचों में महिला और पुरुषों में एकता होती है। इसलिए आवश्यक आहार की दरकार भी एक सी ही होती है जिससे नर और नारी शरीर का विकास होता है।

2. लडकियों और लड़कों को एक से खेल खेलने के बराबर अवसर मिलने चाहिए।

3. परिवार के सदस्यो को उनकी आवश्यकता के अनुरूप भोजन मिलना चाहिए।

4. उपलब्ध आहार सदस्यो की वैयक्तिक आवश्यकता के अनुसार बांटा जाना चाहिए। महिलाओ को अपने हिस्से के भोजन से वंचित बालिकाओं, बढ़वार वाले बालक, बीमारों का आहार उपलब्ध सामग्री में से विशेष होने चाहिए।

भूरक्षण कैसे रोकें

1. अधिक चरवाहों को अवसर देना और बिना समझे पेड़ों को काट गिराना जैसी स्थितियों से उत्पन्न खतरे को उजागर करना चाहिए। ऐसे कामों के लिए पुरुष और महिलाओं को इस खतरे से परिचित होना चाहिए और वातावरण को सुरक्षित करने के उपाय दोनों

को ही सोचने चाहिए।

2. बालकों को एक साझे भूतल पर पौध उगाने और पशु पालने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

3. बालकों को कागज बनाने की विधि से सचेत होना चाहिए जिससे वे उसकी बर्बादी न होने दें।

परिवार (ढांचा और सदस्यों के कार्य)

1. प्रमुख कार्यों में नर-नारी में एक सी ही स्थिति होती है।

2. मिला-जुला दायित्व और बराबरी भागीदारी से एक सुखी परिवार का निर्माण होता है।

3. एक परिवार को एक इकाई के रूप में प्रदर्शित किया जाना चाहिए जिसमें तरह तरह के काम अलग-अलग लोग करते रहते हैं।

4. पुरुषों और महिलाओं की बराबरी की कार्य-कुशलता को उजागर करना चाहिए।

5. यह बात स्पष्टीकरण चाहती है कि ऊपर के कार्य विभाजन की प्रक्रिया कभी उलट पलट भी जाती है और पुरुष घर पर काम करते हैं और महिलाएं हाट-बाजार, खेत पर, फैक्ट्री और दफ्तर में काम। माँ तथा बहिने जो काम घर पर करती हैं उसके बराबर महत्त्व दिया जाना चाहिए उसी प्रकार जैसे उन कामों को जो पिता और बेटे बाहर करते हैं। भूमिकाएं आवश्यकता पड़ने पर बदलती रहती हैं। महिलाओं को अपने को कम महत्वपूर्ण नहीं समझना चाहिए क्योंकि वे घर का काम करती हैं। पुरुषों और लड़कों को घर में काम करना मर्यादा इतर नहीं लगना चाहिए।

6. यह समझते हुए कि घर एक सामूहिक जिम्मेदारी है यह भी सोचना चाहिए कि सब काम जो किए जाते हैं बराबर महत्त्व के काम हैं।

7. कपड़े धोना, बर्तन साफ करना लड़के-लड़कियों को मिलकर करना चाहिए। सफाई करना सिर्फ महिलाओं का काम नहीं। सफाई के काम घर पर महिलाएं करती हैं परन्तु रेस्तरां, सड़कों, बगीचों में और सार्वजनिक स्थलों पर पुरुष सफाई करते हैं। भूमिकाएं अवसर के अनुसार बदल जाती हैं।

8. पुरुष और महिलाओं दोनों को ही बराबरी से बगीचे और पशुओं की देखभाल करनी चाहिए।

9. परिवार और समुदाय में सबकी यह जिम्मेदारी है कि छूत की बीमारियों का नियंत्रण हो और उनके बढ़ने पर रोक लगाई जाए।

10. अक्सर पुरुष और महिलाएं छूत की बीमारियों के बारे में कुछ अंधविश्वास कर लेते हैं। वैज्ञानिक तथ्यों को समझा कर इस मूर्खता को दूर करना चाहिए। माता–पिता को उड़लगनी बीमारियों के अभिशाप को समझना चाहिए।

11. शिक्षक तस्वीरों और फिल्मों की सहायता से पुरुष और महिलाओं को एक ही प्रकार के काम करते दिखा सकते हैं।

12. शिक्षक बालकों से प्रश्न कर सकते हैं कि परिवार के सदस्य क्या-क्या करते हैं। शिक्षक छोटे एकल परिवार और बड़े संयुक्त परिवारों से उदाहरण लेकर परिवार के सदस्यों द्वारा किए गए कामों पर प्रकाश डाल सकते हैं।

13. बालक-बालिकाओं को जीवन के हर क्षेत्र में बराबर अवसर मिलना चाहिए और स्कूल में दोनों को सब काम करने के लिए लिंगाधारित पूर्वाग्रह से मुक्त करना चाहिए ठीक वैसे ही जैसे पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकों को।

14. कभी-कभी यह भी देखा जाता है कि लड़कियो को खेलकूद में भाग न देकर संगीत और नृत्य के कार्यक्रमों में हिस्सा दिया जाता है। कभी-कभी लडकियां भी कुछ प्रकार के खेलों और व्यायामों में भाग लेने से हिचकिचाती है। इस प्रकार के पूर्वाग्रह को दूर करने के लिए बालिकाओं को विशेष प्रकार से आकर्षित किया जाना चाहिए। खेल के मैदान में लड़के-लडकियों की मिली हुई टीम को बुलाना चाहिए। कक्षा में लड़के-लड़कियों को मिलाकर बैठाना चाहिए। स्टोव, गैस, बिजली के यंत्र और अन्य घरेलू यन्त्रों को बर्तन में सावधानी का पाठ सब बालकों को शिक्षकों द्वारा दिया जाना चाहिए।

15. शिक्षकों को चाहिए कि वे सब काम सबसे करवाएं जैसे पानी का गिलास लाना या कक्षा को साफ रखना।

स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा

स्वास्थ्य हर मनुष्य के जीवन की मूलभूत सम्पत्ति है। प्रत्येक बालक को स्वस्थ जीवन का अधिकार है। स्कूल में प्रायः यह देखा जाता है कि बालिकाओं को खेल-कूद में भाग लेने को तनिक भी प्रोत्साहित नहीं किया जाता। ऊपर से घर के क्रियाकलापों की साझेदारी बालिका में गलत मुद्रा की आदत डाल देती है जिससे अस्वस्थ ढांचा पनपता है। स्वस्थ होने का मतलब केवल यह नहीं कि हम बीमारी से दूर हों, बल्कि तात्पर्य यह है कि बालक-बालिकाएं शारीरिक शिक्षा द्वारा बच्चे का शरीर, उसके कार्यों, भोजन की आवश्यकता, आराम, व्यायाम, निद्रा, उचित आसन, व्यक्तिगत तथा परिवेश की स्वच्छता एवं पोषक भोजन के अभाव में होने वाले दुष्परिणामों के विषय में सचेत हों। यह सब तथ्य शिक्षकों को बालकों द्वारा माता-पिता तक पहुंचाना एक प्रक्रिया के रूप में अपनाना होगा। तब ही न परिवार का वातावरण सुधरेगा, विशेषकर बालिका के लाभार्थ।

स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा संबंधी क्रियाकलापों को संयोजित करते समय बच्चों में यह भाव उत्पन्न करना आवश्यक है कि पुरुष तथा नारी एक दूसरे के पूरक हैं और इस ओर उत्कृष्टता या निष्कृष्टता के विचार गलत वह व्यक्ति अपने आप में विशिष्ट होता है तथा उसमें कुछ खास गुण होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता का पूरा उपयोग करना चाहिए।

शारीरिक शिक्षा सिर्फ मजबूत शरीर बनाने की विधि ही नहीं बताती बल्कि साथ-साथ होड़ करना, मिलजुल कर काम करना, बर्दाश्त की सकत होना, कठिन मेहनत करना, खिलाड़ी, प्रवृत्ति को भी उभारती है। बालिकाओं में स्वस्थ आत्म छवि उभारने के लिए भी खेलों में भागीदारी आवश्यक है। यह बात बताना आवश्यक है कि लड़के-लड़कियों में कोई ऐसा अन्तर नही होता जिससे उनमें एक सी योग्यता और दक्षता उत्पन्न न की जा सके। शिक्षकों के लाभार्थ कुछ बिन्दु नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

1. जहां तक सम्भव हो सब लड़के-लड़कियों को खेलों और शारीरिक व्यायाम में साथ-साथ भाग लेने को प्रोत्साहित करना चाहिए।
2. शिक्षक सामान्य खेल जैसे खो–खो, कबड्डी और नन्हें मुन्नों के लिए निम्नांकित क्रियाकलापों के लिए मिली-जुली बन्दियां बनाएं।

   (क) **कोकला छुपाकी:** यह खेल बच्चों को एक गोले में बैठाकर खिलाया जाता है। एक बच्चा दुपट्टा लेकर गोले के बाहर घूमता है और किसी भी बालक/बालिका

के पीछे छुपा देता है। यह बात पता करने पर इस बच्चे को दुपट्टा उठाकर उस पर डालने वाले को पकड़ना पड़ता है। इस खेल से चेतना, फुर्ती, रफ्तार इत्यादि का विकास होता है। और सब बच्चे आपस में हिल–मिल जाते हैं व बातचीत करते रहते हैं।

(ख) **कीड़ी-काड़ा :** इस खेल को बच्चे धरती पर चौकड़े बनाकर इस प्रकार उस पर चलने का प्रयास करते हैं कि कोई भी रेख पैरों से न छुए। इससे बच्चे में गिनने, निशाना साधने, संतुलन रखने और रेखागणित की आकृतियाँ बनाने का कौशल पनपता है।

(ग) **अड्डी चरप्पा :** इस खेल मे दो बच्चे एक दूसरे का आमना-सामना करके बैठते हैं। उनके पैर उनके सामने पसारे होते हैं उनके तलवें एक दूसरे को छूते रहते हैं। फिर वे एक पैर पर दूसरा पैर रख लेते हैं। और शेष खिलाड़ी उठे हुए पांवों पर से कूदते हैं। इस खेल से मनोक्रियान्वयन विकसित होता है जिससे बच्चे जो सोचते है वह कर सकते हैं संतुलन तथा दक्षता उत्पन्न होती है।

(घ) **सात ठीकरी :** टूटे घडे के सात टुकड़ों को इस तरह से एक दूसरे के ऊपर रखा जाता है कि एक ढेर बन जाए। टीमें इस ढेरी को बीच में रखकर आमने-सामने खड़ी हो जाती है। एक टीम का सदस्य गेंद से निशाना लगाकर उस ढेरी को गिराता है। अब दूसरी टीम के लोग उसे फिर जोड़ने की कोशिश करते हैं जिसे पहली टीम क़े दस्य विध्वंस करने में लगे रहते हैं। इस प्रकार यह खेल चलता रहता है। इसे पिट्ठू भी कहते हैं। इस खेल से बच्चों में सहयोग की भावना का विकास होता है तथा निशाना लगाना भी सीखते हैं।

(ड.) **खो-खो :** बच्चे दो टीमो मे बंट जाते हैं। एक टीम के बच्चे एक लाईन में एक दूसरे की विपरीत दिशा में बैठ जाते हैं। एक आयताकार बना लिया जाता है। खिलाड़ी इसके अंदर बैठते हैं। उसी टीम का एक खिलाड़ी पकड़ने वाला बनता है। दूसरी टीम बाहर रहती है जो एक-एक खिलाड़ी अंदर भेजती रहती है जिसे पकड़ाई देने से बचना पड़ता है। पकड़ने वाला अपनी टीम में से किसी

को भी उसकी जगह से उठा सकता है। जिससे वह अंदर आए विपक्षी को पकड़ सके। इस खेल से कुशल बातचीत करना और कर्मठता तथा नेतृत्व की भावना पनपती है।

(च) **कबड्डी :** यह भी एक सुप्रचलित स्थानीय खेल है। लडके-लडकियों की बराबर सख्या वाली दो टीमे बनाई जाती हैं। एक आयताकार के अंदर यह खेला जाता है। बीच में एक रेखा खींची जाती है। इस रेखा के आर-पार दोनों टीमें खड़ी होती हैं। एक खिलाडी अपने क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाता है। दूसरी टीम के लोग उसे पकडने की कोशिश करते है। खिलाडी बचकर भागता है और दूसरी टीम के किसी भी खिलाड़ी को हाथ लगाकर अपने क्षेत्र मे आ जाता है। जहां से फिर दूसरा खिलाडी जाता है और इसी प्रकार खेल चलता है फिर क्रम बदल जाता है। भागने वाला कबड्डी-कबड्डी कह कर, उछल–उछल कर, नीचे झुककर, सांस रोककर टिपीकल तरीके से यह खेल खेलता है। शिक्षक बालक-बालिकाओं को निम्नांकित क्रियाकलापो में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करेंगे।

(1) **रंगोली :** होली, दीपावली, ओनम, पोंगल के अवसर पर शिक्षक कक्षा के बाहर बनवाएंगे। चावल का आटा, हल्दी पाऊडर, खडिया और बुरादे से रंगोली बनाई जाती है सभी बच्चों को रंगोली बनाने में भाग लेना चाहिए स्कूल में प्रतियोगिता होनी चाहिए जिसमें लड़कों को भाग लेने का प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। रंगोली रंगो का सम्मिश्रण और चित्रकला को पनपाती है। शिक्षक बच्चों को प्राकृतिक प्रदत्त रंगों के स्रोत के बारे में प्रोत्साहित करेंगे जैसे हर सिंगार, टेसू, गुड़हल इत्यादि के फूल। बच्चों को आलू के टुकड़ों और भिन्डी के टुकड़ों से आकृति बनाना भी सिखाया जा सकता है।

(2) **भितकारी :** यह वह विधि है जिससे लोक गाथाओं और लोक परम्परा के आधार पर दीवारों पर चित्र अंकित किए जाते हैं। यह त्यौहारों पर अवश्य बनाए जाते हैं। शिक्षक को इन चित्रों में बालकों व महिलाओं पर अत्याचार होते हुए दिखाने की प्रवृति को निष्कृष्ट बताना चाहिए। वैसे इस क्रियाकलाप द्वारा बालकों में अपने मन से कुछ भी बना डालने की क्षमता पनपती है। बनी हुई तस्वीरों में महिला और पुरुष दोनों का ही निरूपण होना चाहिए।

(3) **कठपुतली खेल :-** इसमें कठपुतली बनाना और उनके द्वारा कथानकों का प्रस्तुतीकरण क्रियान्वित होता है। शिक्षक बालकों को कठपुतली बनाना सिखाएं। कथानक ऐसे होना चाहिए जैसे छोटा परिवार, बालिका की बराबर से देखभाल, महिला मंच इत्यादि। वह खेल बच्चों में हाथ कौशल, वाणी नियंत्रण और विचारों को तमाशे में बदलने की क्षमता पनपाता है।

(4) **लोक गीत :** बालकों की अपनी भाषा में गाए जाने वाले यह गीत उनमें जिज्ञासा कौतुहल और कवित्व का सृजन करते हैं। महिलाओं के कार्यों की प्रशंसा में जो गीत गाए जाते हैं उन्हें बालकों में प्रसारित करना चाहिए वह गाने जो महिलाओं और बालिकाओं को हीन दशा प्रस्तुत करते है नहीं सिखाए जाने चाहिए।

(5) **माटी मूरत :** गीली मिट्टी से बनाने की विधि जिसमें हर बच्चे को एक गीली माटी का लौंदा दिया जाता है जिससे वह अपनी इच्छानुसार आकृति बनाता है। यह बहुत अधिक सृजनात्मक क्रियाकलाप है। निर्जीव माटी से बालक सजीव चीजों की आकृति बनाते हैं जो उनके विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। आत्मविश्वास कुछ बना डालने का जोश, निर्णय लेने की क्षमता और हस्त कौशल से इसी मूर्तिनिर्माण से पनपता है।

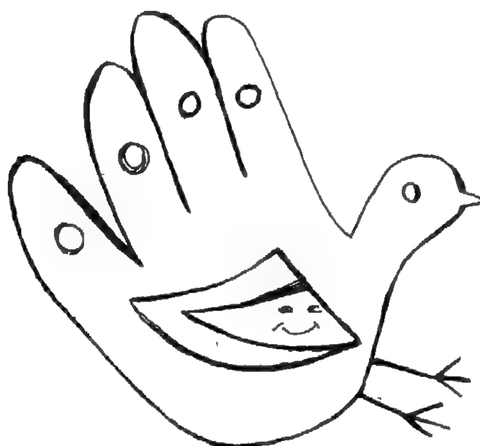
(6) **कोजाल बनाना :** इस क्रियाकलाप से बालकों को चार्ट पेपर पर अंकन करना सिखाया जाता है। बेकार कागज, फालतू चीजें,और रंगबिरंगे कपड़े, टूटे बर्तन हैं। अगर सांस टूट जाए तो वह मारा जाता है। इससे बालकों में फुर्ती, तेजी आत्मनियंत्रण और टीम भावना पनपती है।

कला शिक्षा

प्राचीन काल से कला ही संप्रेक्षण तथा अभिव्यक्ति का माध्यम रही है। अपनी अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न आंतरिक गुणों को व्यक्त करने तथा अपनी सृजनात्मक मांग पूरी करने के लिए कला एक प्रक्रिया है। अतः बिना लिंग भेद किए कला-शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। यह आत्मविश्वास की भावना भी पैदा करती है। कला-शिक्षा का मुख्य उद्देश्य यह है कि छात्र अपने वातावरण में अच्छी और सुन्दर वस्तुओं को देख समझ सकें और सामान्य कलाएं तथा संगीत, नृत्य तथा नाटिकाओं में रुचि ले सके।

अपेक्षित उपलब्धि

1. शिक्षक बच्चों में अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में कला प्रशिक्षण प्रस्तुत करना सीखेंगे तथा बालकों को सही प्रावधान, रंग की सहायता से आकृतियां बनाने में सहायता करेंगे।
2. बिना किसी भेदभाव के बालक-बालिकाओं में प्रत्येक सुन्दर वस्तु या आकृति को सराहने की दक्षता पनपानी होगी अतः इस प्रवृत्ति के प्रति शिक्षक जागरूक रहेंगे।
3. बालक-बालिकाओं की कला प्रवृत्ति की सराहना करने की आदत डालनी पड़ेगी।



पाँच वर्ष के बच्चे द्वारा चित्र

कार्यानुभव

कार्यानुभव को संप्रयोजन और अर्थसहित शारीरिक कार्य समझते हुए उन वस्तुओं के उत्पादन में सहायक माना जाता है जो सुगठित और उत्तरोत्तर उन्नत कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए सिखाया जाता है। सीखने वालों को हस्तकला के प्रति आदर, आत्मविश्वास सहयोग, सहायक प्रवृत्ति, कार्य कौशल अवश्य पनपता है। इससे बालक-बालिकाओं में स्वस्थ आत्म संकल्पना भी जागृत होती है।

अपेक्षित उपलब्धि

1. शिक्षक बालक-बालिकाओं को उनके पास जो कुछ है उससे कुछ सिखाएंगे।

2. यह बताएंगे कि बालक-बालिका दोनों ही सारे काम बराबरी से कर सकते हैं। और न तो कोई केवल महिलाओं के क्षेत्र हैं और न ही केवल पुरुषों के।

3. सभी उपक्रमों का उपयोग बिना भेदभाव के सिखाएंगे।

कांच चूडियां इत्यादि दी जाती है। गोंद से या फेवीकोल से बालक आकृतियां संकलित करके बनाते हैं और उन्हें चिपकाते चलते है। रंगों को जोड़ और उनकी सहायता से अपने विचारों को बांटना इस क्रियाकलाप की देन है। इसस बेकार चीजों का पुनः उद्धार करने की आदत भी पनपती है।

खेल-खेल में शिक्षकों को जुटाने की विधि

खेल 1 : सप्ताह में एक दिन सफाई और सजावट का दिन मनाया जाए। लड़के और लड़कियों को सब कामों में बराबरी से लगाया जाए। कमरे की धूल झाड़ी जाए, फूल पत्ते चुनकर सजाए जाएं। बालकों से पोस्टर, कोलाज और दीवार पर टांगने के लिए कुछ बनवाया जाए।

खेल 2 : आगन्तुक का स्वागत
वैकल्पिक आगन्तुक विद्यालय और घर में हो। लडके और लड़कियां उनके स्वागत के लिए कुछ बनाएं और उन्हें दें। लडके और लड़कियो की मिली हुई टीम अतिथि को फूल और माला दें फिर स्वागत और धन्यवाद भाषण दें। सामान्यतः यह काम लड़कियों को ही सौंपे जाते हैं।

खेल 3 : पंचायत/संसद (कक्षा 4 और 5) वैकल्पिक पंचायत या संसद का अधिवेशन बालक-बालिकाओं से सचालित कराए। बालिकाएं सरपंच की भूमिका निभाए और सांसद, प्रधानमंत्री तथा मंत्री की भी।

खेल 4 : कक्षा में निर्वाचन गठन बठाइये। बराबर संख्या में लडके और लड़कियां उम्मीदवार हो कक्षा में 5-6 मॉनीटर चुने जाए जो अलग-अलग क्रियाकलापों के लिए उत्तरदायी हो जैसे –

1. कक्षा की देखभाल

2. अनुशासन
3. शारीरिक सफाई का परीक्षण
4. शिक्षक के लिए गृह कार्य जमा करना

खेल 5 : क्रीड़ा स्थल में क्रिया कलाप
बालक-बालिकाओं को खेलकूद, व्यायाम, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने को प्रोत्साहित करें। अक्सर लड़कियां चुपचाप देखती रहती हैं। खास तौर से स्पोर्ट्स में। लड़के नृत्य कार्यक्रम में हिस्सा नहीं लेते और इसे लड़कियों का हिस्सा समझा जाता है।

खेल 6 : पिकनिक-छोटे लड़कों और लडकियों को साथ-साथ खाना खिलाएं। खाना बांट कर खाएं और मिल जुलकर टिफिन बॉक्स साफ करें। लड़के-लड़कियों को मिल जुलकर खाना पकाने और पानी लाने, खाना परोसने बर्तन साफ करने का अवसर दिया जाए।

सामुदायिक नेता की भूमिका में शिक्षक

कम आयु में विवाह, दहेज, महिलाओं पर अत्याचार और महिलाओं के निरादर जैसी प्रथाओं को शिक्षक समाप्त कराएं।

समुदाय को निम्नांकित बातों को समझाएं:-

1. लड़के-लड़कियों को समान शिक्षा चाहिए



2. दोनों को बराबर खाना मिलना चाहिए
3. दोनों को एक सी स्वास्थ्य सेवा और दवा मिलनी चाहिए
4. दोनों को एक सी ही जिम्मेदारियां सौंपी जा सकती है
5. दोनों को एक सी ही आजादी मिलनी चाहिए
6. दोनों को खेलने का बराबर समय मिलना चाहिए
7. दोनों ही सारे काम बराबर कौशल से कर सकते हैं
8. दोनों एक से धंधे कर सकते हैं
9. दोनों के पास एक सी बुद्धि और क्षमता होती है
10. स्त्री और पुरुष दोनों को ही एक समान काम के लिए समान वेतन मिलना चाहिए
11. सारे निर्णय पति-पत्नी को साथ मिलकर लेने चाहिए
12. परिवार के सारे सदस्यों को घर के काम काज मिलकर करने चाहिए
13. परिवार की सम्पत्ति पति-पत्नी के नाम से ही रजिस्टर होनी चाहिए
14. लड़कियों का सम्पत्ति में बराबर कानूनी अधिकार लागू होना चाहिए।

सामुदायिक संघटन

- शिक्षक सामूहिक ढंग से सोचे जिससे वह एक ऐसी कार्य योजना गठित कर सके जिससे एक सामूहिक चेतना जागे। इस चेतना से समुदाय बालक बालिकाओं का नामांकन और विद्यालय में आते रहना जैसे महत्वपूर्ण कार्य में शिक्षकों के साथ हाथ से हाथ मिलाकर जुट जाएं।

- स्थान विशेष में दो या तीन शिक्षक एक ग्रुप बनाकर माता-पिता का सहयोग और सामुदायिक सहायता के लिए वार्तालाप करें।

- शिक्षक स्कूली कार्यक्रमों को अच्छा बनाने के लिए सामुदायिक सहयोग के आधार पर प्रवीण लोगों की सहयता ले।

- शिक्षक 50 प्रतिशत महिलाओं को शामिल करते हुए ग्राम शिक्षा समिति का निमार्ण करवाएं और यह समिति प्रारम्भिक शिक्षकों को इस प्रकार नियोजित और नियंत्रित करे जिससे बालिकाओं और अन्य अपेक्षित वर्गों के बालकों को शामिल किया जा सके।

- शिक्षक ऐसे मंच भी गठित करे जहां परिवार तथा समुदाय में लिंगाधारित सामाजिक तथा सांस्कृतिक भूमिका में भेदभाव पर चर्चा हो सके। यह भी तथ्य उभारा जाए कि बालिका की आत्म छवि इसी भेदभाव के कारण धुंधली रहती है। और उनके नकारात्मक/ऋणात्मक आत्मबोध उनको अत्याचार सहने को मजबूर कर देता है। साथ ही चिन्तन और विश्लेषण के लिए बाल विवाह, दहेज, महिलाओं के सशक्तिकरण को समझाएं और उन्हें हटाने की और अग्रसर करवाएं।

आपस में मिलकर सोचिए और विचार विमर्श कीजिए

शिक्षक/प्रधान शिक्षक होने के नाते हमें क्या-क्या आवश्यक करना चाहिए जिससे :

- बालिकाओं का नामाकन
- बालिकाएं विद्यालय न छोड़े
- बालिकाएं अच्छे दर्जे की शिक्षा प्राप्त कर सकें
- बालिकाएं अपने अवरोधनों से छुटकारा पा सकें
- बालिकाएं सकारात्मक आत्मछवि निर्मित कर सकें
- लड़कों का नामांकन हो
- लड़के पढ़ना न छोडे
- लड़के गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्राप्त कर सकें
- लड़के आक्रामक न बनें और किसी प्रकार की मारपीट में शामिल न हों
- लड़के-लड़कियां मिल जुलकर एक दूसरे की सहायता करते हुए काम करना सीखें
- पाँच वर्ष से अधिक आयु की स्कूल न जाने वाली लड़कियों को अपने परिवेश में ढूंढे और माता-पिता को यह बताएं कि उन्हें स्कूल भेजना जरुरी क्यों हैं।

नीचे लिखे विचारों पर माता-पिता व सामुदायिक स्तर पर बातचीत कीजिए :

प्रारम्भिक स्तर की बालिका की शिक्षा :

1. उसे जीवनपर्यन्त साक्षर बनाती है और अगली पीढ़ी के लिए साक्षरता सुनिश्चित कर देती है।

2. उच्च स्तरीय शिक्षा के लिए तैयार करती है जिससे वे कमाने वाले कामों में लग सकती है और माता-पिता की सहायता भी कर सकती है।

3. आत्मविश्वास और सकारात्मक आत्मछवि दर्शाती है।

4. लड़कियों को नेतृत्व की भूमिका में ढालती है।

5. लड़कियों में भागीदारी और निर्णय लेने की क्षमता पैदा करती है।

6. लड़कियों को उनके अधिकारों से सचेत कराती है।

7. विवाह की आयु सीमा बढ़ाती है।

8. बालिकाओं में उनके स्वास्थ्य एवं रख-रखाव के बारे में चेतना विकसित करती है।

9. उनमें दक्षता, स्पष्टता और रचनात्मक प्रवृत्ति पनपाती है।

स्थानीय स्थिति अध्ययनों द्वारा यह पता चलता है कि माता-पिता का बालिकाओं की शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण बदला है। लड़कियां स्कूल जाना चाहती हैं। और माता-पिता उन्हें भेजना भी चाहते है। लेकिन कुछ ऐसे अवरोध हैं जिनके कारण वे नहीं जा पातीं जैसे :

- गृहस्थी के काम, खाना पकाना, सफाई करना, पशुपालन, पानी भरना, ईंधन और चारा जुटाना
- छोटे भाई-बहनों की देखभाल
- स्कूल की दूरी और माता-पिता का उन्हें भेजने का डर
- महिला शिक्षकों की कमी
- उन क्षेत्रों में जहां माता-पिता बालिकाओं को बालकों के साथ मिलने-जुलने नहीं देते वहां बालिका विद्यालय अलग न होना
- स्कूल के समय की विसंगति।

माता-पिता और समुदाय के सदस्यों में बातचीत कीजिए जिससे वह संभावनाएं उजागर हो जिनसे लड़कियां नामांकित हो और फिर पढ़ाई जारी रखें। वे समस्याएं सुझाएं और उनके

निवारणार्थ वे क्या कर सकते हैं। और कहां उनकी मदद की जरूरत होगी निर्दिष्ट करें। उनको आत्म-निर्भरता के लिए प्रोत्साहित कीजिए।

महिलाओं को संगठित कीजिए

बालिकाओं के नामांकन और स्कूल में पढ़ते रहने के लिए :-

1. महिला समूह जैसे महिला मंडल, महिला समाख्या, पंचायत की महिला सदस्य और स्थानीय महिलाओं से सम्पर्क करें
2. यदि इस तरह के समूह नहीं हैं तो अध्यापक/प्रधान अध्यापक महिलाओं को एकत्रित करें और मीटिंगों में बालिका शिक्षा को फोक्स करके बातचीत करें।
3. माता-पिता शिक्षक समूह बनाकर महिला-पुरुष का मिला हुआ सहयोग प्राप्त करें।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मन्तव्य के अनुसार बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए ग्राम शिक्षा समिति निर्मित करवाएं जिसमें 50 प्रतिशत महिला सदस्य हों।
5. गरीब और पिछड़े हुए परिवारों के लड़कों के लिए ऊपर दी गई बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

माता-पिता और समुदाय के साथ रहकर नीचे लिखी बातों पर ध्यान दिलाना जरूरी है :

(i) बालिकाओं के लिए बराबरी का खाना और आहार विशेषकर महावारी के दिनों में।

(ii) बालिकाओं को सम्प्रेक्षण के लिए प्रोत्साहित करना।

उन काल्पनिक बातों को बदलना जिनसे यह सुझाया जाता है कि लड़कियां लड़कों के बराबरी के काम नहीं कर सकती, उनकी योग्यताएं कम होती हैं, महिलाएं और बालिकाएं गप्पी होती हैं, बेवकूफ होती हैं और निर्णय नहीं ले पातीं, भीरू भी होती है और जल्दी डर जाती और निरन्तर आदेश पाने और उसे पूरा करने के लिए तैयार रहती हैं।

महिला जीवन के मूल्य पर विचार गोष्ठी कराएं जिसमें उनके स्वास्थ्य, उनके लिए आहार इत्यादि पर चर्चा हो जिसका बिन्दु उनकी सार्थक भागीदारी हो।

बहादुर महिलाओं की लोक कथाएं, योग्य और दक्ष महिलाओं की जीवनियां भी जमा करें।

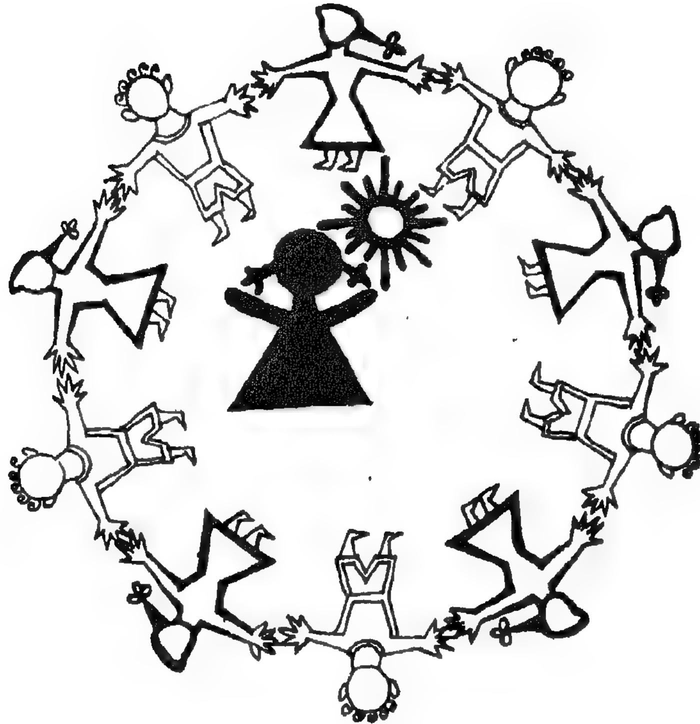
महिलाओं पर हिंसा उसकी सडको और सामुदायिक हिंसा में दुर्गति, सामाजिक दुर्बलताए जैसे—दहेज, वेश्यावृत्ति, देवदासी प्रथा, शराबखोरी, नशीले द्रव्यो का सेवन इत्यादि पर चर्चा करें और उसके निवारण के प्रयास जुटाए।

नोटः- परिशिष्ट देखिए—राजस्थान का बालिका अभियान और अन्य अग्रगामी योजनाए।



संलग्न

बालिकाओं में जागरूकता



लिये हाथों में हाथ
चले साथ-साथ
लक्ष्य एक
भविष्य एक

लड़की का विवाह हो तब
18 वर्ष की हो जाए जब
छोटी उमर में बच्ची पर माँ की जिम्मेदारी न डालिये,
क्योंकि

डाक्टरों का कहना है कि लड़की की आयु 20 साल हो जाने के बाद ही उसे पहले बच्चे को जन्म देना चाहिये नहीं तो मां और होने वाले बच्चे, दोनों की सेहत पर बुरा असर पड़ता है।

स्वस्थ माँ ही स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सकती है।

18 साल से कम उमर की बच्ची पर मां की जिम्मेदारी ना डालिये क्योंकि वह इतनी छोटी उमर में शारीरिक तथा मानसिक रूप से पूरी तरह से विकसित नहीं होती।

18 वर्ष से कम आयु की लड़की और 21 वर्ष से कम आयु के लड़के का विवाह करना कानूनी जुर्म है।



मुझे मत मारो!
मैं डायन नहीं हूँ



विशेष संवाददाता

अठारहवीं शताब्दी के भारत में अनेक कुप्रथाओं के जरिए औरतों की खुले आम हत्या की जाती थी। उनमें सती के नाम पर औरत को जला देना और डायन कह कर पीट-पीट कर मार देना खास थीं। आज जब देश के किसी कोने में इक्का-दुक्का सती की घटना घटती है तो सारे देश में हलचल मच जाती है। रूप कुंवर हत्याकांड इसी तरह की घटना थी। लेकिन यदि यह कहा जाए कि देश के लिए बहुत बडे राज्य में आज भी डायन के नाम पर सैंकड़ों-हजारों औरतों को खुले आम मारा जा रहा है, तो क्या यकीन होगा?

बिहार के पुरुषों, शर्म करो...

बिहार के आदिवासी क्षेत्रों सिंहभूमी, जमशेदपुर, धनबाद, हजारीबाग व झारखण्ड क्षेत्र में हर वर्ष लगभग सौ औरतें डायन करार दे कर मार दी जाती हैं। अनेक को मारपीट कर बेइज्जत कर के गांव से निकाल दिया जाता है। उनकी जमीन, जायदाद, झोंपड़ी, घर हड़प लिए जाते हैं। यह सब हो रहा है संसार के सबसे बड़े लोकतंत्र में। जहां जनता की चुनी हुई सरकार है। पुलिस और कानून व्यवस्था है। जिस देश का संविधान क़हता है कि लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। सिर्फ़ बिहार ही नहीं, बल्कि पूरे देश के शासनतंत्र के मुंह पर यह करारा तमाचा है।

क्या कसूर था इनका?

यहां आमतौर पर जिस औरत से कोई दुश्मनी हो या उसकी जमीन हड़पनी हो या फिर विध ावा हो तो आस-पास होने वाली किसी भी दुर्घटना के लिए उसे जिम्मेदार ठहरा दिया जाता है। पंचायत बैठकर उसे डायन करार देती है। गांव उसे पीट-पीट कर मार देते हैं, जला देते पत्थर

मार-मार कर गांव से बाहर भगा देते ।

- हजारीबाग के बरही गांव में नान्हू यादव रहता था। उसकी पड़ोसन थी सोहबा। नान्हू चौदह साल का लड़का मिर्गी का मरीज़ था एक दिन वह मर गया। नान्हूं ने सोहबा पर जादू-टोना करने का आरोप लगाया। और सोहबा को उसके घर व गांव से निकाल दिया है। उसके पति और दो बच्चों की आंखों में तेज़ाब डाल दिया। वह बेचारी न्याय पाने के लिए मुख्यमंत्री तक के पास गई लेकिन ऊंची-ऊंची कुर्सियों पर बैठने वाले स्वार्थी नेताओं के कान में एक गरीब औरत की पुकार कहां पहुंचती है।

- कजरी का पति बीमार था। वह मर गया। कुछ समय बाद उसका एक देवर भी मर गया। ससुराल वालों ने कहा "कजरी डायन है, उसने दोनों को खा लिया।" जानकारों का कहना है कि यह सब कजरी के हिस्से की जमीन हड़पने की साजिश थी। आदिवासियों में अविवाहित, विवाहित या विधवा औरत का भी जायदाद में बराबर का हिस्सा होता है।

अब हर पंचायत में औरतें होंगी*

हम औरतें पिछले कितने सालों से लड़ रही हैं समाज में अपनी पहचान बनाने के लिए। हम चाहते हैं कि हम सिर्फ़ पुरुषों द्वारा बनाए गए समाज में न रहें। बल्कि समाज बनाएं भी। यह सच है कि कई मोर्चे पर हम कमजोर पड़े हैं। हमारी किसी ने नहीं सुनी है। लेकिन कई मोर्चों पर हमारी लड़ाई इतनी मजबूत रही है कि हमने सुनने के लिए बाध्य कर दिया है।

विरोध

राजनीति में महिलाओं की सक्रिय और समझदार भागीदारी पिछले कुछ सालों से कम होने लगी थी। पार्टी के लोग औरतों को चुनाव लड़ने के लिए टिकट नहीं देते थे। अगर किसी तरह टिकट मिल भी जाता था तो लाठी और गुण्डों के बीच में औरतों का जीतना बड़ा ही मुश्किल हो जाता था। उनके पुरुष प्रतिद्वंद्वी आखिरी हथियार के तौर पर मनगढंत कहानियों का सहारा लिया करते हैं। उनका चरित्रहनन करते हैं। औरतों के चरित्र से जोड़कर चाहे जितनी झूठी कहानी बनाई जाए, लोग उसे सच्ची कहानी मान लेते हैं। फिर खराब औरत समझ कर वोट नहीं देते। फिर भी औरतें मैदान से पीछे नहीं हट रही हैं। गांव-गांव में पंचायत चुनाव में औरतें

* सबला

हिस्सा ले रही हैं। मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र में तो दो पंचायतों की सभी सदस्य औरतें हैं।

महाराष्ट्र में पहल

औरतों के इस संघर्ष और जीवट को देखते हुए दो साल पहले महाराष्ट्र सरकार ने कानून बना कर सभी पंचायतों, जिला परिषदों और नगरपालिकाओं में औरतों के लिए एक तिहाई जगह आरक्षित कर दी थी। जब यह कानून बनाया गया तो कई लोगों ने ललकारा भी कि अगर वे समाज चलाना चाहती हैं तो अपनी कूव्वत पर आगे आएं। कुछ लोगों ने यह शंका भी जाहिर की कि अगर वे पंचायत में बोलने लगी तो घर में भी बोलने लगेंगी। आज आरक्षित सीटों पर खड़ी होकर जीतेंगी तो कल सामान्य सीटों से भी जीतने लगेंगी। उन्हें समाज चलाना आ जाएगा तो वे बाद में विधान सभाओं और संसद में भी जाने लगेंगी।



परिशिष्ट

i. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और कार्य योजना 1992 से उद्धृता महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा के लिए सिफ़ारिशें

महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा

4.2 शिक्षा का उपयोग महिलाओं की स्थिति में बुनियादी परिवर्तन लाने के लिए साधन के रुप में किया जायेगा। अतीत से चली आ रही विकृतियों और विषमताओं को खत्म करने के लिए शिक्षा-व्यवस्था का स्पष्ट झुकाव महिलाओं के पक्ष में होगा। राष्ट्रीय शिक्षा-व्यवस्था ऐसे प्रभावी दखल करेगी, जिनसे महिलाएं जो अब तक अबला समझी जाती रही है, समर्थ और सशक्त हों, नए मूल्यों की स्थापना के लिए शिक्षण संस्थाओं के सक्रिय सहयोग से पाठ्यक्रमों तथा पठन-पाठन सामग्री की पुनर्रचना की जायेगी तथा अध्यापकों व प्रशासकों को पुनः प्रशिक्षित किया जायेगा। इस काम को सामाजिक पुनर्रचना का अभिन्न अंग मानते हुए इसे पूर्ण कृत संकल्प होकर किया जाएगा। महिलाओं से संबंधित अध्ययन और विभिन्न पाठयचर्चाओं के भाग के रूप में प्रोत्साहन दिया जायेगा और शिक्षा संस्थाओं को महिला विकास के सक्रिय कार्यक्रम शुरू करने के लिए प्रेरित किया जायेगा।

4.3 महिलाओं में साक्षरता प्रसार को तथा उन रुकावटों को दूर करने को जिनके कारण लड़कियां प्रारंभिक शिक्षा से वंचित रह जाती हैं, सर्वोपरि प्राथमिकता दी जायेगी। इस काम के लिए विशेष व्यवस्थाएं की जायेंगी। समयबद्ध लक्ष्य निर्धारित किए जायेंगे और उनके कार्यान्वयन पर कड़ी निगाह रखी जायेगी। विभिन्न स्तरों पर तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी पर खास जोर दिया जायेगा। लड़के और लडकियों में किसी प्रकार का भेद-भाव न बरतने की नीति पर पूरा जोर देकर अमल किया जायेगा ताकि तकनीकी तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में पारम्परिक रवैयों के कारण चले आ रहे लिंगमूलक विभाजन (सैक्स स्टीरियोटाइपिंग) को खत्म किया जा सके तथा गैर-परम्परागत आधुनिक काम-धन्धों में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ सके। इसी प्रकार मौजूदा और नई प्रौद्योगिकी में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जायेगी।



भारत सरकार
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
शिक्षा विभाग

1. महिला समानता के लिए शिक्षा

1. भूमिका

1.1.1 महिला समानता के लिए शिक्षा में समानता और सामाजिक न्याय करने की सम्पूर्ण रणनीति का महत्वपूर्ण घटक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एन.पी.ई) 1986 के पैरा 4.2 में शिक्षा की प्रभावकारी और अधिकार प्रदान करने संबंध में ठोस और सपाट विवरण है। इसके अतिरिक्त वे विशेष सहायता सेवाओं के प्रावधान और ऐसे कारकों को दूर करने पर बल देते हैं जिनसे शिक्षा के सभी स्तरों पर महिलाओं के प्रति भेदभाव होता है। कार्यवाई योजना में उन कदमों के संबंध में स्पष्ट रूप से बताया गया है जो महिला समानता के लिए शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है। समय की मांग यह है कि जहां भी उपयुक्त समझा जाए कार्यवाई योजना की सामग्री में संशोधन किया जाए। इतना तो स्पष्ट है कि कार्यान्वयन के लिए इच्छाशक्ति और संस्थागत तंत्र की जरुरत है ताकि शैक्षिक कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने वाले प्रभारी व्यक्तियों की प्रतिबद्धता या झुकाव पर नहीं छोड़ा जा सकता। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सभी व्यक्तियों, एजेंसियों और संस्थाओं के लिए महिला-पुरुष में भेदभाव के प्रति संवेदनशील होना और यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि सभी कार्यकलापों में महिलाओं का भी हिस्सा है।

2. वर्तमान स्थिति

1.2.1 वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता दर 39.42% है जबकि पुरुष साक्षरता दर 63.86 % है। 197 मिलियन महिला निरक्षर है जबकि पुरुष निरक्षर 127 मिलियन हैं। ऐसे देश में जहां पुरुषों की संख्या महिलाओं से 32 मिलियन अधिक है, 70 मिलियन महिला निरक्षर पुरुषों की तुलना में अधिक हैं। महिलाओं में उल्लेखनीय ग्रामीण-शहरी असमानतायें हैं अर्थात ग्रामीण निरक्षर महिलाओं की संख्या शहरी निरक्षर महिलाओं की संख्या की आधी है। एक चौकाने वाला निष्कर्ष यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जब 100 लड़कियां कक्षा-I में दाखिला लेती है तो उनकी संख्या क्रमशः घटकर कक्षा-V में केवल 40, कक्षा-VIII में 18, कक्षा-IX में 9 और कक्षा-XII में केवल 1 रह जाती है – शहरी क्षेत्रों के लिए समतुल्य आंकड़े क्रमशः 82,62,32 और 14 हैं।

यदि तकनीकी और व्यवसायिक शिक्षा में प्रवेश के लिए बुनियादी आवश्यकता 10 मास से 1 वर्ष सामान्य शिक्षा अवधि हो तो ग्रामीण लड़कियां छंट जाती हैं। व्यावसायिक और शहरी तकनीकी शैक्षणिक सुविधाओं का बड़ा भाग शहरी और अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में स्थित है। इन क्षेत्रों मे लड़कियों की सहभागिता काफी कम है और लैगिक अनुपात यथापूर्ण बना रहता है। इसी प्रकार इंजीनियरी और कृषि आधारित पाठ्यक्रमों में भी महिलाओं और लड़कियों का अनुपात काफी कम है।

1.2.2 यह और गंभीर बात हो जाती है जब हम पाते हैं कि कम साक्षरता वाले राज्यों में अध्यापिकाओं की संख्या कम है। अध्यापिकाओं का प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक और मिडिल स्कूलों में 21% और 23% तथा शहरी क्षेत्रों में क्रमशः 56% और 57% है।

1.2.3 इसलिए यह आवश्यक है कि सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली को शैक्षिक असमानताओं के लैगिक और आयामों के प्रति सचेष्ट बनाया जाए।

3. नीति प्राचल और कार्यनीतियां

1.3.1 रा.शि.नी. के अनुसरण में कार्यन्वयन रणनीति की मुख्य विशेषताओं में निम्नलिखित शामिल होंगे :

(क) सम्पूर्ण प्रणाली को इस प्रकार तैयार करना कि यह महिलाओं को अधिकार प्रदान करने में सकारात्मक हस्तक्षेप का साधन बन सके।

(ख) महिलाओं का स्तर बढ़ाने और सभी क्षेत्रों में महिलाओं के अधिक विकास हेतु सक्रिय कदम उठाने के लिए शैक्षिक संस्थाओं का प्रोत्साहित करना।

(ग) महिला-पुरुष में भेदभाव के पूर्वाग्रह से मुक्त होकर व्यावसायिक तकनीकी और पेशेगत शिक्षा के सभी स्तरों पर महिलाओं को शामिल करना।

(घ) गतिशील प्रबन्ध ढांचे का सृजन करना जिससे इस जनादेश द्वारा सामने आई चुनौतियों का सामना किया जा सके।

4. कार्रवाई योजना

1.4.1 नीचे दी गई कार्यनीतियां मुख्य रूप से कार्रवाई योजना के कार्यान्वयन से संबंधित प्रचालन ब्यौरों के विषय में है :

(क) शिक्षा विभाग के सभी ब्यूरो अगस्त 1993 तक ठोस कार्रवाई योजना तैयार करेंगे। जिससे उनके अपने क्षेत्र मे लिंग संबधी चिन्ताओं पर प्रकाश डाला जाएगा। वि.अ.आ., अ.आ.त.शि.प., आई.सी.एस.आर., भा.ऐ.अ.प., के.मा.शि.बो., आई.सी.ए. आर. आई.सी.एम.आर., आई.ए.एम.आर. राज्यों के बोर्ड, व्यावसायिक शिक्षा ब्यूरो आदि जैसी संबधित शीर्ष संस्थायें भी इसी प्रकार की कार्रवाई योजनायें तैयार करेंगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के भाग IX का पैरा 4.1 से 4.3 और कार्रवाई योजना का अध्याय XII कार्रवाई योजना के मार्ग निर्देशन का काम करेगा।

(ख) विभाग के आयोजन विभाग में एक मॉनीटरिंग एकक या महिला ब्यूरो का सृजन किया जाएगा तकि नीतियों, कार्यक्रमों और स्कीमों में लिंग संबंधी मसलों को समाहित किया जा सके। यह एकक कार्यान्वयन की मॉनीटरिंग के लिए संकेत तैयार करेगा, सूचना के प्रभावी प्रसार को सुनिश्चित करेगा और कार्य में समन्वय करेगा। यह कार्य 1993 तक कर लिया जाएगा।

(ग) राज्य पर इसी प्रकार के मॉनीटरिंग एकक/ब्यूरो गठित किए जाएंगे।

(घ) सभी ब्यूरो और संस्थाओं की वार्षिक रिपोर्टों में उन कदमों के बारे में स्पष्ट जानकारी दी जाएगी जो उन्होंने शिक्षा में महिलाओं व लडकियों की पहुंच बढ़ाने के लिए उठाए हों। साथ ही उनमें सुनिश्चित किया जाएगा कि शिक्षा सामग्री और प्रक्रिया में महिलाओं की योजना ध्यान रखी जाए और सभी स्तरों पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी शिक्षा के लिए समान अवसर उपलब्ध कराये जायें।

5. महिलाओं को अधिकार प्रदान करना

1.5.1 शिक्षा महिलाओं को अधिकार प्रदान करने में एक सशक्त माध्यम हो सकती है और इसके निम्नलिखित घटक होंगे :

- महिलाओं का आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास बढ़ाना;
- समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के मान्यता प्रदान करके महिलाओं की सकारात्मक छवि बनाना,
- समालोचनात्मक ढंग से सोचने की क्षमता विकसित करना;
- सामूहिक प्रक्रियाओं द्वारा निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना और कार्रवाई करना;

- शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य (विशेषकर प्रजनन स्वास्थ्य) जैसे क्षेत्रों में महिलाओं को जानकारी देकर विकल्प चुनने योग्य बनाना;
- विकासात्मक प्रक्रियाओं में समान सहभागिता सुनिश्चित करना;
- आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए सूचना, ज्ञान और कौशल प्रदान करना'
- समाज में महिलाओं के अधिकारों से संबंधित कानूनी जानकारी और सूचना तक उनकी पहुंच बढ़ाना ताकि सभी क्षेत्रों में समान आधार पर उनकी सहभागिता बढ़ाई जा सके।

उपर्युक्त प्राचालों को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाये जाएंगे और जैसा कि ऊपर 4.1 में कहा गया है कि शिक्षा विभाग के संबंधित ब्यूरो और सस्थायें प्रगति के बारे मे रिपोर्ट देगें।

(1) महिला विकास के लिए प्रत्येक शिक्षा संस्था सक्रिय कार्यक्रम प्रारंभ करेगी।

(2) सभी शिक्षकों और प्रशिक्षकों को महिलाओं को अधिकार प्रदान करने वाले एजेंट के रूप प्रशिक्षित किया जाएगा। रा.शै.अ.प्र.प., नीपा, डी.ए.ई.एस.आर.सी., डी.आई.ई.टी. राज्य शै.अ.प्र.प. और विश्वविद्यालय तंत्र प्रशिक्षण तैयार करेंगे। सम्बद्ध संगठनों और महिला दलों की सहायता से नवाचारी प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किए जाएंगे।

(3) शिक्षक-प्रशिक्षकों और प्रशासकों के लिए लिंग और निर्धनता के प्रति संवेदनशील होने के कार्यक्रम विकसित किए जाएंगें। एक ऐसा माहौल तैयार किया जाएगा जिसके द्वारा शिक्षा क्षेत्र के सभी अनुभाग लिंग-भेद के आधार पर असमानता दूर करने में भूमिका के प्रति सचेष्ट और संवेदनशील होंगे।

(4) आर्थिक आत्मविश्वास उत्पन्न करने तथा अपनी लड़कियों को स्कूल भेजने के लिए माता-पिता को प्रेरित करने के लिए अध्यापिकाओं की भर्ती को प्राथमिकता दी जाएगी।

(5) सामान्य कोर पाठ्यचर्या महिलाओं की सकारात्मक छवि बनाने का एक सशक्त माध्यम है। महिला अध्ययन विभाग, रा.शै.अ.प्र.प. लैंगिक दृष्टि से संवेदनशील पाठ्यक्रम विकसित करने, पाठ्यपुस्तकों से इससे संबंधित पूर्वाग्रह दूर करने और प्रशिक्षकों/शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के क्षेत्र पहले ही प्रारम्भ की गई गतिविधियों को तेज करेगें। राज्य शै.अ.प्र.प. तथा राज्य स्तर के संबंधित बोर्ड और संस्थाएं इसी प्रकार के कार्य प्रारम्भ करेंगे।

(6) ऐसी चेतना और समर्थन से संबंधित सभी कार्यकलापों के लिए सभी शिक्षा बजटों में धन आवंटित किया जाना चाहिए।

6. अनुसंधान और महिला अध्ययन

1.6.1 महिलाओं का अध्ययन एक महत्वपूर्ण निवेश है जिसका उद्देश्य सामाजिक प्रौद्योगिकीय और पर्यावरणात्मक परिवर्तन में महिलाओं के योगदान, उनके संघर्ष और वैज्ञानिक खोज के अनेक क्षेत्रों में उन्हें "लुप्त रखने वाली अवधारणात्मक बाधाओं की बेहतर समझ को प्रोत्साहन देना है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेदभाव के संगठनात्मक, सांस्कृतिक और दृष्टिकोण संबंधी बाधाओं को दूर करके महिलाओं को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय विकास के सभी क्षेत्रों में प्रभावी सहभागिता प्राप्त करने का प्रदान कराना है। इसके लिए 4 अध्ययन हैं जिनका समर्थन किया जाना है :

(क) ज्ञान की सीमाओं को आगे बढाने के मानव संसाधन विकसित करने और उपरोक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पठन/पाठन सामग्री तैयार करने के लिए अनुसंधान।

(ख) महिलाओ और पुरुषों में समानता के लिए महिला और पुरुषों के वर्तमान और मूल्यों में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा। पाठ्यक्रम के विद्यमान पूर्वाग्रहों और कमियों को भी दूर किया जाएगा।

(ग) शिक्षकों, नीति निर्माताओं, प्रशासकों और योजना निर्माताओं का प्रशिक्षण ताकि वे महिला पुरुष मे समानता लाने के लिए सकारात्मक मध्यस्थ भूमिका निभा सकें।

(घ) समुदाय के महिला विकास कार्यकलापों में संस्थाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी का विस्तार।

1.6.2. 20 विश्वविद्यालयों और 11 कालेजों में स्थापित महिला अध्ययन केंद्रों की स्थापना देने की प्रक्रिया में विख्यात संस्थाओं और सुविख्यात महिला संगठनों को शामिल किया जाएगा।

1.6.3 अनुसंधान, विस्तार प्रसार के लिए विभिन्न संस्थाओं के बीच नेटवक्र स्थापित करना काफी लागत-प्रभावी होने के साथ-साथ इससे समन्वित वृद्धि की संभावना बनी है। ऐसे नेटवर्कों का प्रारम्भ विशेष रूप से क्षेत्रीय भाषा में उच्च कोटि की शिक्षण सामग्री संवर्धन, प्रशिक्षण और पाठ्यक्रम और हस्तक्षेप हेतु विकेन्द्रित क्षेत्र-विशेष मॉडल तैयार करने के लिए किया जाएगा।

1.6.4 अवर स्नातक के लिए आधार पाठ्यक्रम तैयार कर किया जाना चाहिए ताकि महिलाओं को अधिकार प्रदान करने के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। यह आठवीं योजना अवधि के दौरान ही किया जाएगा।

4. संशोधित नीति निर्माण

7.4.1 प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण के लिए प्राथमिकताओं के साथ-साथ राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के द्वारा तैयार की गई नीति को दोहराते हुए संशोधित नीति निर्माण में निम्नलिखित संशोधन किए गए हैं:

(iii) यह भी विशेष रूप से निर्धारित किया गया था कि भविष्य में भर्ती किए जाने वाले शिक्षकों में कम से कम 50 प्रतिशत महिलाएं होंगी।

7.3.6. पूर्ण साक्षरता अभियानों की सकारात्मक बहिर्मुखता प्रत्याशी से कहीं अधिक है पूर्ण साक्षरता अभियान द्वारा कवर किए गए कई जिलों में प्राथमिक शिक्षा के लिए अत्याधिक मांग की गई है। 9 से 14 आयु वर्ग के " स्कूल न जाने वाले बच्चो" के कुछ ही जिलों में ये अभियान चलाए गए हैं। इन जिलों में अभिभावकों में जागृति पैदा होने के कारण प्राथमिक स्कूलों में बच्चों की उपस्थिति बढ़ रही है इस सुखद अनुभव ने प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण की नीतियों के "मांग पक्ष" की ओर ध्यान दिए जाने की जरूरत को सुस्पष्ट किया तथा प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण की समस्या के प्रति एकीकरण दृष्टिकोण की जरूरत पर प्रकाश डाला जिससे राज्य नहीं, केवल जिले तथा विशेष रूप से लाभ न उठा सकने वाले वर्ग-अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति की लड़कियां, भावी योजना का आधार बने।

7.3.9 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के विचार से प्रारम्भिक शिक्षा साक्षरता को सर्वसुलभ बनाने में असफलता, न केवल संसाधनों की कमी के कारण हुई है बल्कि प्रणालीबद्ध कमियों के कारण भी हुई है। बाहरी वित्तीय सहायता के अन्तर्गत प्राप्त अतिरिक्त संसाधनों को शैक्षिक पुनर्निर्माण जैसे नए स्कूल खोलना, स्कूल भवनों का निर्माण तथा शिक्षकों की नियुक्ति जैसे रूढ़िगत, साधनों से भी ऊपर है, के लिए प्रयुक्त किया जाएगा। एक व्यापक दृष्टि को अपनाना तथा सह सम्बोधित करना अनिवार्य है कि :

(क) कामकाजी बच्चों, लड़कियों और शैक्षिक रूप से वंचित वर्गों की शैक्षिक जरूरतें।

(ख) विषयवस्तु प्रक्रिया तथा गुणवत्ता के मामले।

बुनियादी शिक्षा से सम्बद्ध विभिन्न कार्यक्रमों के जीवन्त तथा परिवर्तनीय माडल विकसित करने के लिए परियोजनाओं को किया जाना चाहिए। अतः इन परियोजनाओं को, राष्ट्रीय शिक्षा नीति में परिकल्पित तथा राज्यों की सार्थक सहभागिता की सच्ची भावना से विकसित तथा कार्यन्वित किया जाना चाहिए। अतः इन परियोजाओं को प्रभावी तथा सहयोगी प्रबन्ध संरचना तथा स्थानीय समुदाय, शिक्षक तथा एन.जी.ओ. के सहयोग से मिशनरी तरीके से कार्यन्वित करना आवश्यक है।

अलग-अलग लक्ष्य निर्धारण तथा विकेन्द्रित आयोजना

7.4.2 आठवीं योजना में प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण के लिए नीति में अलग-अलग लक्ष्य निर्धारण तथा विकेन्द्रित आयोजना की परिकल्पना की गई है। शैक्षिक सूचकांकों के विश्लेषण से यह पता चलता है कि प्रत्येक राज्य में, यहाँ तक शैक्षिक रूप से पिछड़े राज्यों में भी कुछ ऐसे क्षेत्र तथा जिले होते हैं जोकि प्रायः सर्वसुलभीकरण की पहुंच में होते हैं तथा जबकि शैक्षिक रूप से अच्छे राज्यों में भी कुठ जिले ऐसे हैं जोकि अभी तक पिछडे हुए हैं। यह प्रयास किया जाना चाहिए कि शिशुओं में उपलब्धि में सुधार करने के लिए स्कूलों में शिक्षण के न्यूनतम स्तरों को शुरू करने तथा लोगों की सहभागिता के जरिए सूक्ष्म आयोजना की व्यापक नीति के अन्तर्गत जिला-विशिष्ट, जनसंख्या-विशिष्ट योजनाएं तैयार की जानी चाहिए। सूक्ष्म आयोजन सभी की पहुंच तथा सभी की सहभागिता के लिए एक ढांचा प्रदान करेगा जबकि अध्ययन के न्यूनतम स्तर सभी के लिए उपलब्धियों का एक नीति ढांचा प्रदान करेगा।

7.4.3 इन विसंगतियों को कम करने के लिहाज से जिला आयोजना के रूप में निम्न प्रकार से एक दृष्टिकोण को अपनाना होगा। इन जिलों को चार श्रेणियों में बांटा जाएगा :

(क) उच्च साक्षरता वाले जिले जिनमें लगभग सभी की शिक्षा तक पहुंच और दाखिला प्राप्त है तथा शिक्षा के प्रति समाज में जागरूकता पहले से ही अधिक है,

(ख) सम्पूर्ण साक्षरता अभियान वाले जिले जहां पर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के माध्यम से शैक्षिक जरूरतों को पूरा करने के लिए समुदाय द्वारा सफलतापूर्वक पूरा किया जा रहा है,

(ग) कम साक्षरता वाले जिले जिनमें शिक्षा सुविधाओं की उपलब्धता असंतोषजनक है तथा प्रदत्त कार्य प्रणाली समुदाय की सहभागिता बिना है, और

(घ) बाहरी रूप से सहायता प्राप्त परियोजना वाले जिले जिनका प्रबन्ध ढांचा भिन्न है तथा पर्याप्त वित्तीय सहायता प्राप्त है।

7.4.4 इन चार श्रेणियों के जिलो की पहुंच, सहभागिता, उपलब्धियों, पर्यावरण निर्माण, सामुदायिक सहभागिता, आदि के लिए नीतियां अलग-अलग होंगी। इन नीतियो को जिला स्तर की निकाय/समिति द्वारा तैयार किया जाएगा गठन प्रत्येक राज्य सरकार करेगी:

7.4.5 जिला आयोजना की इस व्यापक नीति के अन्तर्गत तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कार्यान्वयन पर प्राप्त अनुभव के आधार पर तथा संशोधित नीति के दिशा निर्देशों के अंतर्गत निम्नलिखित नई नीतियों का प्रस्ताव किया गया है :

(1) उन लोगो के लिए जो परम्परागत पूर्णकालिक शिक्षा प्रणाली में नहीं हो पाते उनके लिए स्वैच्छिक स्कूलों और अनौपचारिक जैसी वैकल्पिक शिक्षा प्रणाली को अपनाना।

(2) परिवार वार, बाल कार्य योजना तैयार करने तथा कार्यन्वित करने के लिए सूक्ष्म आयोजन के माध्यम से शिक्षकों तथा समुदाय की सहभागिता। यह सभी की पहुंच/दाखिला तथा सभी की सहभागिता के लिए एक ढांचा उपलब्ध कराएगा।

(3) अभिभावकों में, उनके बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा दिलाने के प्रति उनकी विशेष जिम्मेदारी के लिए रूचि पैदा करना तथा बच्चों की प्रभावी शिक्षा की प्रक्रिया में घर तथा स्कूल की सयुक्त जिम्मेदारी को पूरा करने के लिए अभिभावकों को भी शामिल करना।

(4) सम्पूर्ण साक्षरता अभियान वाले जिलों तथा अनौपचारिक शिक्षा में स्कूल-पूर्व कार्यक्रम तथा प्राइमरी शिक्षा तथा साक्षरता कार्यक्रमों के बीच सम्पर्क स्थापित करना।

(5) आपरेशन ब्लैकबोर्ड शुरू करने तथा उसे अध्ययन के न्यूनतम स्तरों की नीति से जोड़ने के माध्यम से स्कूल की सुविधाओं में सुधार करना। इसे उच्च प्राइमरी स्तर तक भी बढाया जाएगा।

(6) स्कूल कार्य प्रणाली की ओर विशेष ध्यान देते हुए शैक्षिक प्रबन्ध का विकेन्द्रीकरण।

(7) गैर-औपचारिक शिक्षा प्रणाली सहित प्राइमरी तथा उच्च प्राइमरी स्तर पर अध्ययन के न्यूनतम स्तरो को शुरू करना।

(8) शिक्षण अध्ययन को बाल केन्द्रित तथा क्रियाकलाप आधारित और रूचिकर बनाने के लिए शिक्षा की प्रक्रिया तथा विषयवस्तु मे संशोधन करना।

(9) उपचारात्मक उपायों पर ध्यान देते हुए सतत् और विस्तृत मूल्यांकन शुरू करना।

(10) परिवर्तित नीति और कार्यक्रमो के प्रावधानो को पूरा करने के लिए शिक्षक कार्यक्रमों में संशोधन करना।

(11) प्रारम्भिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने के लिए अनुवीक्षण प्रणाली मे सुधार करना।

(12) संशोधित नीति में परिकल्पित साक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक राष्ट्रीय मिशन शुरू करना।

7.4.6 विशेष कार्यकलापों, स्पष्ट रूप से उल्लिखित, निर्धारित समय (सूची) तथा विशेष लक्ष्यों के साथ जिला विशिष्ट परियोजनाओं को विकसित करने के लिए और प्रयास

किए जाएंगे। प्रत्येक जिला परियोजना प्रमुख कार्यनीति के अन्तर्गत रूपरेखा तैयार करेगी तथा जिले में विशिष्ट आवश्यकताओं तथा संभावनाओं को पूरा करेगी। प्रभावी प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभी बनाने के अलावा, शैक्षिक आयोजन के प्रभावी विकेन्द्रीकरण को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक जिला परियोजना का लक्ष्य शैक्षिक पहुंच में विद्यमान खामियों को कम करना, सुविधाहीन वर्गों के लिए तुलनात्मक मानदण्डों की वैकल्पिक प्रणाली का प्रावधान, शाला-सुविधाओं की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार चलाने में वास्तविक समुदाय की भागीदारी प्राप्त करना, तथा स्थानीय स्तर पर क्षमता का निर्माण करना शामिल होगा। अतः कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि चुनिंदा जिलों में प्रारम्भिक शिक्षा का उद्देश्य रचनात्मक होने के अलावा थोड़ा-थोड़ा योजनाओं का कार्यान्वयन भी होगा। विभिन्न कार्यक्रम संघटकों के बीच प्राप्त करने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण की अधिकाधिक संभावना है।

5. सभी की पहुंच का प्रावधान

7.5.1 विद्यमान योजनाओं में उपयुक्त संशोधन किए जाएंगे तथा नई नीति को कार्यान्वित करने के लिए कुछ नए उपाय किए जाएंगे।

(क) औपचारिक स्कूल

7.5.2 पद्धति के अनुसार नए प्राइमरी स्कूल बिना स्कूल वाली बस्तियों में खोले जाएंगे तथा उन बच्चों के लिए जो स्कूल प्रणाली से लाभ नहीं उठा सकते वहां अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र खोले जाएंगे इसके अलावा, सभी पहुंच के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए स्वैच्छिक स्कूलों की नई योजना भी शुरू की जाएगी।

7.5.3 प्राइमरी स्कूल

वर्ष 1986 में यह अनुमान लगाया गया था कि 300 अथवा इससे अधिक जनसंख्या वाली 32,000 बस्तियों में प्राइमरी स्कूल खोलना अपेक्षित है। जबकि काफी नए स्कूल खोले भी गए हैं और कुछ नई बस्तियां भी बस गई हैं तथा यह अनुमान लगाया गया था कि 35,000 नए स्कूल खोलना जरूरी है। इन स्कूलों को आपरेशन ब्लैकबोर्ड के अन्तर्गत निर्धारित की गई पद्धति के अनुसार राज्य द्वारा खोला जाएगा।

उच्च प्राइमरी स्कूल

7.5.4 उच्च प्राइमरी स्तर पर दाखिले मे वृद्धि करने के लिए प्राइमरी स्तर की सुविधाओं को पर्याप्त रूप से बढ़ाया जाएगा। तीन किलोमीटर की पैदल दूरी पर एक उच्च प्राइमरी स्कूल मुहैया कराने की विद्यमान पद्धति से काफी संख्या में लड़कियां इस स्तर की शिक्षण ग्रहण नही कर पाती हैं। सभी को प्राइमरी शिक्षा प्रदान करने का तर्क, विशेषकर लड़कियों के लिए इसमें कुछ देने की जरूरत है तथा प्राइमरी तथा उच्च प्राइमरी स्कूलों के बीच विद्यमान अनुपात को 2:1 तक बढ़ाना होगा। प्रत्येक दूसरे प्राइमरी स्कूल को उच्च प्राइमरी स्तर तक स्तरोन्नत करने के लिए अगले पाँच वर्षों के दौरान कार्रवाई की जाएगी। सभी को शिक्षा उपलब्ध कराने की प्रमुख जिम्मेदारी राज्य सरकारों की होगी।

7.5.5 सर्वसुलभ प्रारम्भिक शिक्षा को प्राप्त करने के लिए स्कूल प्रणाली से लगभग 18 करोड़ बच्चों को पढ़ाना होगा। इसके शिक्षक छात्र 1:40 के अनुपात के आधार पर वर्तमान 27 लाख शिक्षकों की संख्या को 45 लाख तक बढ़ाना होगा छात्रों की संख्या में वृद्धि होने से अगले 7 वर्षों में अतिरिक्त 11 लाख कमरों की आवश्यकता होगी।

स्वैच्छिक स्कूलों की योजना

7.5.6 स्कूल न जाने वाले पर्वतीय, आदिवासी तथा दुर्गम क्षेत्रों, जहां तक कि औपचारिक शिक्षा का कोई प्रावधान नहीं है, कि जरूरतों को पूरा करने के लिए स्वैच्छिक स्कूलों की एक नई योजना शुरू की जाएगी। इस योजना से ये स्वैच्छिक एजेन्सियां उच्च प्राइमरी शिक्षा/उच्च प्रारम्भिक शिक्षा के लिए स्कूल चलाएंगी तथा एक मूल्य प्रभावी तरीके से स्कूलों की आयोजना तथा इन्हें संचाालित करने में समुदाय की सहभागिता को जागृत करेगी।

7.5.7 ये स्वैच्छिक स्कूल एक प्रदत्त ग्राम/बस्ती के सभी स्कूलों के बच्चों को शिक्षा प्रदान करेंगे। ये क्षेत्र कम से कम 150 की जनसंख्या वाले सुपरिभाषित क्षेत्र होगें ताकि उन स्वैच्छिक स्कूल में कम-से-कम 30 बच्चे हो। स्वैच्छिक स्कूलों से यह आशा की

जाती है कि वे एक निर्धारित अवधि के भीतर अपेक्षित स्तर तक की प्राइमरी/प्रारम्भिक शिक्षा पूरी कर लेंगे छात्रों की पाठ्यचर्या के लिए पर्याप्त होगी। स्वैच्छिक स्कूलों में दाखिल किए गए छात्रों की औपचारिक स्कूल की किसी भी कक्षा में प्रवेश के लिए बाह्य छात्र के रूप में भाग लेना होगा। इन स्कूलों को चलाने के लिए स्वैच्छिक शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी तथा उन्हें पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाएगा। इन स्वैच्छिक स्कूलों के पर्यवेक्षण की जिम्मेदारी ग्राम शिक्षा सीमितं शिक्षकों की नियुक्ति की जाएगी तथा उन्हें पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाएगा। इन स्वैच्छिक स्कूलों के पर्यवेक्षण की जिम्मेदारी ग्राम शिक्षा समिति की होगी।

7.5.8 पाँच मुख्य मानदण्ड-दाखिला, हाजिरी, स्कूलों में रोके रखना, अध्ययन के न्यूनतम स्तरों को प्राप्त करना तथा सामुदायिक सहभागिता के आधार पर स्कूल के कार्य का आवधिक मूल्यांकन करने के लिए अनुदान देने वाली एजेंसी द्वारा अनुवीक्षण तथा मूल्यांकन प्रणाली की रूपरेखा तैयार की जाएगी।

7.5.9 स्कूल चलाने के लिए पात्र एजेंसियों को केन्द्रीय सहायता दी जाएगी।

(ग) अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम

7.5.10 अनौपचारिक शिक्षा योजना को सुदृढ़ बनाने के लिए निम्नलिखित कार्यनीतियां अपनाई जाएंगी :

(क) प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण के लिए की गई सूक्ष्म आयोजना प्रक्रिया के आधार पर अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों का प्रावधान किया जाएगा। अनौपचारिक शिक्षा मुख्य रूप से उन बच्चों की, विशेषकर लड़कियों की शिक्षा की जरूरतों को पूरा करेगी जो कि औपचारिक स्कूलों में भाग नहीं ले सकीं हैं।

(ख) उन बच्चों तथा युवाओं के लिए जो अनौपचारिक पद्धति से पास होते हैं उन्हें विभिन्न व्यावसायिक तथा तकनीकी पाठ्यक्रम प्रदान किए जाएंगे। श्रमिक विद्यापीठ तथा स्वैच्छिक एजेन्सियों को इस प्रक्रिया में शामिल किया जाएगा।

(ग) स्वैच्छिक एजेन्सियों को, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहां औपचारिक शिक्षा प्रणाली प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण की जरूरतों को पूरा नहीं कर सकी है,

अनौपचारिक शिक्षा की परियोजनाओं को शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

(घ) सूक्ष्मायोजना

7.5.13 सूक्ष्मायोजना "एक परिवार और शिशु-वार कार्रवाई योजना" तैयार करने की एक प्रक्रिया है जिससे" प्रत्येक शिशु नियमित रूप से स्कूल अथवा अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र में उपस्थित होता है, अपनी शिक्षा अपने सुविधाजनक स्थान पर जारी रखता है, और कम से कम 8 वर्ष तक स्कूल शिक्षा अथवा अनौपचारिक केन्द्र पर उसके समकक्ष शिक्षा पूर्ण करता है" सूक्ष्मायोजना में क्षेत्र विशिष्ट आयोजन अनिवार्य तौर पर शामिल होती है जिसमें क्षेत्र आदर्शतः एक राजस्व गांव, परन्तु व्यावहारिक रूप से एक ब्लाक, तालुक अथवा जिला होता है। इस क्षेत्र में यह उपाय जिनमें सूक्ष्म स्तरीय आयोजना संचालित की जाएगी निम्नलिखित है :

(5) यह देखना कि सभी बच्चों, विशेषकर बाालिकाएं और अनूसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के बच्चे नियमित और वास्तविक रूप में प्रारम्भिक शिक्षा में भाग लेते हैं :

7.5.16 वर्ष 1992-93 के दौरान सूक्ष्मायोजना को लगभग 20 परियोजना क्षेत्रों में प्रयोगात्मक आधार पर परिचालित किया जाएगा। कार्यान्वयन के दौरान प्राप्त अनुभव के आधार पर आठवीं योजना के दौरान लगभग 100 जिलों को शामिल करनें के लिए इसका विस्तार किया जाएगा। कुछ समय बाद यह योजना समस्त देश को शामिल कर लेगी ताकि सर्वसुलभ पहुंच और नामांकन और सबको स्कूल में पढ़ाई जारी रखने के लिए रोके रखने की सुनिश्चित व्यवस्था की जा सके।

(ड.) आपरेशन ब्लैकबोर्ड

(iii) अपर प्राथमिक स्कूलों को (क) प्रत्येक कक्षा/अनुभाग को कम से कम एक कमरा, (ख) एक प्रधानाध्यापक सह-कार्यालय कक्ष, (ग) लडकियों और लड़कों के लिए पृथक शौचालय संबंधी सुविधाएं (घ) एक पुस्तकालय सहित अनिवार्य अध्ययन

शिक्षण उपकरण (ड.) प्रत्येक कक्षा/अनुभाग के लिए कम से कम एक शिक्षक और (च) वस्तुओं को बदलने तथा छोटी-मोटी मरम्मत आदि के लिए एक आकस्मिकता अनुदान प्रदान करना।

राजस्थान में बालिका अभियान

राजस्थान सरकार ने यूनीसेफ की सहायता से 1984 में महिला विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया था। इस कार्यक्रम का मुख्य ध्येय "शिक्षा प्रशिक्षण के द्वारा वे जानकारी प्रदान कराना था जिससे महिलाऐं शक्ति सम्पन्न हो सकें और अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुधार सकें" महिला विकास कार्यक्रम देहाती क्षेत्रों में महिला संघ के निर्माण का प्रयास करता रहा है जिससे महिलाएं समूह में गठित होकर अपनी आधीनता के कारणों पर विचार कर सके, उनमें आत्मविश्वास जगे जिससे वे विभिन्न प्रकार के उत्पीड़न को उखाड़ फेकें। इस प्रक्रिया से यह भी अपेक्षित है कि महिलाएं विकास की प्रक्रिया में क्रियाशील साथी बनें ना कि विभिन्न विकास कार्यक्रम की केवल उपभोक्ता बन कर रह जाएं। इस समय 9 जिलों में महिला विकास कार्यक्रम चल रहे थे और महिला-समूह शक्ति निर्माण में कार्यरत थे । यद्यपि महिला विकास प्रोग्राम देहाती क्षेत्र की महिलाओं को मुख्य रूप से इंगित करता है तथापि इस प्रक्रिया से ही बालिकाओं के साथ काम करने का विन्यास भी हो गया । इसके परिणाम स्वरूप पिछले 6 वर्षो में प्रत्येक जिले में कुछ न कुछ कार्यक्रम आयोजित किए गए जिसके अर्न्तगत बालिकाओं के लिए शिविर और बालिका मेले आयोजित हुए। बालिकाएं आती और ग्रामीण स्तर पर संयाजित जाजम (रंगबिरंगे मोटे कपड़े की दरी पर बैठकर बातचीत करना) पर अपनी स्वास्थ्य संबंधी और प्रजन्न संबंधी जानकारी प्राप्त करने की तीव्र इच्छा प्रकट करतीं।

महिला विकास अभियान की साथिनों ने 1988-89 में जो बाल विवाह के विरूद्ध महाज चलाया वह निरर्थक ही रहा जिससे रणनीति का पुनर्वालोकन करने की आवश्यकता हुई। ऐसे वातावरण में जहां आयु सीमा की अवहेलना में परिवार के सारे बच्चों के साामुहिक विवाह पारिवारिक किफायत के एक साधन माने जाते हैं। बाल-विवाह निषेधक कानून को लागू करना संभव नहीं, विशेषकर तब जब कि स्वंय कानून के संरक्षक इस प्रथा के साझेदार हैं। राजकीय स्तर की एक कार्यशाला में साथिनों ने बचपन, किशोरावस्था, बाल विवाह, परितज्यता, क्रूरता अैर भेदभाव आदि विषयों पर अपने अनुभव के आधार पर चर्चा की । इस कार्यशाला में चर्चित विवाह व भेदभाव संबंधी उपर्युक्त विवेचनों से अनेकों गीत, लघु नाटिकाओं और पोस्टरों का

विन्यास हुआ। काफी विचार विनिमय, नियोजन और प्रभावी संघटन के लिए साझेदारी अनुभव प्रणाली का उपयोग करते हुए 1989-90 में अनेक जिलों में बालिकाओं के लिए विशेष प्रोग्राम आयोजित किए गए। खेलों, गीतों, नाटकों और बातचीत के माध्यम से इन शिविरों और बालिका मेलो में बालिकाओं को अपने आपको व्यक्त करने के अवसर मिले । एक जिले में कार्यानुभव के द्वारा एक को एक पढ़ाए कार्यक्रम उन बालिकाओं के लिए नियोजित किया गया जो चरवाहे का काम करती थी और स्कूल नही जा पाती थीं।

दूसरी और साथिनों ने नर्स, दाइयों के कार्य के लिए आंगनवाड़ी कर्मचारी और ग्राम सेविका को प्रेरित किया। ग्राम स्तर पर एक अन्य भव्य मेले का आयोजन हुआ। इसमे हजारों महिलाओं ओर बच्चों ने भाग लिया। अन्य जिलों में जाति पंचायतों से बातचीत शुरू हुई जिनका विषय था कि विवाह की आयु सीमा क्यों बढ़ाई जाए। बालिकाएं वृक्षों के पुनः आरोपन में जुटीं और उन्होंने लघु संचय खाते खोलने में सहायता की। इसी प्रकार एक जिले में बालिकाओं के लिए स्वास्थ्य मेला लगाकर जहां उन्हें खेल-कूद का मनोरंजन प्रदान किया गया वहां उनकी डॉक्टरी जांच भी की गई जिससे उनके आहार के स्तर को आंका जा सके।



एक अर्थ में बालिका अभियान ने यह दिखा दिया कि महिला विकास का कोई भी कार्यक्रम कमजोर ही रह जाएगा जब तक कि उसमें बालिका व किशोरियों से संबंधित विषय समविष्ट न हो। साथ ही महिला विकास कार्यक्रम गत संप्रेक्षण देहाती महिलाओं को संकलित करने के लिए बढाए जा सकते हैं। और कार्यरत बालिकाओं के लाभान्वयन के लिए बढ़ाए जा सकते हैं।

बालिका अभियान 1991 में सम्पन्न हुआ। अनुभव ने यह दर्शाया कि अभियानोत्तर नियोजन अति आवश्यक है। किसी भी ऐसे अभियान से जहां जन चेतना व जनशक्ति को सफलतापूर्वक उगाया गया हो यह अपेक्षा भी रहती है कि अभियानोत्तर कार्यक्रमों की एक संकलित योजना बनाई जाएगी और उसे सुचारिता से कार्यन्वित भी किया जाएगा। ऐसा न होने पर अभियान की सफलता संदिग्ध हो सकती है। यह इसलिए कि ग्रामीण जन समूह उसमें विश्वास खो

बैठता है। ऐसा न हो पाने पर भी यह सम्भव रहता है कि अभियान के अंगारों को हवा दी जा सके। किन्तु इसके लिए भी योजनाबद्ध होना आवश्यक है। क्योंकि अभियान ने एक रणनीति और जन-जागरण की वह पद्धति सुझाई जिससे बालिका शिक्षा, स्वास्थ्य संवर्धन हेतु जन समूह का सकारात्मक सहयोग प्राप्त हो सके।
यदि बालिका और महिला स्थिति में परिवर्तन लाना है तो उन संप्रेक्षण माध्यमों को सही ढंग से प्रयुक्त करना पड़ेगा जिनका बालिका अभियान के दौरान समुदाय के सान्निध्य से उद्गम हुआ।

प्रथम चरण

प्रथम चरण में अभियान निदेशक प्रशिक्षण द्वारा ग्राम-सम्पक्र सम्पन्न हुआ। अभियान की रणनीति बनी और उसे परिष्कृत किया गया।

द्वितीय चरण

द्वितीय चरण में बीस सहेलियों के समूह को और पांच साथिनों के दूसरे वर्ग को पांच दिन का शिविर लगाकर एक परिचयता और दो साथिनों ने प्रशिक्षण दिया। सहभागिता को प्रणाली में विशेष प्रशिक्षण सामग्री का विन्यास हुआ जिससे ग्राम स्तर पर संघटनात्मक प्रक्रिया द्वारा प्रशिक्षणार्थी अभियान को ग्रामीण स्तर पर कार्यन्वित कर सकें।

तृतीय चरण

इस शिविर में भाग लेने वाली बालिकाओं और महिलाओं के प्रति क्रियाओं के जो सकारात्मक उत्तर आए विशेषकर उनके जिन्होंने विभिन्न प्रकार की क्रियाओं में भाग लिया। पुरुषों की प्रतिक्रियाएं दोनों तरह की थीं।

चतुर्थ चरण

बालिका मेले में भाग लेने वाली बालिकाओं ने तीव्र जिज्ञासा का प्रदर्शन किया।

राजस्थान के तीन जिलों में बालिका अभियान का मूल्यांकन किया गया। यद्यपि यह अभियान एक छोटे पैमाने पर किया गया परन्तु महिला विकास कार्यक्रम को इसने महत्वपूर्ण समर्थन दिया। राजस्थान के तीन जिलों में किया गया मूल्यांकन ने बालिका अभियान को पर्याप्त

सफल कार्यक्रम आंका। यह अभियान महिला विकास कायक्रमों के अनुभवों से ओत-प्रोत था और इसनें पुनः महिला विकास कार्यक्रम को हिलाया-डुलाया। कुछ मुख्य बिन्दु जो बालिका अभियान से उभरे वह इस प्रकार है :

1. यह एक सुनियोजित अभियान था जिसका सूत्रपात राजकीय प्रशासकों द्वारा हुआ। इस अभियान का पूरा ब्यौरा उन माध्यमों से तैयार किया गया जिन्हें महिला और बाल विकास विभाग युनीसेफ की सहायता से नियोजित धारावाहिक प्रक्रियाओं द्वारा सावधानीपूर्वक प्रति वर्ष बचते रचते रहते हैं। इनका वर्षों का अनुभाव इस अभियान के लिये एक उपलब्धि है।

2. यद्यपि राज्य ने पहला कदम उठाया तथापि स्थानीय जोश और सहभागिता की कमी न रही। योजना को विकेन्द्रित करने के लिए केन्द्र और विकेन्द्री नियोजन पद्धति को आवश्यक माना गया।

3. प्रमुख मुद्दों के रूप में बालिका अभियान ने बाल-विवाह उन्मूलन, स्वास्थ्य और शिक्षा सम्बन्धी प्रश्न उठाए। इन प्रश्नों को किताबों, पोस्टरों, गीतों, नारों और फिल्मों द्वारा सामान्य स्तर पर गांवों में पहुंचाया गया। इस प्रकार से आयोजित प्रशिक्षार्थियों का पाँच दिन का शिविर इन लोगों के नए गीतों की रचना, चित्रों के निर्माण, छोटे-छोटे खेलों का नियोजन, नाटक बनाने का अवसर कुछ क्रियाशील संवादों द्वारा उपलब्ध कराता था।

4. बालिका अभियान महिला विकास कार्यक्रम के मुख्य कार्मिकों तथा उसकी प्रशिक्षण रणनीति पर आधारित था।

5. बालिका अभियान साथिन (एकाकी महिला विकास कार्मिक) से आरम्भ होकर समूह तक पहुंचा इन सब महिलाओं से यह अपेक्षित था कि वे अपनी बालपन की यादगारें बताएं। साथ ही यह भी था कि वे उस समय की घटनाओं पर दृष्टिपात करें। इससे एक गहरा भावात्मक वातावरण उत्पन्न हुआ जिसके कारण शायद पहली बार उन्होंने अपनी बेटियों को एक अन्वेषक के दृष्टिकोण से देखा। खोए हुए बचपन, घुटी हुई स्थितियां यह विश्वास दिलाने लगी कि अब उनकी बेटियों के साथ कदाचित् ऐसा न हो। अब वह नवीन विचारधारा को फैलाने के लिए पर्याप्त समर्थ हो गई।

6. यह पाँच दिन का प्रशिक्षण शिविर ग्रामीण स्तर के दो दिन के शिविर और बालिका मेला जैसे क्रियात्मक कार्यक्रम से सीधे तरीके से जुड़ा था। उन्होंने वहां जाकर काम करने

की योजना बनाई। कोई लक्ष्य निर्धारित न था। उनको जिम्मेदारी सौंपी गई थी। उन्होंने अपनी जिम्मेदारी समझी, अपनेपन का अनुभव किया और आत्मविश्वास से अभियान को आगे बढ़ाया।

7. बालिका अभियान ने ग्रामीण महिलाओं को महिला अनुभव से सीखने का अवसर प्रदान किया। पाँच दिन के शिविर में उन महिलाओं की हिचकिचाहट दूर हो गई जो आत्मविश्वास की कमी के कारण बोलने में पीछे रहती थीं। साथिन को लगा कि वह भी बोल सकती हैं; अभियान चलाने के लिए बोल सकती हैं और उसके लिए सोच भी सकती हैं। सामुहिक स्तर पर उन्हें क्रियाशील कर दिया और "वे प्रश्न कर सकती हैं" ऐसी चेतना भी उनमें उत्पन्न हो गई ।

8. बालिका अभियान ने बाल-विवाह, स्वास्थ्य और बालिकाओं के लिए शिक्षा जैसे प्रमुख प्रश्न क्रमबद्ध किए। अभियान ने एक रास्ता बताया, उस में विभिन्न क्रियाओं को करने के लिए स्थान निश्चित किए और उन क्रियाओं का क्रम निर्धारित किया। समुदाय में "बालिका शिक्षा" एक मुख्य और शक्तिशाली मांग के रूप में उभरी।

9. बालिका अभियान ने मौखिक परम्परा और लौकिक तरीके अपनाए जिसमें गीत, नृत्य और नाटक गीत बहुत प्रभावशाली माध्यम बने। नुक्कड़ नाटकों से महिलाओं ने नए विचार संचारित करने के लिए माध्यम की पहचान कर ली और वह भी इस भूमिका में कि उन्होंने क्या देखा। बालिका अभियान ने यह दर्शाया कि पारम्परिक सांस्कृतिक तरीके बहुत सामाजिक शक्ति उत्पन्न कर सकते हैं।

10. पोस्टर, गीत, पर्चियों, नारे और नाटकों के विचार बालिका अभियान की सफलता के मुख्य द्योतक थे। इन विधानों में रचे विचार अधिकांश महिलाओं को ग्राही लगे। गिरता हुआ लिंग अनुपात, पैत्रिकता, जैसी कुछ अवधारणाएं उनके लिए नई थीं। किन्तु उनको जानने व समझने की जिज्ञासा अवश्य प्रदर्शित हुई। वे अपने अपने जीवन में "बालिका की खोज" कर रही थीं।

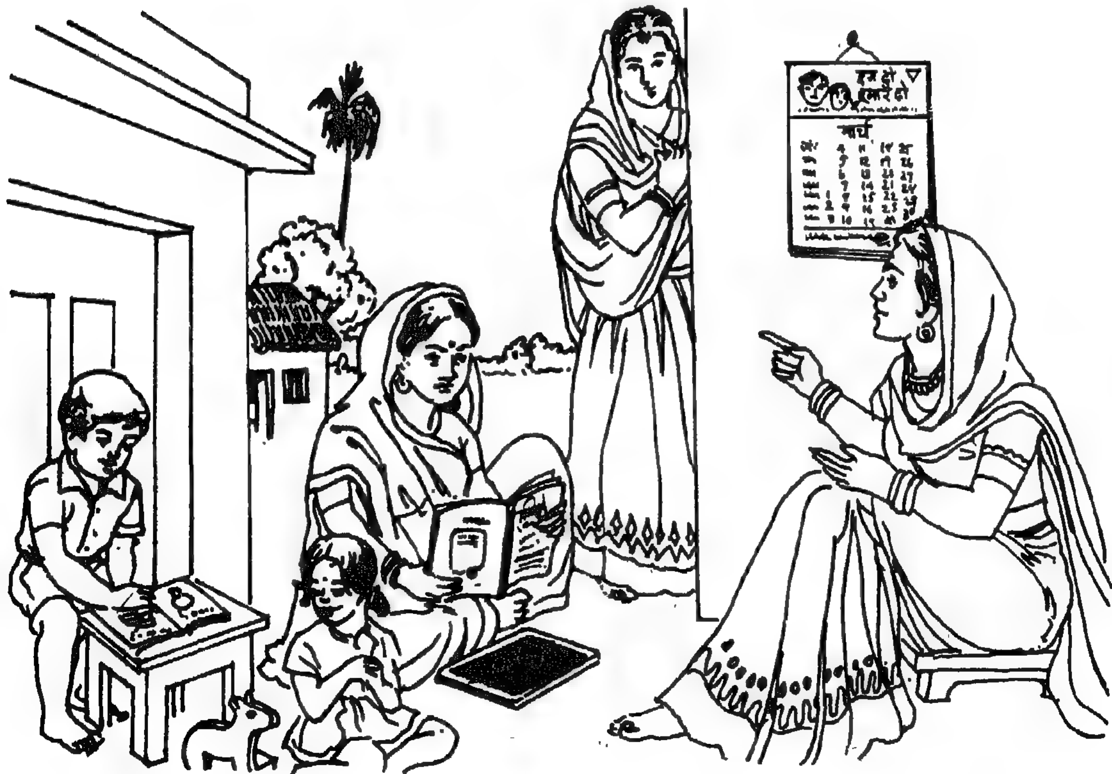
11. बालिका अभियान ने ग्रामीण पुरुषों के (जिनमें ग्रामीण नेतागण भी शामिल हैं), विचारों को बदलने की राह सुझाई हालांकि बहुत से पुरुषों को उन बातों पर विश्वास नहीं आया जिन्होंने उन्हें सुना और देखा किन्तु कुछ ऐसे पुरुष जरुर आगे आए जिन्हें बालिका संबंधी समस्याओं में गहरी रुचि उत्पन्न हुई।

12. बालिका अभियान ने शिक्षकों के विचार परिवर्तन के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता को उजागर किया जिससे शिक्षक बालिकाओं के नामांकन की बढ़ोतरी करायें।

13. अभियान ने निःसन्देह बालिका शिक्षा की मांग को बढ़ावा तथा साथ ही महिला साक्षरता की आवश्यकता समझी और उसे मांगा।

14. बालिका अभियान के मूल्यांकन ने महिला विकास प्रोग्राम को शिक्षा से जोड़ने की आवश्यकता को उजागर किया ताकि समुदाय संघटित हो और माता-पिता अपनी बालिकाओं को विद्यालय भेजने के लिए अग्रसर हों जिसके लिए वे महिला समूहों को भागीदार बनाये और शैक्षिक कार्यकलापों को मॉनीटर करें (चाहें वे औपचारिक हों अथवा अनौपचारिक)।

15. साथिनों तथा अन्य महिलाओं ने महिलाओं की शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया विशेषकर स्वास्थ्य शिक्षा। यह माना गया कि महिला विकास कार्यक्रम साक्षरता पर अग्रगामी कदम उठा सकते हैं और किशोरियों को शिक्षा-दीक्षा मैं हस्तक्षेप कर सकते हैं।



सात वर्ष आयु से ऊपर जिलावार तुलनात्मक साक्षरता स्थिति — 1981-91, पुरुष/महिला

आंध्र प्रदेश

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	सिरिकाकुलम	311	479	124	243	39.4	50.3	15.4	25.0	56.2	66.7
2.	विजयानगरम	276	414	111	209	37.2	47.5	14.9	23 9	57.2	66.9
3.	विशाखापट्टनम	467	806	237	484	43.7	58.6	22 6	35.9	68.0	75.8
4.	पूर्व गोदावरी	762	1067	522	816	49.9	56.6	34.6	43.2	81.3	86.6
5.	प. गोदावरी	617	895	442	705	51.9	61.2	37.6	48.3	83.9	88.2
6.	कृष्णा	732	987	503	719	56.9	63.4	40.5	47.5	82.9	85.5
7.	गुन्टूर	774	1030	440	647	53.3	59.7	3.12	38.4	73.6	78.1
8.	प्रकासम	467	639	199	327	48.4	55.2	21.2	29 0	60.5	68.5
9.	निलौर	408	605	222	381	48.4	60.5	27.0	38.7	71.3	77.9
10.	चित्रूर	589	893	264	509	51.0	65.1	23.7	38.2	63.1	73.6
11.	गुडप्पा	425	632	163	212	52.3	65.8	20.9	33.9	56.7	67.5
12.	अनन्तपुर	522	770	197	364	49.1	56.9	19.8	28.3	56.6	65 9
13.	कुरूनूल	447	679	193	323	48.2	53.9	20.2	26.8	59.7	65.9
14.	महबूब नगर	338	530	124	239	36 4	41.0	12.8	18.9	54.3	62.9
15.	रंगारेड्डी	307	670	142	391	47.4	61.9	23.3	38.3	64.8	75.8
16.	हैदराबाद	750	1009	502	746	77.2	75.8	57.1	60.3	84.4	88.2
17.	मैडक	283	428	93	188	38.4	45.0	12.8	20.3	50.0	61.9
18.	निजामाबाद	259	401	94	194	38.1	48.0	13.7	22.7	52.9	64.5
19.	आदिलाबाद	224	396	74	182	33.4	45.5	11 4	21.3	50.5	63.5
20.	करीम नगर	378	680	129	325	37.6	53.8	12.8	26.0	51.0	65.0
21.	वारांगल	378	642	147	316	39.8	54.0	16.3	27.5	57.4	67.1
22.	खम्मम	288	476	145	280	39.8	50.9	21.3	31.0	69.0	75.4
23.	नालगोड़ा	358	616	141	297	38.1	51.2	15.6	25.6	57.6	66.3

1989-91

अरुणाचल प्रदेश

क्र. सं.	जिले का नाम	पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों मे)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
		(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	तावाग x	-	5	-	2	-	41.7	-	20.0	-	62.9
2.	प. कामेग	9	14	4	7	34.5	56.0	15.4	35.0	66.9	75.0
3.	प. कामेय	2	8	1	3	14.7	38.1	3.5	15.8	68.6	57.4
4.	लोबट सुबनसिरि	13	33	5	18	33.9	50.0	12.2	31.6	51.7	76.2
5.	अपर सुबरसिटि	4	10	2	5	24.6	47.6	6.5	27.8	66.7	72.2
6.	प. सिआंग	12	21	4	10	38.0	53.8	16.8	30.3	53.7	70.4
7.	पू. सिआंग	16	24	4	12	42.0	54.4	19.3	33.3	52.7	74.1
8.	दिवांग वैली	7	11	2	5	40.8	57.9	17.1	33.3	57.8	70.8
9.	लोहित	14	30	5	13	44.4	61.2	22.1	34.2	62.9	69.2
10.	चंगलांग	#	20	#	10	#	50.0	#	29.4	#	72.5
11.	तिरप	19	15	5	6	34.0	40.5	12.1	19.4	45.7	62.7

X तवांग नया जिला प. कामेग से बना।

चंगलांग नया जिला तिरप से बना।

असम

क्र. सं.	जिले का नाम	पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
		(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	धूबरी		247		143		44.7		27.5		75.6
2.	कोखराझार		165		99		49.5		31.8		77.6
3.	बोगाइगांव		202		123		59.8		39.0		78.5
4.	गोलपारा		144		94		52.4		36.2		81.3
5.	वरपेटा		297		176		51.3		32.7		77.2
6.	नलवारी		291		181		68.6		45.6		76.9
7.	कामरूप		659		426		76.8		56.8		84.2
8.	दारंग		279		166		51.8		32.8		77.0
9.	सोनितपुर		348		218		57.7		40.1		81.2
10.	लखिमपुर		208		149		66.0		51.4		87.1
11.	किमाजी		129		75		64.8		41.0		76.7
12.	मोरीगांव		150		96		56.0		38.4		80.9
13.	नवगांव		494		343		62.2		46.6		85.2
14.	गोलाघाट		230		157		67.8		50.6		84.9
15.	जोरहट		282		198		76.8		59.3		86.6
16.	सिवसागर		284		202		74.7		58.7		87.5
17.	डिवरूगढ़		308		203		69.7		51.0		83.8
18.	तिनसूखिया		249		148		60.3		40.4		79.3
19.	कारवीलॉग		156		90		55.9		35.9		77.3
20.	नार्थ कोनार हिल		43		26		66.2		47.3		82.2
21	करीमगंज		225		145		65.4		44.9		80.9
22.	हाइलाकंडी		121		71		64.4		41.0		77.2
23.	कोछार		351		240		69.0		50.7		84.3

नोट : राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा संस्थान, साख्यिकी डेटा आधारित शिक्षा के लिये नई दिल्ली 1992

1981 में असम में जनगणना नहीं हुई थी।

बिहार

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारो में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1	पटना	815	1076	349	545	-63 3	68 8	30.9	40.1	64.2	72.3
2.	नालन्दा	386	529	138	231	56.7	62.2	22.2	30 2	55.1	64.2
3	भोजपुर	565	790	170	294	57 6	65.0	18.3	26 8	47.4	57 1
4.	रोहतास	532	757	168	301	54.0	61.4	18 9	27 4	50.6	60 3
5	औरंगाबाद	263	400	81	159	52 6	61.7	17.0	26 8	48.2	59.5
6	जहानाबाद	-	316	-	123	-	64 1	-	27.1	-	58 4
7.	गया	692	613	225	249	54 3	54 8	18.7	24 1	50 5	60 1
8.	नवादा	217	309	68	115	50.2	54.6	15 6	21 7	47 6	56.1
9.	सारन	432	618	122	229	53 4	58 8	14.5	22 5	43 3	55.0
10	सिवान	316	481	94	188	47 6	55 7	12 9	21.4	43.9	55 7
11	गोपालगज	228	354	55	118	42 8	50.8	10.3	17.5	38.6	50 8
12	प. चम्परान	279	403	80	131	34.0	40 3	10.9	14 9	47 1	52.4
13.	पू. चम्परान	358	499	98	193	35 7	38.3	10 6	16 8	45 0	59.5
14	सितामढ़ी	280	404	87	142	34.9	39.5	11.8	15.7	49.4	55 5
15.	मुजफ्फरपुर	409	613	147	261	42.7	49.2	16.0	23.1	53 9	62.8
16	वैशाली	313	495	102	199	47 9	55 0	15 5	24.0	49 1	59.8
17.	वेग सराय	266	379	103	164	44.8	49.2	18 4	23 7	57.6	63 9
18	समस्तीपुर	384	568	128	225	45.6	50.0	15 5	21 3	50 6	59 0
19.	दरभंगा	348	512	121	201	42.9	48.4	15 2	20.8	52.1	59 0
20.	मधुबनी	388	575	105	188	41 4	48 7	11.4	17.1	42.9	15 0
21.	सहरसा	459	498	126	144	37.3	46.4	11 2	15.1	45 1	47.6
22.	माधवपुरा	@	200	@	66	@	39 7	@	14 8	@	52.8
23.	पुर्नया	519	308	156	118	35.0	38 7	11.6	16.4	48 7	58.3

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
24.	कटिहार	218	298	75	115	37.1	38.7	14.0	16.4	53.6	58.5
25.	खगरिया	#	182	#	71	#	42.7	#	19.2	#	60.4
26.	मूंगेर	641	728	219	291	46.6	55.6	17.5	25.2	53.4	60.9
27.	भागलपुर	511	720	190	308	46.7	52.3	19.6	25.5	57.6	64.1
28.	गोददा	621	177	182	60	40.5	49.0	12.6	18.0	46.7	52.8
29.	साहिबगंज	^	198	^	83	^	36.7	^	16.4	^	61.0
30.	दुमका	^	309	^	109	^	50.0	^	18.5	^	53.4
31.	देवघर	^	211	^	71	^	54.4	^	20.1	^	52.9
32	धनबाद	588	876	208	394	61.7	73.4	28.2	39.6	59.9	68.3
33.	ग्रहिहीड	319	485	81	153	46.1	52.4	12.1	17.6	41.2	49.5
34.	हजारीबाग	389	625	111	231	43.9	52.7	13.3	20.9	45.7	55.9
35.	पलामू	299	448	82	148	38.9	43.8	11.4	15.5	44.4	51.5
36	कोहरडग्गा	&	64	&	29	&	54.2	&	25.2	&	63.2
37.	गुमला	&	243	&	128	&	51.9	&	27.6	&	69.4
38.	राची	649	606	282	313	51.1	65.7	23.2	36.6	62.0	70.8
39.	प. सिह भूमि	671	517	283	298	55.1	75.6	25.0	48.1	61.5	76.9
40.	पूर्व सिंह भूमि	%	408	%	165	%	55.5	%	23.3	%	58.6
41.	अरारीया	$	249	$	.85	$	36.5	$	13.7	$	53.5
42.	किशनगंज	$	135	$	42	$	32.7	$	11.0	$	49.3

* (जहानाबाद) गया जिले से बनाया गया।
@ (माधवपुरा) नया जिला सहरसा से बनाया गया।
\# (खगरिया) नया जिला मुंगेर से बना।
$ (अरारीया और किशनगंज) नया जिला पूर्निया से बना।
& (लोहरडग्गा और गुमका) नया जिला रांची से बना।
^ (गोड्डा, साहिबगंज, दुमका, ओर देवगढ़) यह सन्थाल परगनाथ से संबधित हैं।
% (पूर्वी सिंह भूमि, पश्चिमी सिंह भूमि) यह सिंहभूमि से सबधित है।

गोवा

		पुरुष साक्षरता (हजारों मे)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	नार्थ गोवा	3301	259	234	200	76 0	88.4	55.2	70.4	84 0	88 5
2.	साऊथ गोवा	#	181	#	142	#	81 5	#	65.4	#	88.9

\# (नार्थ गोवा और साउथ गोवा) गोआ से सबधित हैं।

गुजरात

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों मे)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	जामनगर	352	468	200	307	60 1	69.9	35 9	47 9	71 4	81 0
2.	राजकोट	611	862	386	601	69.2	78 0	45 9	58 0	71 4	85.0
3.	सुरेंद्र नगर	256	352	124	197	58.5	66.4	30 6	40 1	67 7	74 6
4.	भावनगर	479	691	250	417	62.1	69 5	33 6	44 1	69.9	77.2
5.	अमरेली	280	377	168	256	63.4	70 5	38 9	48 7	75.7	81 6
6.	जूनागढ़	553	757	300	485	63 0	73.2	35.7	48 7	71 8	79 6
7	कच्छ	227	334	137	212	53 5	62 4	31.8	40 6	74 9	78 6
8.	वनासकाठा	285	498	89	195	42.2	52.6	13 9	22.0	49.0	58.2
9.	सावरकांठा	399	564	183	319	64 5	74.5	30 3	43.5	63.7	73.4
10.	मेहसाना	743	988	435	628	70.0	77 7	41 8	51.8	74.6	79.6
11	गाधीनगर	94	167	53	135	76.6	93 3	46 5	81.8	74 6	93 2
12.	अहमदाबाद	1313	1795	808	1228	77.1	84 3	53.7	63 9	81.2	85.7
13.	खेड़ा	965	1242	482	708	74 2	81 9	40.5	50 6	69.7	75 7

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
14.	पंचमहल	473	740	163	326	49.4	57.9	17.9	26.7	52.5	62.6
15.	वडोदरा	768	1023	447	662	68 8	75.2	44.0	53.1	77.2	82.2
16	भड़ोच	367	496	205	313	65.9	73.4	39.5	49.5	74.2	80.1
17.	सूरत	701	1002	443	686	65.2	66.4	45 0	50.3	81.1	85.6
18.	वलसाड	491	701	326	501	65.8	74 5	44.8	55.5	80 7	85.2
19	डांग	22	34	11	20	47.1	55.7	25.5	33.3	68.2	74.7

हरियाणा

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों मे)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	अम्बाला	390	365	222	250	62.7	75.9	41.4	58.1	78.4	86.1
2.*	यमुनानगर	*	252	*	159	*	70.2	*	50.5	*	82.8
3.	कुरुक्षेत्र	249	191	110	117	50.7	68.7	26.0	47.6	66.2	80.9
4.	कैथल	#	197	#	86	#	54.1	#	27.8	#	66.2
5.	करनाल	331	255	145	146	57.2	65.7	29.7	43.3	66.7	78.3
6.	पानीपत	@	244	@	128	@	65.9	@	40 8	@	75.0
7.	सोनीपत	242	254	97	136	65.6	76.7	30.3	48.2	61.6	75.8
8.	रोहतक	395	591	164	364	68.4	75.1	32.5	53.7	62.9	82.4
9.	फरीदाबाद	283	477	98	214	63.3	72.3	27.7	39.1	58.1	68.3
10.	गुड़गांव	215	315	77	147	59.2	63.8	24.3	33.7	56.7	67.9
11.	रिवाड़ी	$	217	$	114	$	81.3	$	46.3	$	71.8
12.	महेंद्रगढ़	271	207	92	97	68.9	73.4	25.0	36.5	52.5	65.7
13.	भिवानी	230	336	69	151	60.1	68.9	20.1	34.6	48.9	65.7
14.	जिंद	190	255	51	107	46.5	59.6	14.8	29.7	46.0	64.7
15.	हिसार	327	492	112	224	50.4	60.7	20.1	32.0	55.2	67.5
16.	सिरसा	145	225	61	119	47.9	57.0	23.0	32.4	63.7	73.9

* (यमुनानगर) नया जिला अम्बाला से बना।

\# (कैथल) नया जिला कुरुक्षेत्र और जिंद से बना।

@ (पानीपत) नया जिला करनाल और सोनीपत से बना।

$ (रिवाड़ी) नया जिला महेंद्रगढ़ से बना।

हिमाचल प्रदेश

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. स.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	चम्बा	61	97	20	45	46.7	57 7	16 5	28.0	51.4	64 8
2.	कांगड़ा	282	370	196	313	70.9	79.2	47.8	62.9	80.9	88.8
3.	हमीरपुर	88	116	74	110	76.0	83 5	53.6	67 9	83.8	90.4
4.	उना	92	125	64	99	72.3	80.6	47.9	61.9	79.9	87.0
5.	विलासपुर	66	92	42	71	66.3	76 0	41.4	57 7	77.0	86.4
6.	मन्डी	167	238	86	161	65.0	75.1	33.1	49.1	67.9	79.3
7.	कूल्लू	59	91	21	46	57 5	68.9	23.0	37.7	55.4	69.9
8.	लाहौल स्पीति	8	11	2	5	50.0	78.6	18.3	41 7	49 1	67.7
9.	शिमला	46	210	68	128	63.9	77.2	35.1	52.5	68.9	80 1
10.	सोलन	81	125	41	77	63.1	75.3	34.6	50.7	69.8	79.7
11	सिरमौर	68	104	27	56	50.8	62.3	24.2	37.3	61.8	74.0
12.	किन्नौर	16	24	6	11	60.0	77.4	24.5	39.3	59.3	66.2

जम्मू और कश्मीर

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	अनन्तनाग	115		33		41 0		13.5		49.0	
2	पुलवामा	65		17		37.8		11.6		44 4	
3.	श्रीनगर	155		79		49.2		29.0		72 8	
4.	कुपवाड़ा	48		7		33 1		6.1		28.0	

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
5.	बदगाम	51		14		32.5		9.9		46.6	
6	बारामुला	107		29		37.0		12.0		46.4	
7.	कारगिल	11		1		38.0		38.2		18.3	
8	लेह	14		3		43.2		14.3		38.7	
9.	डोडा	64		15		32.5		9.2		40.5	
10.	उद्यमपुर	77		29		40.5		17.1		58 1	
11.	कठुआ	80		38		51.2		26.3		67.6	
12.	जम्मू	256		144		63.3		38.9		75 5	
13.	रजौरी	54		21		42 8		18.2		59.5	
14.	पूछ	41		12		42.2		14.1		48.5	

जम्मू और कश्मीर में 1991 की जनगणना नहीं हुई थी।

कर्नाटक

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	बेंगलूर	1502	1818	965	1352	70 0	86.0	49.9	70.3	82.5	89.5
2.	बेंगलूर देहात	*	444	*	266	*	62 1	*	38.9	*	76.7
3.	बेलगाम	734	993	345	560	58.7	66 0	29.0	38.5	65.5	73.4
4	बेल्लारी	308	459	138	243	50.9	57.2	23.4	31 1	62.7	70.2
5.	बिदर	189	305	68	151	46.9	56.8	17.1	29.3	53.6	67.6
6.	बीजापुर	541	852	215	482	55.6	68.5	22.4	39.9	57.3	73.3
7.	चिकमंगलूर	243	311	149	221	62.5	72.3	40.5	52.1	78.2	83.7
8.	चित्रकुट	438	628	228	383	58.8	67.0	32.7	42 9	70 9	77.7
9.	दक्षिण कन्नड	707	943	545	820	74.0	86.4	53 0	70 1	84.0	90.0
10.	धारवाड़	811	1070	422	639	66.2	71.0	36.2	44.6	70.3	76.7

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
11.	गुलबर्गा	374	548	132	251	44.5	49 9	16.0	23.6	52.6	63.8
12.	हासन	327	458	174	303	58.2	69.8	31.6	45 9	70.0	79.4
13.	कोडाग	133	157	94	127	66.4	77.0	51 0	62.6	86.2	89 7
14.	कोलार	417	598	205	348	53 0	63 5	26.9	37 9	67.1	74.6
15.	मडया	287	422	134	254	48 5	60.3	23 8	37.2	65 3	76 1
16.	मैसूर	513	770	283	494	46.9	57.09	27 4	38.1	73.1	79 8
17.	रायचूर	316	461	115	203	44 0	47.3	16.1	21 1	53.6	61.6
18.	शिमोगा	450	586	272	406	64.3	72.0	91 4	51.5	77 8	83.2
19	तुमकुट	479	666	237	403	58.0	67.8	29.9	42.4	67.6	76 7
20.	उत्तर कन्नड़	310	398	201	288	68.9	76.8	46.6	57.0	80 3	85.0

* (बैंगलूर देहात) नया जिला बैंगलूर से बना।

केरल

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	कासरगोड	*	396	*	355	*		*		*	
2.	कन्नूर	977	901	831	882	86.6		70.2		89.8	
3.	कायनाड	182	255	136	218	77.6		61 8		88.3	
4.	कोज़ीकोट	837	1063	710	1005	90.2		74 2		90 4	
5.	मल्लपपुरम	756	1122	667	1101	81.5		66.8		90.5	
6.	पोलकाड	630	857	527	802	76.5		59 8		88.1	
7.	त्रिचूर	878	1070	877	1099	88 9		79.0		94.4	
8.	एरनाकुलम	1007	1189	905	1121	92.0		82 4		94.5	
9.	इददकी	350	432	292	386	84.1		72.9		92.8	

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
10.	कोट्टयम	699	787	661	769	95.1		89.3		96.9	
11.	अल्पपूजा	921	827	884	838	93.5		84 5		95.1	
12.	पथनमतिष्ठा	@	487	@	510	@		@		@	
13.	कोल्लाम	1063	965	978	939	90.1		80.1		94.2	
14.	तिरूअन्नतपुरम	941	1165	846	1131	86.2		74.6		93.0	

(कासारमोड) नया जिला कन्नूर से बना।

(पथनमतिष्ठा) नया जिला इदुकी, एरमत्पी और कायूलेन से बना।

कलानूर का नया नाम कानूर

पालकाट का नया नाम पालक्काड है

त्रिचूर का नया नाम त्रिशूर

एलत्पी का नया नाम अल्पजहा

किवलान का नया नाम कोल्लम

त्रिवेंद्रम का नया नाम तिरुवनन्तपुरम्

मध्य प्रदेश

		पुरुष साक्षरता (हजारों मे)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकाक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	मौरेना	269	429	58	126	48 1	56 1	12 7	20 0	39.4	50.2
2.	भिड	238	350	63	122	55.8	64 1	18.2	27.3	46.6	57.4
3	ग्वालियर	301	448	127	219	61 7	70 8	31 4	41.8	65 3	72 5
4	दतिया	68	104	17	35	50.4	59.1	15 1	23 5	43 7	54.9
5.	शिवपुरी	143	231	32	64	38.7	46 1	10.2	15.1	40.1	47.3
6	गुना	171	271	43	87	40.4	47 4	11 7	17 4	43.5	52 2
7	टिकमगढ	111	190	29	58	35 6	46.1	10 6	19.0	44 7	56.8

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
8.	छतरपुर	136	233	41	89	36.0	45.5	12.9	20.4	50.6	60.1
9.	पन्ना	82	133	22	50	36.7	44.9	10.8	18.9	44.5	58.0
10.	सागर	318	469	128	228	57.3	65.4	26.3	36.2	61.3	70.0
11.	दमोह	157	228	56	104	53.2	59.1	20.6	29.9	54.8	66.1
12.	सतना	234	362	73	153	48.8	58.0	16.3	26.7	49.4	62.1
13.	रीवा	235	383	65	159	48.3	58.4	14.0	26.0	44.0	60.8
14.	शाहडोल	202	349	56	136	36.3	74.5	10.8	19.7	44.8	57.9
15.	सिधि	124	240	23	68	30.6	41.0	6.0	12.7	32.4	46.1
16.	मंदसौर	298	444	91	174	57.1	67.8	18.4	28.2	48.4	58.1
17.	रतलाम	162	235	65	111	49.8	57.6	21.4	28.8	59.1	66.0
18.	उज्जैन	260	380	103	181	54.9	64.6	24.0	33.2	59.6	67.0
19.	शाजापुर	160	247	37	78	45.7	56.0	11.4	19.4	39.1	50.3
20.	देवास	161	264	48	101	49.4	60.0	15.7	25.0	47.8	57.8
21.	झबुआ	62	112	24	48	20.1	23.9	58.0	10.5	56.6	60.9
22.	धार	159	267	52	110	37.4	46.5	12.9	20.2	50.5	60.0
23.	इंदौर	436	628	237	387	71.1	79.9	43.9	54.4	75.3	80.3
24.	वेस्ट निमार	274	395	94	181	41.8	46.4	15.3	22.5	52.7	64.6
25.	ईस्ट निमार	247	345	104	182	52.0	57.0	23.5	32.1	61.4	71.4
26.	राजगढ़	116	193	278	59	34.7	45.6	8.8	15.2	39.4	48.9
27.	विदिशा	149	241	47	99	45.6	56.7	16.5	26.8	51.7	62.7
28.	भोपाल	259	434	151	283	66.5	74.2	45.4	54.5	80.0	84.0
29.	सिहोर	121	200	30	69	44.1	55.1	12.1	21.2	42.0	54.3
30.	रायसेन	124	203	38	83	42.1	53.1	14.7	24.7	49.9	62.0
31.	बेतूल	177	273	77	156	47.4	55.5	21.3	32.9	61.5	74.1
32.	होशंगाबाद	247	355	103	181	58.3	65.3	26.8	37.0	62.0	71.3
33.	जबलपुर	598	819	288	468	63.7	72.5	34.1	45.3	68.7	76.2
34.	नरसिम्हपुर	148	229	65	126	54.5	68.2	26.4	41.3	63.9	74.6
35.	मांडला	178	273	57	116	42.0	51.3	13.4	22.1	48.6	60.1

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
36.	छिंदवाडा	239	367	103	198	47.3	55.9	21.3	31.9	61.6	72.1
37.	सिओनी	155	234	61	123	47.0	56.5	18.9	30.5	57.1	69.8
38.	बालाघाट	268	377	117	219	57.6	67.7	24.9	39.3	60.6	73.5
39.	सरगूजा	203	357	60	140	29.8	40.9	9.3	16.9	46.8	57.8
40.	विलासपुर	623	973	205	413	52.2	61.9	17.4	27.0	49.8	60.4
41.	रायगढ़	272	397	99	188	45.4	56.2	16.5	26.7	53.2	64.4
42.	राजनन्दगांव	230	354	76	164	49.4	60.4	15.9	27.7	49.0	63.1
43.	दुर्ग	484	738	218	413	62.6	74.0	28.9	42.8	62.8	73.0
44.	रायपुर	678	1035	253	492	54.6	64.6	20.3	31.0	54 1	64.8
45.	बस्तर	191	312	65	140	23.7	33.6	8.7	15.1	50.8	62.0

महाराष्ट्र

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	वृहद बाम्बे	3351	4257	2105	2935	83.5	90.7	70.3	76.2	90.3	90.5
2.	थाना	1031	1844	606	1230	69.9	77.0	47.5	58.2	79 9	85.3
3.	रायगढ़	407	573	251	403	68.8	73.7	40.4	51.1	74.3	82.0
4.	रतनगिरि	554	443	437	377	71.5	74.0	43.8	51.7	78.3	83.8
5.	सिंधुदुर्गा	*	294	*	265	*	88.0	*	59.4	*	88.9
6	नासिक	849	1209	447	759	67.7	70.9	38.0	47.1	71.2	79.4
7.	धूले	500	674	256	393	59.1	60.6	31.4	36.7	69.0	75.1
8.	जलगांव	809	1069	429	650	73.6	75.7	41.6	48.7	71.0	77.8
9.	अहमदनगर	764	1072	374	620	67.1	72.3	34.2	43.8	67.0	75.0
10.	पुणा	1369	1977	822	1348	76.5	80.7	49.1	58.6	77.6	83 7
11.	सतारा	595	807	364	565	73.8	78.0	41.4	52.6	72.7	80.8

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
12.	सांगली	546	727	294	465	70.4	75.5	39.1	49.8	71.0	79.3
13.	शोलापुर	707	977	331	540	63.8	68.1	31.8	40.1	65.8	73.5
14.	कोल्हापुर	747	1043	370	668	69.6	80.0	35.5	52.9	67.2	79.3
15.	औरंगाबाद	622	684	229	340	61.6	69.2	23.9	37.1	55.4	69.0
16.	जालना	##	357	##	146	##	59.6	##	25.3	##	59.2
17.	पारमनी	407	563	135	243	53.9	60.3	18.6	27.2	50.8	61.7
18.	वीड	338	497	121	231	54.9	61.8	20.4	30.2	53.7	65.1
19.	नादेड	377	619	128	281	52.8	60.2	18.8	28.7	51.8	64.1
20.	उस्मानाबाद	542	369	226	195	58.8	65.4	25.4	36.6	60.1	71.2
21.	लातूर	##	494	##	263	##	66.8	##	37.5	##	71.4
22.	वुलडाना	447	601	217	342	71.0	72.5	36.0	43.1	66.9	74.1
23.	अकोला	552	736	309	469	71.6	75.0	42.5	50.6	73.9	80.2
24.	अमरावती	575	758	377	551	72.0	77.3	50.7	59.6	82.1	86.7
25.	यावतमल	449	625	224	372	61.9	68.2	32.4	42.7	68.2	76.5
26.	वर्धा	288	375	180	270	72.2	79.3	47.9	60.5	79.2	86.3
27.	नागपुर	845	1194	544	865	75.3	81.4	52.8	63.6	81.8	87.3
28.	भंडारा	531	705	266	445	70.0	77.5	35.0	49.2	66.8	77.6
29.	चन्द्रपुर	482	550	220	337	56.2	70.3	26.6	45.3	63.9	77.9
30.	गडचिरोली	@	186	@	92	@	54.4	@	27.5	@	66.9

(सिधुदुर्ग) नया जिला रत्नगिरि से बना।

@ (गाडीचिरोली) नया जिला चन्द्रापुर से बना।

(लातूर) नया जिला बना (जिले का क्षेत्र स्पष्ट नहीं है।)

जालना नया जिला बना।

मणिपुर

क्र. सं.	जिले का नाम	पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारो में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
		(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	सेनापति	33	37	15	21	47 7	44 0	23.4	25.3	65.5	72 9
2.	तामेनलांग	14	22	8	15	58.6	62.9	31.6	44 1	72.7	82 3
3.	चुरूचांदपुर	37	50	22	37	64 0	69.4	43.9	53.6	78 2	86.9
4.	चंदेल	12	17	7	10	49.3	58.6	29 0	37.0	76.9	76.8
5.	तोहवल	##	81	##	46	##	69 2	##	39.7	##	72 8
6.	विशनपुर	##	51	##	32	##	70 8	##	44 4	##	77 1
7.	इम्फाल	257	251	132	171	68 9	87 5	35 7	60.6	68.1	81 8
8.	उखरूल	22	34	12	21	61.9	72 3	36.8	50 0	73 8	80 9

नोट : 1981-91 जिले
मनीपुर नार्थ का नया नाम सेनापति
मनीपुर वेस्ट का नया नाम तामेल यांग
मनीपुर साउथ का नया नाम चुरा चांदपुर
तेगनुपाल का नया नाम चंदेल।
मनीपुर सेन्ट्रल का नया नाम इम्फाल
मनीपुर ईस्ट का नया नाम अखरूल
तोहवल का नया जिला बना।
विष्णुपुर नया जिला बना।

मेघालय

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	जनता हिल	19	30	19	31	30.8	33.3	30.7	35.2	101 7	102 8
2.	इस्ट खासी हिल	120	173	96	147	56.6	62.7	49.0	57.2	92 3	95.3
3.	वेस्ट खासी हिल	28	45	22	40	43.3	50.0	38.0	46.0	90.9	95 7
4.	इस्ट गारो हिल	27	41	18	29	49.1	52.6	35 0	38.7	83.1	84 5
5.	वेस्ट गारो हिल	60	89	35	64	39.6	44.9	24.0	34.2	75.2	86.2

मिजोरम

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकाक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	आइजाल	120	183	99	160	84.9	88.8	76.2	85.1	94.2	97 8
2.	लुंगली	28	40	20	32	76.7	81.6	63.4	74.4	89.8	95.1
3.	चिमंतपई	15	28	9	19	55.1	63.6	36.0	48 7	79.5	86.0

नागालैंड

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	कोहिमा	77	128	41	93	66.8	71.5	47.1	62.0	81.1	92.3
2.	फेक	18	33	8	20	57.1	71.7	29.5	51.3	65.9	82.2
3.	जनहीवोटो	16	29	12	23	62.7	67.4	45.6	59.0	87.4	93.0
4.	वोखा	17	28	9	21	66.0	77.8	41.7	65.6	74.0	91.1
5.	मोकोकंचग	35	58	28	49	77.4	84.1	67.7	80.3	93.2	97.6
6.	तुनसांग	30	56	16	38	43.1	53.3	27.4	42.2	74.9	87.6
7.	मन	11	28	4	17	30.5	41.2	14.6	29.8	25.1	82.8

उड़ीसा

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	सम्मलपुर	545	744	213	373	56.7	64.6	23.0	33.4	57 1	67.8
2.	सुन्दरगढ़	321	444	151	252	56.6	65.1	28.9	39.3	66 8	74 7
3.	केन्झर	239	324	93	163	51.9	57.5	20.6	29 7	56.6	67.9
4.	मयूरगंज	294	397	107	181	44.6	49.9	16.4	23.1	53 8	63.0
5.	वालेश्वर	626	852	310	510	67.6	71.2	34.4	43.8	67 1	75 9
6.	कटक	1347	1785	725	1152	69.6	75.7	38.6	50.4	71.0	79 7
7.	डेकानाल	411	558	162	289	62.2	68 0	25.9	36.9	58.1	69.8
8.	फूलवानी	151	199	40	72	50.9	55.0	13.5	19 8	42 0	53 1
9.	बोलनगीरि	287	410	79	153	47.6	56.6	13.4	21.4	43.5	54.7
10.	कालाहांडी	203	304	50	99	37.4	45.4	9.0	14.7	39.4	49 0
11.	कोरापुर	284	397	100	164	27.8	31.3	9.9	13.0	52.4	58.6
12.	गंजाम	594	779	224	372	55.7	59.2	20 1	27.8	53.6	64 1
13.	पुरी	872	1200	436	740	70.6	77.4	37.0	50.6	68.3	78 6

पंजाब

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	गुरदासपुर	391	567	252	378	60.0	69.5	42.7	53.4	82.4	86 1
2.	अमृतसर	533	705	339	480	55.4	61.2	40.7	47.7	83.8	86.9
3.	फिरोजपुर	268	400	144	241	47.5	54.9	29.2	37.0	75.0	79.7
4.	लुधियाना	537	814	359	583	64.8	71.8	51.3	60.7	87.4	91.0
5.	जालंधर	495	685	339	511	64.5	74.1	49.4	61.6	86.2	90.3
6.	कपूरथला	142	199	96	145	59.5	68.2	44.4	55.3	85.0	89.1
7.	होशियारपुर	372	488	240	367	68.4	76.7	48.2	61.5	82.1	88.7
8.	रूपनगर	211	308	125	209	65.4	74.0	45.9	57 1	81.1	86.4
9.	पटियाला	380	549	237	390	54.5	63.0	39.6	50.5	83.2	88.4
10.	संगरूर	264	404	143	255	41.7	51.5	26.6	37.4	76.5	83.2
11.	भटिंडा	234	347	120	212	40.5	48.6	24.1	33.8	73.6	81.1
12.	फरीदकोट	295	432	176	284	46.8	54.5	31.8	40.8	79.9	84.9

राजस्थान

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	गंगानगर	389	625	130	262	44.9	55.8	17.6	26.9	54.4	63.5
2.	बीकानेर	165	281	67	122	46.6	54.6	21.7	27.0	61.7	64.8
3.	चुरू	198	317	54	102	41.7	49.8	12.1	17.2	43.9	50.4
4.	झुनझुन	275	429	66	156	56.9	66.5	14.0	25.7	39.3	55.0

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
5.	अलवर	369	581	93	189	49.6	59.8	14.1	22.1	43.0	52.4
6.	भरतपुर	400	440	84	115	48.9	61.0	12.6	19.3	38.6	45.8
7.	धौलपुर	*	166	*	39	*	49.6	*	14.8	*	43.2
8.	माधोपुर	293	455	56	105	44.6	53.8	10.1	14.6	34.9	40.8
9.	जयपुर	279	1304	267	551	53.5	65.1	20.9	31.1	54.6	63.3
10.	सीकर	285	467	60	140	51.6	61.8	11.2	19.6	35.4	47.5
11.	अजमेर	350	503	148	235	57.2	70.0	26.1	35.7	62.0	66.6
12.	टोंक	128	206	31	58	39.2	50.7	10.1	15.6	40.7	45.9
13.	जैसलमेर	32	68	6	14	30.2	44.7	6.6	11.5	35.7	38.3
14.	जोधपुर	322	504	110	184	46.0	56.2	17.6	22.9	53.9	56.6
15.	नागौर	255	427	55	112	38.5	48.5	8.6	13.5	36.2	42.9
16.	पाली	221	331	52	104	42.6	54.4	10.8	18.0	39.1	49.1
17.	बाड़मेर	117	221	19	42	25.2	36.3	4.6	7.8	29.7	34.0
18.	जालौर	103	180	19	34	28.4	38.1	5.6	7.7	32.3	32.9
19	सिरोही	82	126	26	44	37.5	46.8	12.2	17.4	49.0	53.4
20.	भीलवाड़ा	198	304	56	103	36.0	46.3	10.7	16.7	45.6	52.3
21.	उदयपुर	387	590	121	217	40.6	50.2	13.1	19.2	48.4	54.9
22.	चित्तौड़गढ़	212	316	55	102	41.5	51.8	11.4	17.7	42.5	50.3
23.	डूंगरपुर	97	161	27	54	37.4	45.7	9.9	15.6	42.4	50.6
24.	बांसवाड़ा	115	241	32	60	32.6	51.2	9.4	13.2	44.2	40.7
25.	बूंदी	92	153	23	46	37.1	46.9	10.9	16.0	42.8	49.3
26.	कोटा	372	554	123	226	56.3	64.2	21.3	29.8	53.3	61.9
27.	झालवाड़	136	194	34	59	41.7	48.5	11.4	16.2	41.9	48.9

* (धौलपुर) नया जिला भरतपुर से बना

सिक्किम

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	नार्थ	6	9	2	5	48.5	64.3	21.3	45.5	58.3	81.2
2.	ईस्ट	39	59	17	38	60.2	73.8	36 4	58 5	70 8	87.4
3.	साउथ	17	27	7	16	52.4	61 4	25.5	43.2	63.5	81.5
4.	वेस्ट	13	23	5	14	40.8	53.5	16.2	36.8	59.5	80 7

तमिलनाडु

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. स.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1	मद्रास	1253	1526	936	1227	86.6	90.8	69.5	78 1	88.9	92.2
2.	चेंगई अन्ना	1077	1574	609	1081	69.9	78.0	41.7	55 7	74.2	83.1
3.	नार्थ अकाट अंबेडकर	1166	943	590	629	63 6	73.0	33 0	49.1	68.0	80.4
4.	धर्मापुरी	388	594	175	358	46.5	56 6	21.8	35.8	63.4	77 0
5.	त्रिरूअन्नामलाई	*	571	*	333	*	66.2	*	39.2	*	74.2
6.	साउथ अर्काट	1036	1408	481	821	59.1	66 5	28 2	39.9	64.3	74.7
7.	सालेम	865	1151	456	712	57 3	66.5	31.5	43.9	70.6	79.0
8.	पेरियार	539	700	268	432	58 6	69 1	30.5	44.2	68.0	77 7
9.	नीलगिरि	215	257	135	192	78.2	84.8	51.6	63.8	79.1	85.8
10.	कोयम्बटूर	987	1267	604	881	72.5	80.1	46 8	61.0	78.0	85 9
11.	डिन्डीगुल कायदे–मिलत्	@	574	@	344	@	71.3	@	45.9	@	78 1

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
12	त्रिचीरापल्ली	1047	1337	571	874	67.8	75.4	37.4	49 9	71.9	79.6
13.	थनजौहर	1259	1529	748	1080	72 8	78 8	43.7	55 7	74.9	82.8
14.	पुदुकोटेइ	306	409	136	252	64.0	472.8	28.2	44.2	61 3	75 7
15	पसुमपन थैवर	$	335	$	235	$	78.4	$	50 2	$	78.4
16	मदुरई	341	1108	760	728	69 6	74.2	48.4	49 9	73.2	80 2
17.	कामाराजा	$	512	$	340	$	76.9	$	51.1	$	79.8
18	रामनाथपुरम	954	357	526	239	70.3	74.4	37.4	48 6	69 8	79.2
19.	चिदम्बरम	#	503	#	417	#	82 7	#	65.2	#	88.4
20.	त्रिनलवेली कटावम्मन	1085	814	738	595	74.8	77.7	47 9	54.6	78.6	82.8
21.	कन्याकुमारी	478	601	404	547	79.3	88.1	68.2	80.3	92.4	95.4

* (तिरूअन्नामलाई–सम्बूरवरायर) नया जिला नार्थ अर्काट अम्बेडकर से बनां
@ (डिन्डीगल–कायदे–मिल्लत) नया जिला मदुरई से बना।
(चिन्दम्बरमर) नया जिला तिरूनलवेली–कटावम्मन से बना।
$ (पासुमपोनबरनार) नया जिला तिरूनलवेली–कोटम्वमन से बना।
** (चेंगयअन्ना) चेंगलापट्ट का नया नाम है।
(नार्थ आरकोट अम्बेडकर) नार्थ आरकोट का नया नाम है।
(तिरूनलवेली कोटावमन) तिरूनलवेली के भाग का नया नाम है।

त्रिपुरा

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैगिक समानता के सूचकाक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1	वेस्ट त्रिपुरा	276	416	167	287	66.5	75.5	42.3	55.8	77 4	84 6
2.	नार्थ त्रिपुरा	140	204	83	138	60 6	68.9	38.8	50.4	77.4	83.9
3.	साउथ त्रिपुरा	122	202	63	122	53.5	62 0	29 4	39 9	70 3	77 8

उत्तर प्रदेश

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारो में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	उत्तरकाशी	47	69	7	22	54.9	68.3	11.0	23.9	28.3	50.7
2	चमौली	101	138	33	75	71.4	78.9	22.0	41.0	47.8	68.9
3.	टेहरी गढ़वाल	113	160	24	65	60.4	70.8	11.3	27.2	33.1	56.2
4.	देहरादून	250	362	138	232	70.0	81.0	49.5	61.9	81.1	85.6
5.	पौडी गढवाल	169	210	89	147	71.4	81.7	32.7	52.3	64.7	78.8
6.	पिथौरगढ	139	176	49	91	71.6	78.2	24.5	39.7	51.5	67.6
7.	अलमोडा	203	244	77	144	70.5	77.7	24.2	41.1	52.3	70.4
8.	नैनीताल	283	470	135	258	56.5	68.1	33.3	43.4	72.1	76.6
9.	बिजनौर	378	545	129	235	46.0	51.2	18.5	25.7	55.5	65.1
10.	मुरादाबाद	458	734	152	283	34.1	40.7	13.7	18.6	55.0	60.9
11.	रामपुर	142	215	47	83	28.0	32.7	11.1	14.9	55.1	60.8
12.	सहारनपुर	559	533	211	228	47.4	52.7	22.0	26.7	61.0	65.5
13.	हरिद्वार	*	296	*	145	*	59.7	*	35.1	*	72.4
14	मुजफ्फरनगर	491	712	175	317	49.0	55.5	21.2	29.1	58.1	67.0
15.	मेरठ	688	959	247	457	56.4	63.6	24.6	36.0	58.6	70.5
16.	गाजियाबाद	480	823	172	404	59.1	67.3	26.0	40.0	58.8	72.8
17.	बुलन्दशहर	527	754	141	264	52.4	61.1	16.2	25.0	53.6	56.3
18.	अलीगढ़	605	860	185	328	53.4	59.2	19.7	27.1	51.6	60.7
19.	मथुरा	382	530	88	158	54.6	61.6	15.8	22.7	42.2	51.4
20.	आगरा	683	761	248	313	53.9	62.1	24.1	31.1	59.3	64.7
21.	फिरोजाबाद	@	405	@	167	@	59.4	@	29.9	@	64.8
22.	ऐटा	388	525	108	185	46.8	52.6	16.0	22.7	48.6	57.9
23.	मैनपुरी	425	364	141	158	55.4	63.1	22.5	32.9	55.4	66.7

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
24.	बंदायू	247	365	65	110	28.1	33.2	9.3	12.5	47.2	52.1
25.	बरेली	366	538	122	217	36.8	43.1	15.3	20.9	56.2	63.3
26.	पीलीभीत	159	246	42	81	36.7	43.7	11.8	17.1	46.6	54.2
27	शाहजहानपुर	269	383	77	137	36.4	43.1	13.3	19.1	50.6	59.0
28	खीरी	272	441	65	148	37.6	41.3	8.5	16.7	43.2	55.4
29.	सितापुर	358	554	87	179	26.4	43.7	7.7	17.2	43.4	54.1
30.	हरदोई	401	610	96	197	35.6	49.7	10.7	19.8	43.3	54.5
31.	उन्नाव	349	500	103	207	50.9	52.3	13.9	25.1	48.9	63.2
32.	लखनऊ	524	830	263	503	38.3	69.5	13.8	49.4	74.1	82.0
33.	रायबरेली	335	521	93	205	43.0	53.3	12.8	22.8	44.9	58.9
34.	फरूखाबाद	449	643	164	292	51.9	59.6	23.7	33.3	60.1	69.6
35.	इटावा	458	621	183	300	59.5	66.2	29.2	38.8	68.7	72.1
36.	कानपुर देहात	1068	608	523	262	63.1	64.3	38.5	33.3	73.8	66.3
37.	कानपुर नगर	#	875	#	590	#	79.2	#	64.5	#	88.9
38	जालौन	266	362	84	141	60.7	66.8	23.2	31.8	53.3	62.3
39.	झांसी	303	423	110	184	61.6	67.8	26.0	34.6	57.7	65.9
40.	ललितपुर	95	143	26	45	38.6	43.9	12.4	16.2	47.0	52.0
41.	हमीरपुर	247	359	62	113	47.9	55.3	14.2	21.0	43.8	52.8
42.	वांदा	291	426	59	115	44.1	51.3	10.6	16.7	36.8	46.9
43.	फतेहपुर	312	491	91	205	46.9	60.0	15.5	28.7	48.2	63.2
44	प्रतापगढ	343	538	77	197	48.7	59.4	10.6	22.3	36.2	54.3
45.	इलाहाबाद	818	1270	221	449	51.1	59.3	15.8	24.3	45.6	56.3
46.	वहराइच	284	438	52	116	29.7	35.9	6.5	11.5	34.1	46.2
47.	गोंडा	382	628	70	181	31.8	40.4	6.7	13.5	33.1	48.4
48.	वाराबंकी	303	474	64	161	34.5	44.5	8.7	17.9	38.3	55.3
49.	फैजाबाद	462	709	135	295	76.7	56.2	14.7	25.6	46.9	61.5
50.	सुल्तानपुर	357	595	90	223	43.8	55.2	11.3	22.4	40.6	56.8
51.	सिद्धार्थ नगर	%	296	%	85	%	40.7	%	13.0	%	47.1

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
52.	महाराजगंज	$	320	$	70	$	44.6	$	10.9	$	38.0
53.	बस्ती	579	607	133	218	39.2	51.7	9.7	20.6	38.8	55.7
54.	गोरखपुर	703	768	184	300	45.6	59.8	12.7	25.4	42.8	58.7
55.	देवरिया	643	990	153	336	46.9	53.9	11.3	19.2	38.7	51.9
56.	मऊ	^	338	^	278	^	57.7	^	49.5	^	92.2
57.	आजमगढ़	659	694	213	294	48.7	54.3	15.1	23.1	47.9	59.6
58.	जौनपुर	519	793	135	292	53.4	60.5	13.5	22.7	40.7	54.3
59.	बलिया	403	565	134	245	52.0	60.1	17.5	27.8	50.1	62.5
60.	गाजीपुर	397	611	128	246	52.1	59.8	16.7	25.3	40.9	58.9
61.	वाराणसी	875	1308	277	535	56.7	62.6	20.2	29.2	51.1	62.1
62.	मिर्जापुर	371	381	98	136	43.1	53.0	13.1	21.7	45.0	56.5
63.	सोनभद्रा	&	218	&	75	&	46.7	&	18.9	&	55.8

* (हरिद्वार) नया जिला सहारनपुर से, कुछ भाग बिजनौर और मुफ्फरनगर से बना।
@ (फिरोजाबाद) नया जिला आगरा और मैनपुरी से बना।
(कानपुर देहात और कानपुर नगर) कानपुर से संबंधित
$ (महाराजगंज) नया जिला गोरखपुर से बना।
% (सिद्धार्थ नगर) नया जिला बस्ती से बना।
^ (मऊ) नया जिला आजमगढ़ से बना।
& (सोनभद्रा) नया जिला मिरजापुर से बना।

पश्चिम बंगाल

–		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	कूच बिहार	362	523	163	289	49.0	55.7	23.9	33.6	64.8	74.4
2.	जलपाईगुडी	425	675	208	371	44.8	55.5	24.4	33.5	69.3	74.4

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
3.	दार्जलिंग	275	392	148	291	60 3	67.1	37.3	55 0	75.3	89 6
4.	प. दिनाजपुर	444	653	195	353	44.1	47 8	21.0	28 3	63.6	73 5
5.	मालदा	323	96	138	255	38.6	43.4	17.3	24.2	61.5	70.8
6.	मुर्शीदाबाद	592	901	316	543	39.1	44 0	21.8	28.6	71.3	78 1
7.	नदिया	658	1000	414	689	52.7	59.9	35.3	44.8	79.7	85 1
8	उत्तर 24 परगना	3097	2379	1770	1667	65.8	74.2	42.4	58.2	77.3	87.4
9.	दक्षिण 24 परगना	*	1655	*	900	*	66.5	*	39.6	*	73.8
10.	कलकत्ता	1390	1835	842	1268	79 2	89.4	69.7	78.9	92 5	93.0
11.	हावड़ा	945	1283	547	860	70.7	77.1	48.0	59 8	79 7	86.6
12.	हुगली	1063	1285	641	1018	67.6	77.8	45.5	59 2	79.6	85 8
13.	मेदनीपुर	1898	2893	944	1920	66 9	80.1	35.2	57 3	68 3	82.9
14.	वाकुडा	618	783	277	420	61.0	64 8	28 6	37 3	63.4	72 4
15.	पुरूलिया	422	580	116	213	54.0	60.5	15.6	23 19	44.3	55.8
16.	वर्दवांन	1284	1891	726	1234	60.2	71 4	38 7	52.8	77.2	84.3
17.	वीरभूमि	449	629	246	375	51.3	57 0	29.4	36 5	72.4	77.5

केंद्र प्रशासित - अंडमान एवं निकोबार

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों मे)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	अंडमान	54	91	30	60	72 8	81.3	56 8	68 2	86.5	90.3
2.	निकोबार	8	13	8	8	56.8	72.2	35.9	53.3	65.5	83.8

केंद्र प्रशासित – चंडीगढ़

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारो में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकाक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	चंडीगढ़	170	253	111	173	879	827	69.3	73.6	92.6	93.5

केंद्र प्रशासित – दादरा एवं नगर हवेली

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1	दादरा एव नगर हवेली	19	31	8	14	44.6	52 5	20.4	25 5	60 7	64.5

केंद्र प्रशासित – दमन दीव

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारो मे)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1	दमन	14	24	10	17	76.4	92 3	49 6	68.0	79.8	84 6
2.	दीव	8	12	5	9	71.0	75 0	41.8	52.9	77.0	83.2

केंद्र प्रशासित – दिल्ली

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	दिल्ली	2283	3571	1416	2379	79.3	82.6	62.6	68.0	87.0	89.4

केंद्र प्रशासित – लक्षद्वीप

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	लक्षद्वीप	13	19	9	15	81.2	86.4	55.3	75.0	81.8	92.6

केंद्र प्रशासित – पांडिचेरी

		पुरुष साक्षरता (हजारों में)		महिला साक्षरता (हजारों में)		शिक्षा की दर - पुरुष		शिक्षा की दर महिला		लैंगिक समानता के सूचकांक	
क्र. सं.	जिले का नाम	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)	(1981)	(1991)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)
1.	पाडिचेरी	143	221	92	164	76.2	83.1	51.0	63.6	79.8	86.5
2.	कराइकल	39	52	27	41	78.4	83.9	53.1	65.1	81.0	87.5
3.	माही	10	13	11	15	92.4	97.0	81.5	94.4	96.7	98.4
4.	यानम	3	7	3	6	66.2	77.8	51.2	66.7	87.0	92.6

§144 Medical attendance



§145 The Dance of Death—the blind leading the blind

If the most learned and polished man in Europe, who deprecated Luther's robust and headlong proceedings, could write thus in Latin about the monks and friars, it can be imagined what was the tone of popular anti-clerical writers, appealing to the common English in their own tongue. The printing press busily circulated such attacks, making direct appeal to the greed of the laity in view of the vast landed wealth of a Church that had for a while lost its only defences against spoliation—moral influence and religious awe.

For example, a few years before the Dissolution of the Monasteries, Henry VIII read without apparent disapproval, and Londoners read with loudly expressed delight, the pamphlet of Simon Fish entitled *The Supplication of the Beggars*. Its form was an address to the King:

In the times of your noble predecessors past, craftily crept into this your realm an other sort, (not of impotent but) of strong, puisant and counterfeit, holy and idle beggars and vagabonds . . . the Bishops, Abbots, Priors, Deacons, Archdeacons, Suffragans, Priests, Monks, Canons, Friars, Pardoners and Sommoners And who is able to number this idle, ruinous sort, which (setting all labour aside) have begged so importunately that they have gotten into their hands more than the third part of all your Realm? The goodliest lordships, manors, lands and territories, are theirs Besides this they have the tenth part of all corn, meadow, pasture, grass, wool, colts, calves, lambs, pigs, geese and chickens . . Yea, and they look so narrowly upon their profits, that the poor wives must be countable to them of every tenth egg, or else she [sic] getteth not her rights at Easter, shall be taken as a heretic. . . . How much money get the Sommoners by extortion in a year, by citing the people to the Commissaries Court, and afterwards releasing their appearance for money? . Who is she that will set her hands to work to get 3*d* a day, and may have at least 20*d*. a day to sleep an hour with a friar, a monk or a priest?

The conclusion reached by the pamphleteer is that the clergy, especially the monks and friars, should be deprived of their wealth for the benefit of the King and Kingdom, and made to work like other men, let them also be allowed to marry and so be induced to leave other people's wives alone

Such crude appeals to lay cupidity, and such veritable coarse anger at real abuses uncorrected down the centuries, had been generally prevalent in London under Wolsey's regime, and at his

fall such talk became equally fashionable at Court In those days, whenever the capital and the Court were agreed on a policy, the battle was already half won. And judging by the readiness with which the Reformation Parliament followed Henry's lead, similar feelings must have been widely spread in the country at large, though least in the Northern Counties, where feudal and religious loyalty to the Church and the Monasteries still prevailed.

In the face of this storm of opinion, now directed to practical issues by the King, what would be the attitude of the clergy, thus threatened and arraigned? Their submission or their resistance would be an event of the utmost importance to the whole future development of English society. If the clerical body—Bishops, priests, monks and friars—had stood together for the high privileges and liberties of the Mediaeval Church, and had arrayed themselves under the Papal banner, they would scarcely have been overcome, certainly not without a struggle that would have rent England to pieces. But in fact the clergy were not only scared by the union against them of the King and so many of his subjects; they were themselves genuinely divided in opinion A large number of clergymen were in close and daily contact with laymen and understood their way of thinking. The English priesthood had not got the spiritual isolation or the discipline of a caste, like the Roman Catholic clergy of to-day.

The Bishops, for example, were first and foremost royal nominees and civil servants. And in like manner parish priests and chaplains, as has been noted in an earlier chapter, often acted as business agents and trusted confidants of lords, squires and other lay patrons. Even the monks were wont to have their estates managed for them largely by laymen and to submit in many things to the wishes of the patrons and founders' kin, who were not infrequently lodged in the Abbey precincts.

It was not therefore natural to the clergy to draw together to defend themselves against lay attack. The hostility with which Bishops and parish priests regarded monks and friars was centuries old and was in no degree abated. So too was the feeling against the Papal authority which had so long mercilessly bled and exploited the Church in England. And of recent years Wolsey, as the Pope's *legatus a latere*, had infuriated the English clergy by overriding episcopal authority and clerical freedom. 'Better the King than the Pope' was a general feeling among them at the time

of his fall. There was no third choice before Convocation Wolsey, says his biographer, 'always rode furiously; he rode Papal jurisdiction in England to its death'[1]

Moreover, the reforming doctrines, whether of Erasmus or of Luther, had many secret sympathizers and open missionaries among the clergy; otherwise there would never have been a reformation in England, but only a brutal struggle of anti-clerical hatred with clerical privilege, such as seemed to be foreshadowed in propaganda like Fish's *Supplication of the Beggars*, such as in later times has actually taken place in countries that rejected the Reformation

Many different currents of thought were moving in the English clerical mind. Just as the Oxford reformers responded to Erasmus in the reign of Henry VII, so in the reign of his son the Cambridge reformers, including Cranmer and Latimer, Tyndale and Coverdale responded to the impulse of Luther from oversea. And without being definitely Lutherans, many of the clergy sincerely desired to reform their own profession and were by no means in love with all its privileges. Many even of the expropriated monks and dissolved friars became Protestant clergymen under Edward VI, and there is no reason to suppose that they were hypocrites

English opinion, lay and clerical, was a shifting kaleidoscope It was not yet divided between two fixed and clearly divided parties, one of reform the other of reaction. And in the confusion the King's eclectic will prevailed. His anti-Papal, anti-monastic policy, in the year that it was challenged by the northern rebellion known as the Pilgrimage of Grace (1536), was saved by the support of conservative noblemen like Norfolk and Shrewsbury, and Bishops like Gardiner and Bonner, all of whom desired to burn

[1] Professor Pollard adds (*Wolsey*, pp 369–370)

'The essential difference between Wolsey and Henry VIII was that the Cardinal was the protagonist of the *Sacerdotium* and the King of the *regnum*, and that, rather than any question of theology, distinguished the Roman from the Anglican Church The one was a priest-ridden, the other a king-ridden body. . . Wolsey had reduced the Church to a despotism whose liberties consisted in its jurisdiction over the laity and not in its government of itself By Henry's conquest and annexation the *Ecclesia Anglicana* was saved from sinking into a church of Wolsey's conception, purely papal and autocratic and incompatible with the spirit of self-determination which was informing and transforming the nation as a whole. And into the sphere of church government was thereby injected the discords and debates which are the representative signs of popular interest and intellectual life'

Lutherans as much as Henry himself.[1] On the other hand, two chief lights of academic renaissance and reform, More and Fisher, the dear friends of Erasmus, suffered death rather than agree to the repudiation of Papal authority and the subjection of the Church to the State.

The dissolution of the orders of monks and friars was a natural outcome of the attitude towards religion, life and society that Erasmus and his English friends had done so much to propagate. The men of the new learning in classical and Biblical study, now dominant at Court as well as in the Universities, had been taught to regard the monks and friars as the obscurantist enemies of the new movement. And the ascetic ideal, which had founded the monasteries in ages long ago, was no longer either admired by the world or practised by the monks. Why, then, should the monasteries any longer be maintained at vast expense?

That question was asked by the man in the street, particularly in London. And it was pressed by certain interested parties. The weakest of these were reforming clergymen, like Latimer, who hoped that the monastic wealth would go to endow education and religion; they were the more deceived. Then there were the lay neighbours and patrons of the monasteries, who looked to succeed to their estates on easy terms of purchase, and who were seldom disappointed. Next, the King himself, whose profligate finance and foolish wars in France had emptied his treasury, sought to refill it by confiscation. And lastly, the House of Commons was only too glad to evade the unpopularity of voting taxation of their constituents, by passing the Bills for the disendowment of the monasteries.

An obstinate refusal to pay taxes was a characteristic of the English at this period. A new tax of any weight, even though voted by Parliament, was liable to produce a rebellion in some part of the country, and the Tudors had no standing army. Henry, therefore, in the last part of his reign sought relief for his financial embarrassments from two sources, first the monastic wealth, and, after that, the debasement of the coinage. Both these expedients had, as we shall see, important social consequences.

[1] 'It is indeed worthy of comment that of the leading figures concerned in the Dissolution (of the monasteries) in Cornwall, not one was a Protestant, Sir Thomas Arundell, no more than Sir John Tregonwell, neither Prideaux nor Prior Mundy. The sympathies of each were unmistakably Catholic.' Rowse's *Tudor Cornwall*, p. 222.

For a short while the sale of the monastic lands replenished the King's treasury. If Henry had not been bankrupt, he might never have dissolved the monasteries at all, or he might have kept all their lands and tithes for the Crown, and so perhaps enabled his successors to establish absolute monarchy in England, or again, he might have given more of their wealth to education and charity, as at first he intended to do, had not his financial needs been so pressing. Even as it was, he founded Trinity as a College on a larger scale than any other at Cambridge. He was probably inspired to that good deed by the example of Cardinal College (Christ Church) which Wolsey had recently founded at Oxford, also out of the spoils of monasteries, for the diversion of monastic lands and tithes was not an invention either of Henry or of the Reformation [See § 125, 126] But considering the enormously greater opportunities of the King, he did very little for the endowment of institutions beneficial to the public. Some indeed of the monks' money he spent on fortifying the harbours of the Kingdom and the arsenals of the Royal Navy.

Henry did not, as it is sometimes stated, distribute any large proportion of the monastic lands and tithes gratis among his courtiers He sold much the greater part of them [1] He was driven by his financial necessities to sell, though he would have preferred to keep more for the Crown. The potential value of the estates, enjoyed in times to come by the lay purchasers or their heirs, was very great compared to the market prices they had actually paid to the necessitous King or to the merchant speculators who bought them up from Henry to re-sell to the local squirearchy. Therefore the ultimate beneficiary of the Dissolution was not religion, not education, not the poor, not even in the end the Crown, but a class of fortunate gentry, of whom more will be said when we come to consider the changes going on in social and agricultural life.

A good deal of monastic, chantry and other ecclesiastical land and tithe remained in the hands of the Crown for several generations But financial necessity induced Elizabeth, James and Charles I gradually to part with it all to private purchasers.

The coal-fields, particularly in Durham and Northumberland, had been, to a predominant extent, ecclesiastical property. But

[1] See Appendix II, pp 497–499 of H A. L Fisher's Vol. V of the *Political History of England*—table of Disposition of Monastic Lands.

owing to the action of Henry VIII this source of future wealth, which from Stuart times onwards was to be developed on an immense scale, passed into the hands of private gentlemen, whose descendants founded many powerful and some noble families out of coal. Yet even from the remnant left to the Church, the Ecclesiastical Commission a few years ago was drawing nearly £400,000 a year—a seventh part of all coal royalties. (Nef, *Rise of the British Coal Industry*, I, pp. 134–135.)

Besides the gentry, another class that benefited by the Dissolution of the Monasteries were the citizens of towns like St. Albans and Bury St. Edmunds, now released from the stranglehold of monastic lordship, against which they had been in fierce rebellion for centuries past. On the other hand, the destruction of great monastic establishments and the suppression of popular centres of pilgrimage reduced the wealth and importance of some towns and some rural districts, which were not in a position to make good the loss as independent centres of industry and trade. The destruction of many monastic libraries with their irreplaceable MSS. was a cruel injury to learning and literature.

The monks suffered personally much less than used to be supposed until recent research has revealed the facts.[1] They were given adequate pensions, which were really paid Many of them found employment, particularly as beneficed clergymen and some even as Bishops. Under the successive Catholic and Protestant regimes of Henry, Edward, Mary and Elizabeth, the Church was served by former monks and friars, who appear to have been as well able as the rest of the clerical body to adapt their views to the frequent changes of the times A few of the Heads and inmates of the dissolved houses resisted the new order of things and were ruthlessly executed by the tyrant King But the great bulk of the monks and friars accepted changes which to many of them were not unwelcome as opening to them personally a freer life and greater opportunity in the world They did little to build up a party against Henry's innovations, except in the North where social conditions still resembled those of feudal ages gone by.

With the monks disappeared also the preaching friars, so long the auxiliaries and rivals of the parish clergy. The familiar grey and black-gowned figures of Franciscan and Dominican were no longer seen upon the roads of England, tapping at the cottage

[1] See G. Baskerville, *The English Monks and the Suppression of the Monasteries*, 1938. See also Rowse's *Tudor Cornwall*, 1941, Chaps. VIII–IX

door, or perorating to an audience of rustics. Their functions were in part taken over by 'hot gospellers' and itinerant Protestant preachers, working sometimes for, sometimes against the authorities of the Church. The life of Bernard Gilpin, 'the Apostle of the North,' in his religious peregrinations of the Border Counties under Mary and Elizabeth, recalls the earlier days of the friars, and looks forward to Wesley

In all, about 5000 monks, 1600 friars and 2000 nuns were pensioned off and sent out into the world. The disappearance of the Nunneries made the least social difference. Their wealth and estates were not comparable to those of the monks, nor their popular activities to those of the friars. The nuns of this period were ladies of good family whom their relations had provided for in the life of religion, as they could not be suitably married. The convents were not an important factor in English social life.[1]

But the social consequences of the Dissolution of the Monasteries require more consideration How far did their tenants, their servants and the poor suffer by the change?

As regards estate management, there is less than no reason to suppose that either the secular or regular clergy were easier landlords than laymen before the Dissolution. The Domesday of Enclosures of 1517 shows that evictions were as common on ecclesiastical as on lay estates and that 'while the average rental value of lands in the hand of owners are considerably lower in the case of ecclesiastics than of lay owners, the rents of lands let by ecclesiastics are higher.' (R H S *Domesday of Enclosures*, Leadam, pp 48, 65) The Abbeys were accused by Sir Thomas More of turning tillage into pasture and by popular rhymers of extortionate renting as well as of enclosing:

> How have the abbeys their payment?
> A new way they do invent
> Letting a dozen farms under one,
> Which one or two rich franklins
> Occupying a dozen men's livings
> Take all in their own hands alone.
>
> * * *
>
> Where a farm for twenty pounds was set,
> Under thirty they would not it let.
>
> (Date 1527–1528, Tawney and Power, *Tudor Ec. Docs.*, III, pp 20–21)

[1] For the nuns in the Fifteenth Century see Eileen Power's *Mediaeval English Nunneries*. Something has been said of them on p 69 of this book.

In fact the monks had to a large extent handed over the control of their estates to laymen. The Abbey lands were often managed, and the farms taken on lease and sublet, by noblemen, gentlemen and 'franklins,' who ran them very much as other estates were run, enclosing land where it was profitable to enclose, turning copy-holders into tenants at will, and raising rents if prices rose or the value of the farms increased. When, at the Dissolution, the monastic property passed into lay ownership, the existing lay management continued as before in much the same spirit towards the tenants. But as, owing to Henry VIII's debasement of the coinage, the reign of his son was a period of soaring prices, all landlords new and old, if they would not be ruined, had to raise their rents whenever leases and copies fell in The 'new men' were therefore denounced, sometimes rightly but very often unfairly, for doing what the monks would have had to do in like price-conditions, and for continuing an estate policy for which Abbots had, in former times, been abused with equally good or bad reason. As years went by, the past was seen through a golden haze, and a tradition grew up that the monks had been particularly easy landlords—a tradition that modern research has not confirmed [1]

Apart from the tenants of the monastic lands, who cannot be positively said to have either gained or lost by the Dissolution, there was also a great army of servants, more numerous than the monks themselves, who were employed in the domestic service of the Abbeys It had been the custom to denounce them as 'idle abbeylubbers, apt to do nothing but only to eat and drink' (Starkey's *England*, *temp. H. VIII*, E E.T S, p. 131). They were probably no better and no worse than the great households of serving-men that noblemen and gentlemen loved to keep up, after Henry VII had disarmed their military retainers. 'Serving-men' were not admired, even in Shakespeare's day. These monastic dependants were many of them taken over by the new proprietors, especially by such as converted the abbey buildings into a manor-house. But no doubt a certain proportion lost their places and swelled the ranks of the 'sturdy beggars,' which the monks themselves had no need to do, owing to their pensions.

[1] For what I say about the monasteries in this chapter, see Baskerville, *English Monks and the Suppression of the Monasteries*, Savine, *English Monasteries on the Eve of the Dissolution* (*Oxford Studies*, edited by Vinogradoff, 1909), Snape, *English Monastic Finances*, 1926.

Many of the abbey 'servants' had been young gentlemen of the squire class attached to the monastery, 'wearing its livery, administering its estates, presiding over its manorial courts, acting as stewards, bailiffs, gentlemen farmers.' Besides these gentlemen servants, paid officers of the monks, there were wealthy guests and corrodians living in the abbey at its charges. And there were noblemen and gentlemen who, as patrons or Founders' kin, exerted great influence over the administration of the House. The lay upper class had got its fingers deep in the monastic pie long before the Dissolution. In some aspects, the secularization of the monastic lands was a gradual process, and the Dissolution only a last step.[1]

But there were always the poor at the gate. They duly received broken meats and a dole of money. The custom represented an ancient tradition and doctrine of Christian duty which was of priceless value. But in practice, according to the historian of our Poor Law, the monastic charity being 'unorganized and indiscriminate,' did 'nearly as much to increase beggars as to relieve them.' (Leonard, *Poor Law*, p. 18.) Presumably the cessation of the dole at the Abbey Gate did something in the first instance to increase the number of beggars elsewhere, but there is no evidence that the problem which mendicancy presented was seriously worse after the Dissolution than it had been before. It was certainly less bad at the end of the reign of Elizabeth.

How far, when the new order of things was well established, did the heirs of those who had purchased the abbey lands carry on the work of charity? Did the lord and lady of the manor in Elizabethan times give more or less of their income to the poor than the monks before them? It is impossible to say, probably some gave more and others less.[2] Early in the Stuart era the care

[1] Baskerville, Chap. II and *passim*, Savine, *English Monasteries*, etc., pp. 244–267.

[2] In 1539, while the Dissolution of the Monasteries was still proceeding, Robert Pye wrote to Thomas Cromwell on the state of opinion in the country about the King's ecclesiastical changes.

'I asked what relief they had since the suppression of religious houses and was told they were never in so good case, were it not for the unreasonable number of hounds and greyhounds which the gentlemen keep and compel their tenants to keep, and many tenants keep them for their own pleasures. These dogs eat up the broken meats and bread which should relieve the poor. [Exactly the same complaint had been made against the monks!] They say they must keep dogs, or the foxes would kill their lambs. There are men enough if they might be suffered with traynes [traps] who would not leave a fox in the country. Howbeit they have always been resisted by gentlemen for killing their game.' (*Cal. L. and P.*, *H.* VIII, Vol. XIV (2), p. 354.)

of the village was a duty recognized by many a squire's wife, sometimes even by a Peeress, like Letice, Lady Falkland, who used to visit the sick, dose them and read to them. The 'Lady Bountiful' of the manor-house and her lord often did as much for the poor as had been done by the later monasteries.

How far the poor positively lost by the dissolution of the monasteries remains obscure, but it is plain as noonday that a great chance was missed of endowing the poor, as well as education and learning. This was realized by many at the time, especially by the reforming clergy, like Latimer and Crowley. About 1550 Crowley wrote:

> As I walked alone, and mused on things
> That have in my time been done by great Kings,
> I bethought me of the Abbeys that sometimes I saw,
> Which are now suppressed all by a Law.
> O Lord (thought I then) what occasion was here
> To provide for learning and make poverty cheer!
> The lands and the jewels that hereby were had
> Would have found godly preachers which might well had led
> The people aright that now go astray,
> And have fed the poor that famish every day.

Instead of that, a further impetus had been given to a tendency already strong enough, the rise to dominance of the class of land-owning gentry, whose power replaced that of the great nobles and ecclesiastics of the feudal ages and whose word was to be law in the English countryside for centuries to come. [See § 127–137.]

The bands of 'sturdy beggars' who alarmed society in the early Tudor reigns were recruited from many sources—the ordinary unemployed, the unemployable, soldiers discharged after French wars and the Wars of the Roses, retainers disbanded at Henry VII's command, serving-men set adrift by impecunious lords and gentry, Robin Hood bands driven from their woodland lairs by deforestation and by the better enforcement of the King's peace, ploughmen put out of work by enclosures for pastures, and tramps who prudently pretended to belong to that much commiserated class. All through the Tudor reigns, the 'beggars coming to town' preyed on the fears of dwellers in lonely farms and hamlets, and exercised the minds of magistrates, Privy Councillors and Parliaments. Gradually a proper system of Poor Relief, based upon

compulsory rates, and discriminating between the various classes of the indigent, was evolved in England, first of all the countries of Europe. It was soon found that the whipping of 'sturdy beggars' was by itself no solution. The double duty of providing work for the unemployed, and charity for the impotent was gradually recognized by Tudor England as incumbent not merely on the Church and the charitable, but on society as a whole. In the reign of Henry VIII some great towns, like London and Ipswich, organized the administrative relief of their poor. At the end of Elizabeth's reign and under the early Stuart kings, it had become a duty prescribed by national legislation, enforced upon the local magistrates by a vigilant Privy Council, and paid for by compulsory Poor Rates.[1]

After the monasteries, the chantries! Henry VIII was already preparing an attack upon them when death took him where Kings can steal no more. On the accession of Edward VI (1547) Protestant doctrine triumphed, and prayers for the dead were pronounced 'superstitious.' As that was the specific purpose of chantries, their spoliation had now the cover of religious zeal. The 'ramp,' as our generation would call it, of greedy statesmen and their parasites at Court, and of rural gentry living near to chantry lands, became more shameless under the boy King than under his formidable old father; Henry had at least protected the interests of the Crown, so far as his financial incompetence permitted.

The chantries were not purely ecclesiastical establishments. Many of them were the property of lay gilds, and their endowments went to pay not only for prayers on behalf of the dead, but for the maintenance of bridges, harbours and schools. When therefore their 'superstitious' uses were to be suppressed, the

[1] About the year 1550 Robert Crowley thus writes in his *Epigrams*:

> I heard two beggars that under an hedge sate,
> Who did with long talk their matters debate.
> They had both sore legs most loathsome to see,
> All raw from the foot well most to the knee.
> 'My leg,' quoth the one, 'I thank God is fair.'
> 'So is mine,' quoth the other, 'in a cold air,
> For then it looketh raw and as red as any blood,
> I would not have it healed for any world's good.
> No man would pity me but for my sore leg,
> Wherefore if I were whole I might in vain beg.
> I should be constrained to labour and sweat,
> And perhaps sometime with scourges be beat.'

secular purposes for which the endowments were also used ought clearly to have been separated off and protected. In some cases this was done: the burgesses of Lynn secured the funds of their Holy Trinity Gild to maintain their piers and seawalls. [See § 138.] But many public services suffered in the scramble, especially in the case of the poorer and less influential gilds. School endowments lost heavily.

For three hundred years after his death, Edward VI enjoyed an undeserved reputation as a very good boy who had founded schools. But in fact the 'Edward VI Grammar Schools' were simply those old establishments which his counsellors refrained from destroying and to which his name was sycophantically appended. Most of the chantry and gild schools affected by the legislation of this period suffered, some more, some less. Lands of great potential value were taken from them, and they were compensated with fixed stipends in a rapidly depreciating currency.[1]

Another great chance had been missed. If all, or even half, the endowments of masses for the dead had been devoted to schools, and if at the same time those schools had been left with their old landed property, England would soon have had the best secondary education in the world, and the whole history of England and of the world might have been changed for the better. Latimer denounced the waste of opportunity—and appealed for a new form of endowment more suited to the religious needs of the time:

'Here I will make a supplication that ye would bestow so much to the finding of scholars of good wits, of poor men's sons, to exercise the office of salvation, in relieving scholars, as ye were wont to bestow in pilgrimage matters, in trentals, in masses, in parsons, in purgatory matters.'

Such appeals had little effect on the policy of the councillors and courtiers who were greedily exploiting the minority of Edward VI. But they were not without influence on individuals. The Tudor English were not all of a piece. Members of the rising

[1] Christ's Hospital, indeed, was really founded by Edward VI on the site of Grey Friars Monastery, originally as a foundling hospital, though it soon became the famous 'blue-coat school.' Some monastic hospitals had been destroyed by Henry VIII, but 'Barts,' St Thomas's and Bedlam were saved and refounded under lay control. The disendowment of hospitals was more injurious to the poor than the disendowment of monasteries. The hospitals had been founded to help the poor and had been placed where they were most needed. [See § 140.]

class of gentry and individual lawyers, merchants and yeomen did much by private beneficence to retrieve the educational position. In Elizabeth's reign, Camden notices newly founded schools at Uppingham, Oakham and other towns, the yeoman, John Lyon, founded a free grammar school for boys at Harrow, where Greek was to be taught in the upper forms. In the first year of King James, a grammar school was founded in the remote but flourishing dale of Dent in Yorkshire, by subscription among its 'statesman' freeholders, and thence for centuries to come the University of Cambridge and the parsonages of the North drew many valuable recruits, down to the days of Professor Adam Sedgwick. The grammar school at Hawkshead, where the poet Wordsworth was educated, had been founded in the reign of Elizabeth by Archbishop Sandys.

A typical 'new man' of the Tudor age was Nicholas Bacon, father of Francis, and son of the sheepreeve to the Abbey of Bury St. Edmunds [See § 141, 142.] Nicholas Bacon rose by law and politics to be owner of many of the farms on which his father had served the monks as one of their bailiffs. He founded a free grammar school on those lands, with scholarships thence to Cambridge, and gave other endowments to his old College of Corpus Christi. At Cambridge he had first met his lifelong friends Matthew Parker and William Cecil, the future leaders of Church and State under Elizabeth. The younger and hitherto lesser University was coming rapidly to the front, and her sons played the leading part in the great changes of the period.

At the same time the educational methods and ideals of the men of the new learning, eager to study the classics and the Bible in the original tongues, gave an increased value to school and University teaching. The influence of John Cheke and Roger Ascham, the 'Grecians' of St John's, Cambridge, had a profound and lasting effect Shakespeare got a classical education of the new type at Stratford Grammar school, and he got it free of charge, which was fortunate, as his father was at the time gravely embarrassed Our humble and hearty thanks are therefore due to the mediaeval founders of Stratford School and to the educational reformers of the English Renaissance [See § 139]

If under Henry VIII and Edward VI the Catholic families had refused to purchase confiscated Church property, it is probable that their children and grandchildren would less often have

become Protestants. In the days of Elizabeth, when a vigorous Catholic reaction threatened England from overseas, the new owners of abbey and chantry lands found their own interest had become involved in that of the Reformation.[1]

Throughout Tudor times, as for centuries before, 'enclosure' of land with permanent hedges was going on in various forms: the enclosure of waste and forest for agricultural purposes; the enclosure of open-field strips into a smaller number of hedged fields to promote better individual tillage; the enclosure of village commons, and the enclosure of arable land for pasture. All of these forms of enclosure increased wealth, and only some of them defrauded the poor or reduced the population. Some were carried out with the active collaboration of the peasants themselves. Others, especially the enclosure of commons, were deeply resented, and provoked riot and rebellion. [See § 143.]

In the reign of Henry VII a cry arose against the throwing together of small peasant holdings into pasture farms, as being injurious to population and leading to the 'pulling down of towns' (viz. villages). In 1489 and 1515 Acts were passed to restrain this practice, apparently without result. After that, the proclamations, commissions and statutes of Henry VIII's middle and later years indicate a growing alarm at the increase of pasture at the expense of arable, and the consequent reduction of the village population. But enclosure does not appear to have been conducted on any large scale except in certain midland shires where Royal Commissioners were sent to report. And even in the midlands, enclosure, whether for arable or pasture, must in fact have been very limited, for in these same counties, in the Eighteenth Century, we find that the open fields and commons of the mediaeval manors are, with few exceptions, still unhedged and waiting to be enclosed by Hanoverian Acts of Parliament. (Gonner, *Common Land and Enclosure*.)

The amount of noise made over economic and social change is determined, not by the extent and importance of the changes that actually occur, but by the reaction of contemporary opinion to the problem. For example, we hear much of rural depopulation

[1] On the treatment of chantries and schools under Edward VI, see Pollard, Longmans' *Political History of England*, Vol. VI, 1547–1603, pp. 15–20, and Leach, *English Schools at the Reformation*.

in Tudor times, because it was then regarded as a grave evil. Enclosures for pasture were therefore denounced by More and Latimer and a hundred other writers and preachers, Catholic and Protestant alike. 'Where forty person had their livings, now one man and his shepherd hath all'—such was the outcry. There were some such cases, and there would have been more but for the agitation and the consequent action by government to restrain such enclosure But the 'rural depopulation' in Tudor times was only sporadic and local, and was more than made up elsewhere When, however, 'rural depopulation' really set in on a national scale about 1880, as a result of the import of American foodstuffs, the later Victorians looked on with indifference at this tremendous social disaster, as a natural and therefore acceptable outcome of Free Trade, and did nothing to check it at all. Only in our own day, the fear of island starvation in time of war has attracted some general interest to a problem of rural depopulation twenty times more serious than that which four centuries ago occupied the thoughts of our ancestors as much perhaps as the Reformation itself.

Social and economic grievances caused Kett's rising in Norfolk (1549), when the rebellious peasantry, encamped on Mousehold Heath, slaughtered 20,000 sheep as a protest against the landlords who kept an unconscionable number of their own sheep upon the common lands. But enclosure of arable for pasture was not the grievance in Norfolk, where, a generation later, Camden recorded that the county was 'almost all champion,' to wit unenclosed, though he also notes its 'great flocks of sheep.'

Agrarian trouble had not been to any large extent aggravated by the Dissolution of the Monasteries. But it was aggravated as we shall presently see, by Henry's next financial expedient, the debasement of the coinage. The bottom of the trouble lay deeper, in the growing pains of historic change. Society was passing from a system of wide distribution of land among the peasants at easy rents which had prevailed during the shortage of labour of the Fourteenth and Fifteenth Centuries, to a gradual abolition of peasant holdings and their consolidation into larger, highly rented farms. This implied a further reduction of mere 'subsistence agriculture,' and a greater production for the market. It may or may not have been a change from a better form of life to a worse, but it was certainly a change from a poorer to a richer

countryside. And some such change was necessary in order to feed the increasing number of inhabitants of the island, to multiply the nation's wealth, and to allow the rise of the general standard of living, which modern conditions ultimately brought about at the expense of the old order of life.

Sixteenth-Century England was ahead of Germany and France in having got rid of the servile status of the peasant, of which little was left in the reign of Henry VII and practically nothing in the reign of Elizabeth. But the agrarian changes of the epoch were beginning another evolution less to the peasants' advantage, which in the course of the Seventeenth and Eighteenth Centuries gradually got rid of the peasant himself, converting him either into farmer or yeoman, or into the landless labourer on the large leasehold farm, or into the town workman divorced from the land. Agrarian discontent in Tudor times was the protest against an early stage of this long process. The circumstances under which it began require further examination here.

Long ago, in the Thirteenth Century, there had been 'land-hunger'—too many men and not enough land in cultivation—greatly to the advantage of the landlords. But, as has already been noticed, during the next two centuries, largely owing to the Black Death, there had been a glut of land and a hunger for men to till it —to the advantage of the peasant, who had effected his emancipation from serfdom under these favouring conditions. And now in the Sixteenth Century there was land-hunger again. The slow advance of the birth-rate against the death-rate had at last made good the ravages of the Black Death—though its local recurrence still periodically took toll of London and other towns. Only the rich had medical attendance of any value, and even their children died off at a rate that would appal modern parents, but was then taken as a matter of course But in spite of the 'dance of death,' a favourite subject for the artists at that time, the population was slowly on the rise, probably reaching four millions for all England. [See § 144, 145] So there was again under the Tudors a surfeit of labour in proportion to the land available And as yet there was no colonial and little industrial development to absorb the superfluous men Hence the 'sturdy beggars', hence increased deforestation and taking in of waste land for agriculture, which had been held up in the Fifteenth Century; hence also the economic opportunity of the landlord to do what he liked with land so



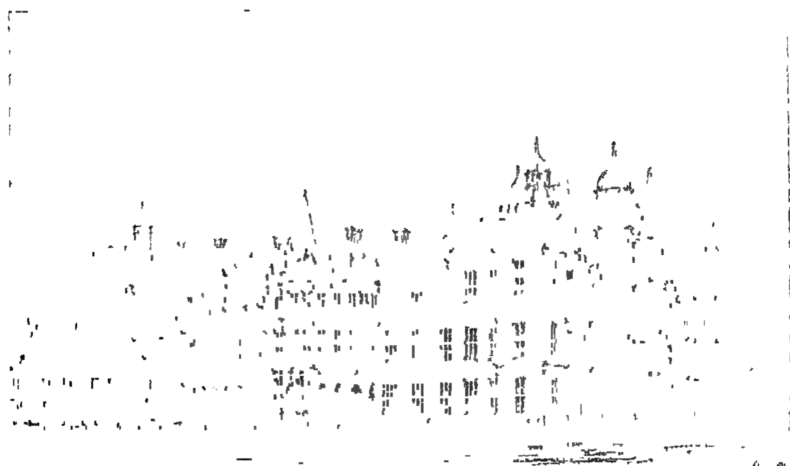
§146 William Cecil,
Baron Burghley



§147
The Lord Protector Somerset



§ 148 'Looking stiffly out at posterity from the painted boards'



§ 149 Burghley House, Northamptonshire, begun by Burghley in 1575



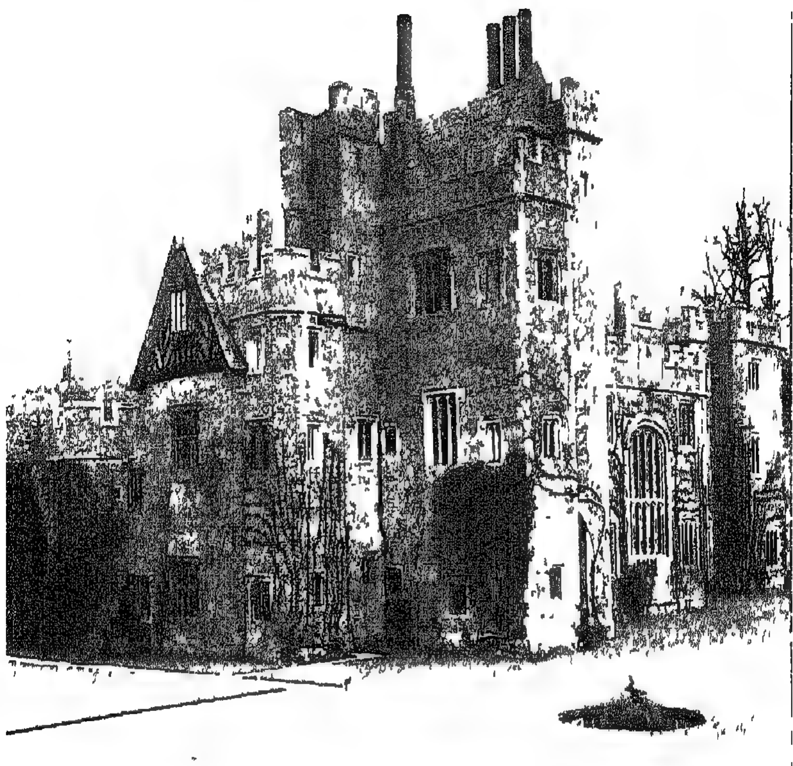
§150 Title page of the Fourth Great Bible



§151 Tudor house, Lavenham, Suffolk

§152 Tudor cottages, Chiddingstone, Kent
Note the use of brick between the timber uprights



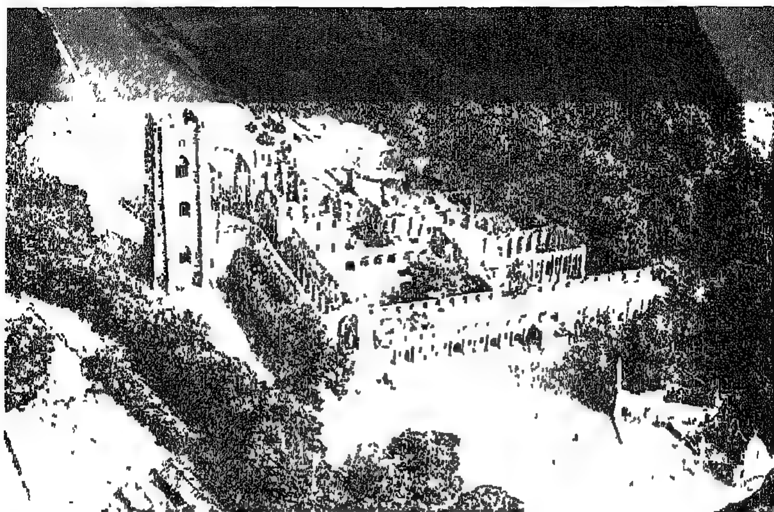


§ 153 'Tudor peace and comfort'

—Compton Wynyates, Warwickshire



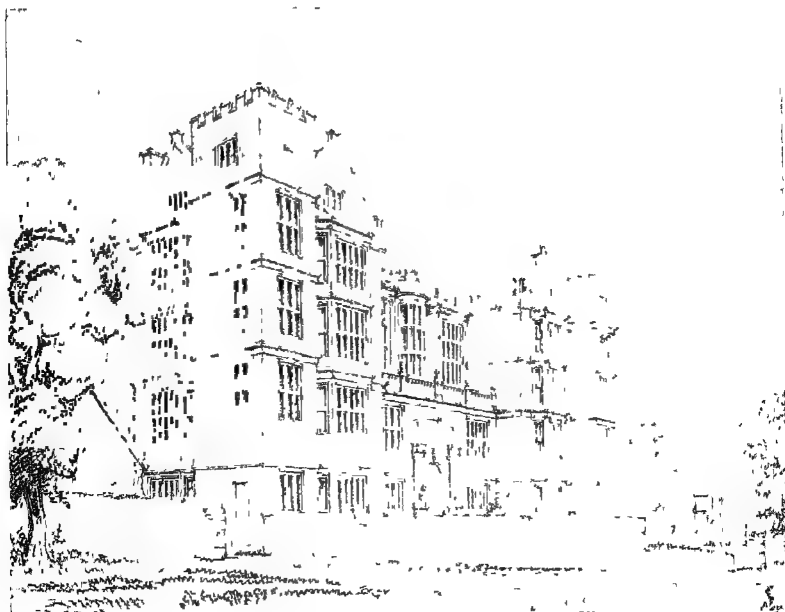
§154 Fan-vaulting at King's College Chapel, Cambridge



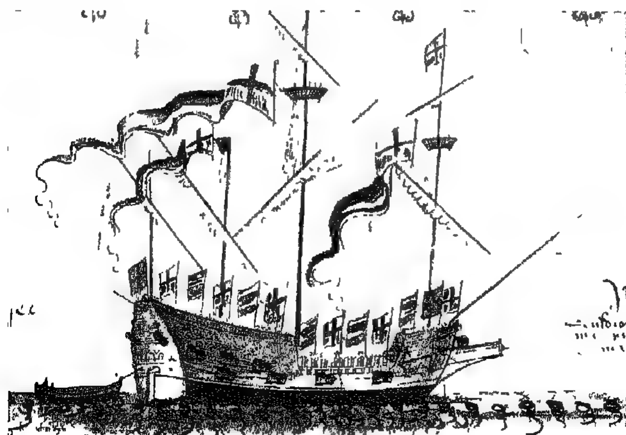
§155 Fountains Abbey ruins

'The lead and stones of Abbey churches were requisitioned for the gentlemen's seats which took their place'

§156 Fountains Hall, built in 1611 from the Abbey stones



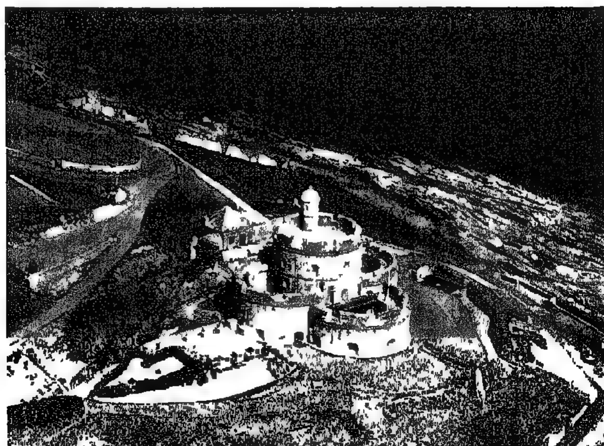
§157 Dover Harbour, *temp.* Henry



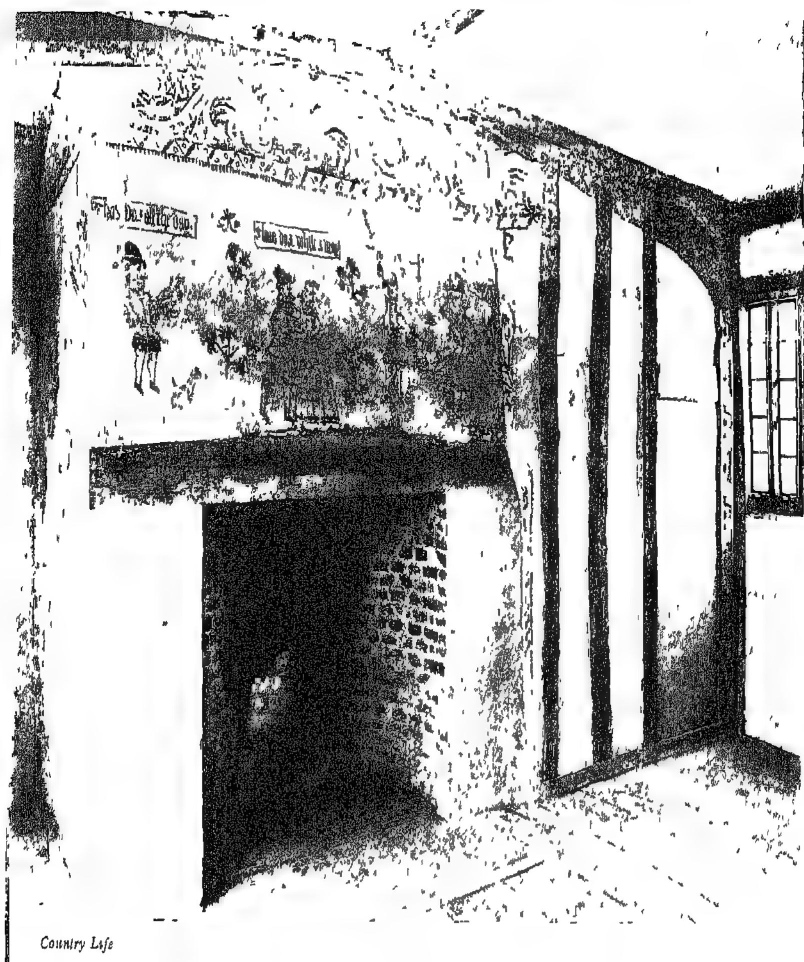
§158 The *Anne Gallant* carrying 45 guns (1546)



VIII, showing fortifications

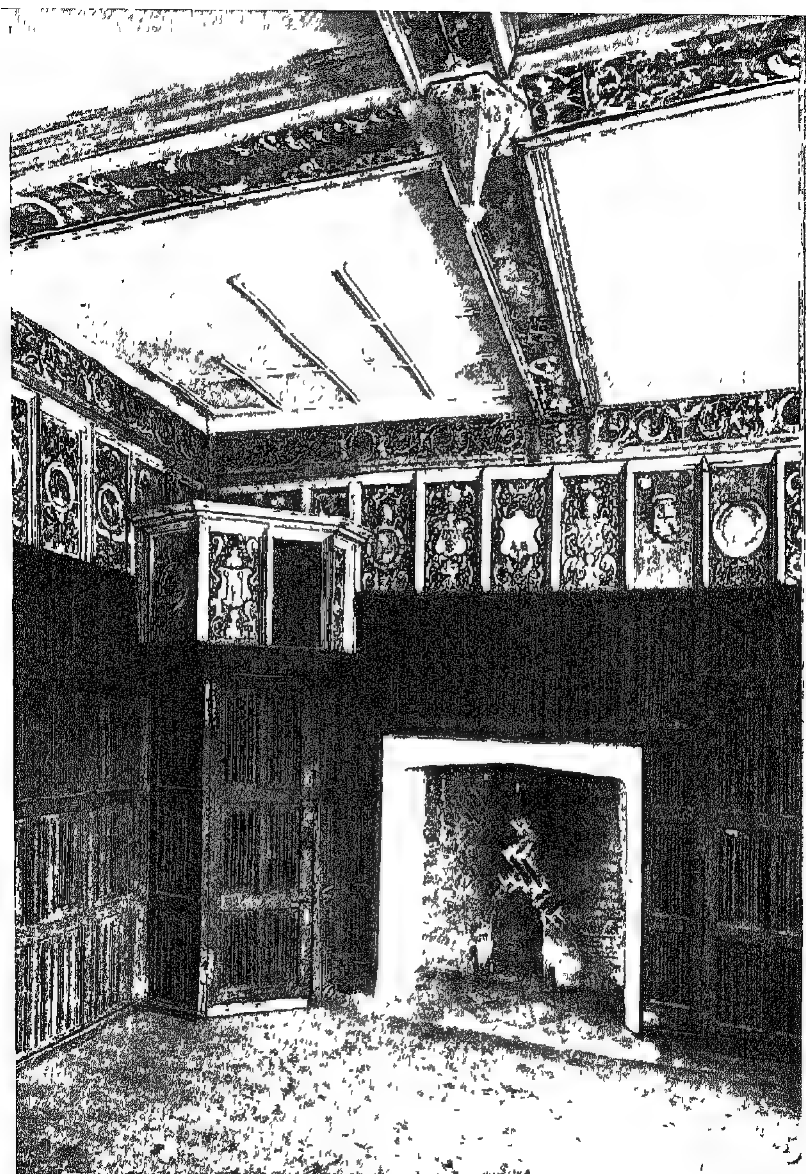


§159 St Mawes' Castle, Cornwall, part of Henry VIII's fortification of Falmouth Roads



Country Life

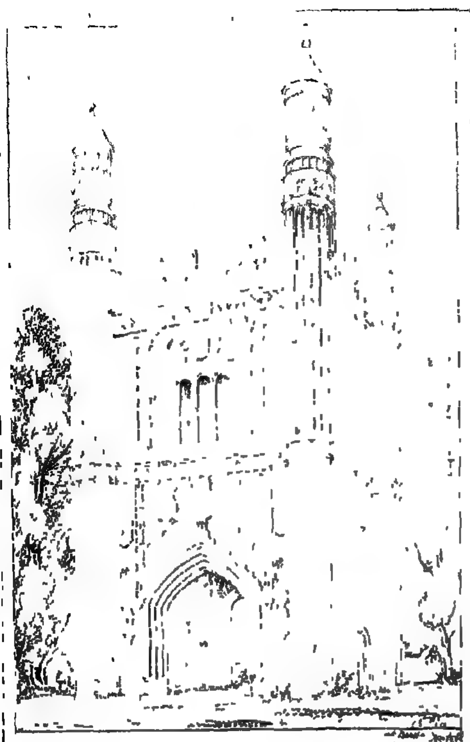
§ 160 Tudor wall-painting in the gatehouse at West Stow Hall, Suffolk



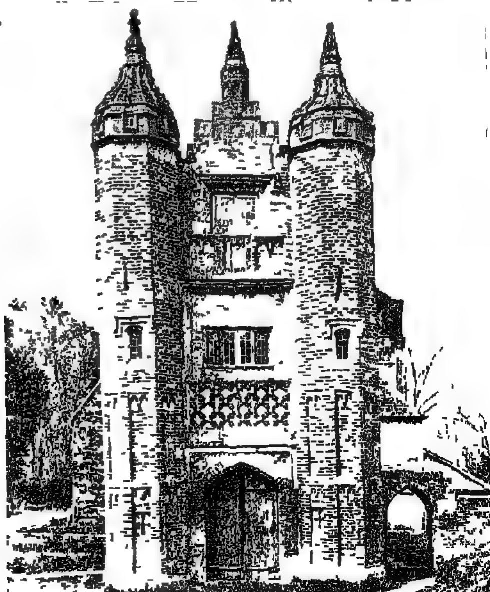
Country Life

§161 The Abbot's Parlour, Thame Park, Oxfordshire

TUDOR GATEWAYS



§ 162 East Barsham, Norfolk



§ 163 West Stow Hall, Suffolk

Country Life

HENRY VIII §164 Jousting before Katherine of Aragon

§165 With his harp and jester

§166 Reading in his bedroom







TUDOR PORTRAITS

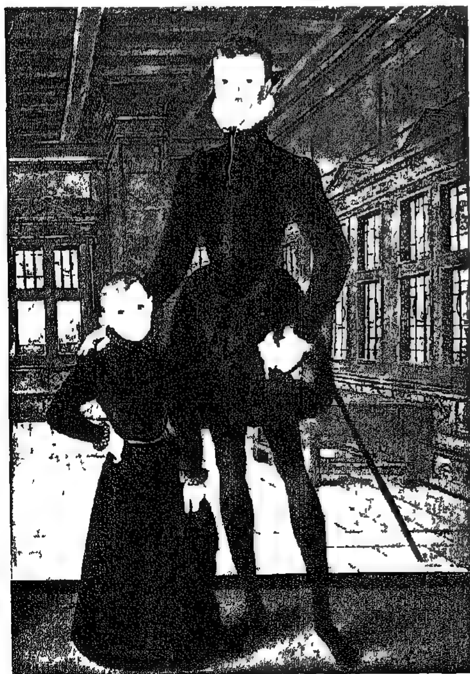
§167 Henry VIII, after Hans Holbein

§168 Princess Elizabeth, by a painter working in England about 1546

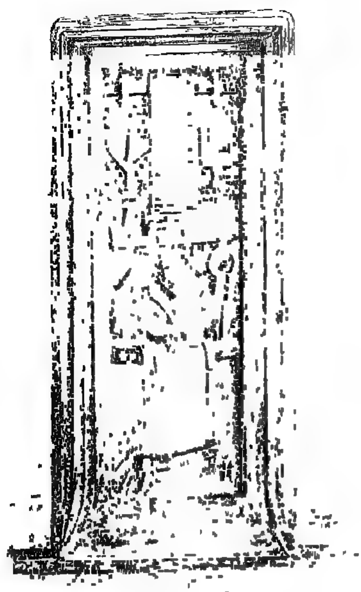




§169 Thomas Howard, Duke of Norfolk, by Hans Holbein the younger



§170 The Darnley Brothers, by Hans Eworth



§171 The Cloth Trade
The Fuller's Panel, bench-end
t Spaxton Church, Somerset

§172 'As early as 1528 William Hawkins . . traded in friendly fashion with the Guinea Coast for ivory' Map of the Guinea Coast (1556)



much in demand, and to exact higher rents so far as the character of his tenants' leases allowed him.

While the land-hunger enabled the landlord to effect changes in rent and in agricultural method, the rise in prices compelled him to do so or be ruined Between 1500 and 1560 the prices that the landlord had to pay for the things he bought for himself and his household, had much more than doubled, food had nearly trebled. Unless then the landlords were to accept ruin they must raise rents when leases fell in, and they must turn land to its most profitable use—even in some cases to pasture instead of arable.[1]

But this excuse was scarcely considered at all by popular anger and religious sentiment. Catholic and Protestant alike applied mediaeval ethical judgments to economic actions. For example, in spite of the long established practice of business men, law and opinion still attempted to forbid as usury all interests on money lent. So far did legislation lag behind reality that as late as 1552 an Act of Parliament prohibited all taking of interest as 'a vice most odious and detestable.' At length, in 1571, this Act was repealed and interest not exceeding ten per cent. ceased to be criminal.

It is not then surprising that preachers, pamphleteers and poets denounced enclosure as immoral and higher rents as extortionate. Some of them were so, no doubt, but on the whole the landlords were acting under financial compulsion. 'Economic necessity' became indeed the tyrant's plea for much oppression, and was too glibly used in later centuries when the 'dismal science' of Political Economy bore iron rule over the minds of men. But much of the Tudor writing on these questions suffered from the opposite fault and was not economic enough. It blamed the wickedness of individuals alone, instead of looking for root causes and remedies.

But there were exceptions. A remarkable dialogue, written at the height of the social trouble under Edward VI, entitled *A Discourse of the Common Weal*, managed to elucidate the real truth with fairness to all parties, perceiving the unavoidable effect that the

[1] There were three stages of the price-rise under the Tudors· (1) 1510–1540 Owing to production of silver in Germany, and the dispersal of Henry VII's hoarded treasure by Henry VIII, prices of foodstuffs go up 30 per cent. Other prices rise less (2) 1541–1561 Owing to Henry VIII's debasement of the coin (and a little later to American silver mines beginning to take effect) prices of all kinds rush up about 100 per cent more (3) 1561–1582. Owing to Mary's better finance and Elizabeth's re-coinage, prices are stabilized, and rise more slowly Then in early Stuart times American silver mines again raise prices to peak 1643–1652, after that prices fall.

price-rise must have on rent, as well as its main cause in Henry's debasement of the coinage And early in Elizabeth's reign Thomas Tusser grew lyrical as well as economic in praise of the much abused enclosures:

> More plenty of mutton and beef,
> Corn, butter and cheese of the best,
> More wealth anywhere (to be brief)
> More people, more handsome and prest,
> Where find ye (go search any coast)
> Than there, where enclosures are most ?

But, more usually, indiscriminate abuse was poured on all enclosure, which might better have been reserved for the cases of real injustice, when lords of the manor 'enclosed from the poor their due commons.' Equally indiscriminate was the attack on the gentry as 'cormorants and greedy gulls' because they 'raise our rents.' Yet owing to the price-rise, peasants and farmers were selling their produce at two or three times the old money, while their landlords were paying proportionately more for all they bought.[1] How then could rents fail to rise? But the mind of the community, still essentially mediaeval in outlook, thought the right basis of social economics was not competition but immemorial custom, even when the fall in the value of money and the soaring of prices was rendering old custom every day more impossible and unfair.

A chief cause of social *malaise* was the casual and irregular incidence of the price-rise on various classes of men. One part of the peasantry, who were lucky enough to have long-term leases or copyhold tenures of the kind that was by law not breakable, reaped the full advantage from the soaring prices of their products because their rents could not be raised. Since therefore the landlords could not raise rents all round in moderation, they recouped themselves by extorting high rents and heavy fines for renewal of leases from the other less fortunate part of the peasantry and farmers, whose leases were renewable annually or fell in upon

[1] This point, though noted in the *Discourse of the Common Weal*, is shirked in most of the literature of the time. But the poet Gascoigne, early in Elizabeth's reign says of the peasants in his *Piers Plowman*:

> Nor that they can cry out on landlords loud
> And say they rack their rents an ace too high,
> When they themselves do sell their landlords' lamb
> For greater price than ewe was wont be worth

death or after a period of years. The result was that one group of peasants was coining money without paying an extra penny of rent, while another group, not socially distinguishable except by the date of their leases or the legal forms of their tenure, were being oppressed all the more to make up for the immunity enjoyed by the others. Meanwhile the yeoman freeholder who paid no rent or a purely nominal one to the lord of the manor, was selling his corn and cattle for three times the price that his grandfather had been able to ask.

Thus, while some men flourished exceedingly, others, including many lords and squires, were in real distress during the reigns of Edward VI and Mary, largely as a result of their royal father's unscrupulous juggle with the coinage. For the same reason the landless labourer suffered from the time-lag of wages behind prices.[1] But the landless labourer was then a much smaller proportion of the working class than he is to-day, and as he was to some extent paid in kind, his loss from the fall of the value of money was often not very great. On the other hand, the craftsman, manufacturer and merchant gained by the rise of prices as much as the peasant whose rent could not be raised. More generally, the rise of prices, which brought poverty to some and wealth to others, had the effect of stimulating trade, production and enterprise both in the towns and on the land. It was a factor in the development of the new England of adventure and competition, replacing the old England of custom and settled rights.

Before the end of the Century equilibrium had been reached for a time. In the last years of Edward VI a real financial reform had been begun which Mary continued and Elizabeth carried to fruition. As early as the second year of her reign (1560–1561) the great Queen was able to restore the purity of the currency. Prices were for awhile stabilized. Gradually, as more and more leases fell in, rents were adjusted all round, and in the age of Shakespeare there was agrarian peace and a high general level of prosperity and content, except in times of bad harvest.

By the time that this new balance had been adjusted, important changes had been brought about under the pressure of the bad times. The number of farmers in the modern sense of the word,

[1] Between 1501 and 1560 food prices had gone up as from 100 to 290, while wages in the building trade had gone up only from 100 to 169. Agricultural wages cannot be given.

men with a considerable acreage held on terminable leases, was greater than before, and the typical peasant holder of the middle ages was rather less common But there were still many small peasants, and the bulk of the best arable land in the Midlands was still cultivated in open-field strips, either in large or small holdings.

The continuous effort of successive Tudor Governments, by legislation, Commissions and the judicial action of the Star Chamber and Court of Requests, had done something to check the abuses of enclosure and to protect the old-fashioned peasant against his landlord. But it had not stopped the gradual process of inevitable change.

As a result of these conditions, the class denominated 'yeomen' was more numerous, more wealthy and more important than in any former age. The term 'yeoman' covered at least three different classes, all now prosperous: the freeholder cultivating his own land; the capitalist farmer, who might be a tenant-at-will; and the peasant who was lucky enough to enjoy a secure tenure at an unalterable rent. All these three types of yeoman might be cultivating either land enclosed by hedges, or scattered strips in the open field. The wealth of many of them was derived wholly or in part from the fleeces of their sheep. The praise of the yeoman as the best type of Englishman, holding society together, neither cringing to the high nor despising his poorer neighbour, hearty, hospitable, fearless, supplies a constant motif of literature under Tudors and Stuarts. And it corresponded to a social fact.

The yeomen were held to be the real strength and defence of the nation. Of old they had won Agincourt and but yesterday Flodden, and were still the nation's shield and buckler. 'If the yeomanry of England were not, in time of war we should be in shrewd case. For in them standeth the chief defence of England.' (Starkey's *England, Temp. H. VIII*, E.E.T.S , p. 79.) Other nations, Englishmen boasted, had no such middle class, but only an oppressed peasantry and the nobles and men-at-arms who robbed them.

A strong feeling already existed among the English against professional soldiers, largely derived from memories of what had been endured by quiet folk at the hands of the lords' retainers. The Tudor Kings had put all that down, and had no standing army of their own: hence their popularity. The English were

conscious and proud of their liberty, not yet defined as the liberty of governing their King through Parliament, or of printing what they liked against the authorities of Church and State, but simply freedom to live their own lives undisturbed either by feudal or royal oppression. In the *Discourse of the Common Weal* in Edward VI's reign, the Husbandman and Merchant discuss whether there should be a standing force in England to repress tumults:

HUSBANDMAN: God forbid that we have any such tyrants amongst us, for, as they say, such will in the country of France take poor men's hens, chickens, pigs and other provision and pay nothing for it; except it be an evil turn, as to ravish his wife and daughter for it.
MERCHANT: Marie, I think that would be rather occasion of commotions to be stirred, than to be quenched, for the stomachs of Englishmen would never bear it.

The English yeomen would not stand that kind of thing!

The new age was bringing into increasing prominence not only the yeoman, but the squire. He survived the difficulties of his family budget during the price-crisis, and emerged under Elizabeth as the principal figure in the life of the countryside. The wealth and power of the country gentlemen had been increased, partly by their easy purchases of monastic land, partly by the recent changes in the agricultural economy of their estates, which the land-hunger had enabled them, and the price-rise had forced them, to accomplish. And many of them had other interests beside land, in the cloth trade and commerce oversea.

Apart from the absolute increase in their wealth, they had acquired a new relative importance by the disappearance of their former superiors, the feudal nobles, and the abbots and priors. The gentry who now governed the counties for the Crown as Justices of the Peace had no longer cause to dread interference in their duties by 'overgreat subjects' and their retainers. The old nobility who had disturbed and terrorized Plantagenet England had lost their lands and their power in the confiscations of the Wars of the Roses; and the policy of the early Tudor Kings continued to depress their order, as in the Attainder of the lordly Buckingham. The last nobles of the old type maintained their feudal power along the Scottish border, where men said 'there was no King but Percy.' They too were broken by Elizabeth after

the rebellion of the northern Earls in 1570. In other parts of England, such semi-sovereign nobles had disappeared long before.

The families whom the Tudors raised up in their stead, the Russells, Cavendishes, Seymours, Bacons, Dudleys, Cecils and Herberts rose to influence, not because they were feudal magnates, but because they were useful servants of the Crown. Their social affinities were with the rising class of gentry, whence they derived their origin, and to whom they still essentially belonged even when they were raised to be Peers of the Realm. [See § 146–149.]

Not only political but economic causes were depressing the old nobility. They suffered from the fall in the value of money even more than the gentry, because they paid too little personal attention to the management of their far-flung properties, and were less quick than the smaller landlords to evict tenants, terminate leases, impose fines and raise rents. In the Tudor period taken as a whole, the gentry rose while the nobles declined.

A distinguishing feature of the English gentry, which astonished foreign visitors as early as the reign of Henry VII, was their habit of turning their younger sons out of the manor-house to seek their fortunes elsewhere, usually as apprentices to thriving merchants and craftsmen in the towns. Foreigners ascribed the custom to English want of family affection. But it was also, perhaps, a wise instinct of 'what was best for the boy,' as well as a shrewd calculation of what was best for the family fortunes. The habit of leaving all the land and most of the money to the eldest son built up the great estates, which by steady accumulation down the years, became by Hanoverian times so marked a feature of English rural economy.

The younger son of the Tudor gentleman was not permitted to hang idle about the manor-house, a drain on the family income like the impoverished nobles of the Continent who were too proud to work. He was away making money in trade or in law. He often ended life a richer and more powerful man than his elder brother left in the old home. Such men bought land and founded county families of their own, for they had been bred in the countryside and to the countryside they loved to return.

Foreigners were astonished at the love of the English gentry for rural life. 'Every gentleman,' they remarked, 'flieth into the country. Few inhabit cities and towns, few have any regard of

them.' (Starkey's *England, Temp. H. VIII*, E E T S, p. 93.) Though London might already be the greatest city in Europe, England was still in its essential life and feeling a rural community, whereas in France and Italy the Roman had deeply implanted the civilization of the city, that drew to itself all that was most vital in the life of the surrounding province. The English squire did not share the feelings of the 'Italian gentlemen of quality' described by Robert Browning, pining unwillingly in his country home—

> Had I but plenty of money, money enough and to spare
> The house for me, no doubt, were a house in the city square.

The place for the squire, whether he were rich or poor, was at home in his manor-house, and he knew and rejoiced in the fact.

Owing to the habit among the gentry of apprenticing their younger sons to trade, our country avoided the sharp division between a rigid caste of nobles and an unprivileged bourgeoisie, which brought the French *ancien régime* to its catastrophe in 1789 Unlike the French, the English gentry did not call themselves 'nobles'—except the select few who sat in the House of Lords. The manor-house, its hospitality open to neighbours and friends of many different classes, was not ashamed to acknowledge a son in trade, besides another at the Inns of Court and a third perhaps in the family living. The 'landed' and 'moneyed' men might talk as if they were rivals, but in fact they were allied by blood and by interest Recruits from the landed class were constantly entering town life, while money and men from the towns were constantly flowing back to fertilize the countryside.

Throughout Tudor, Stuart and early Hanoverian times, successful lawyers formed a large proportion of the 'new' men who introduced themselves into the county circle by purchase of land and by building of manor-houses. The number of English county families who were founded by lawyers is even greater than those derived from the cloth trade The process had begun in the Middle Ages: the fortunes of the Norfolk Pastons had been founded by one of Henry VI's judges. And the road opened yet wider before the men of law in the exciting, litigious and rapacious times of Henry VIII and his children, when lawyers of an adventurous turn had unusual opportunities to serve the government, and receive a very full reward, especially when, as in the case of the Bacons and Cecils, law was blended with courtiership and

politics. Many of the lovely Tudor homes, small and great, that still adorn the English landscape, were paid for by money made in the Courts of Law.

There was much in common between the squire, the lawyer, the merchant and the yeoman. They were all men of the new age, not hankering after feudal ideals now passing away. And they tended to become Protestant, alike from interest and conviction They evolved a kind of religion of the home, essentially 'middle class' and quite unmediaeval.

The tendency of Protestant doctrine was to exalt the married state, and to dedicate the business life, in reaction against the mediaeval doctrine that the true life of 'religion' was celibacy and monastic separation from the world The permission to marry, conceded to the clergy under Edward VI and Elizabeth, was one symptom of this change of thought. The religious home was the Protestant ideal, with family prayer and private Bible reading in addition to the services and sacraments of the Church. These ideas and practices were by no means confined to the dissident Puritans: in the late Tudor and in Stuart times they were the practice of Anglican families who loved and fought for the Prayer Book. The religion of the home and of the Bible became a social custom common to all English Protestants. It was found most often, perhaps, in the households of squires, yeomen and tradesmen, but it was widely extended among the cottages of the poor.

The new type of English religion idealized work, dedicating business and farming to God. As George Herbert quaintly and nobly wrote:

> 'Who sweeps a room as for Thy laws
> Makes that and the action fine.'

It was a good religion for a nation of shopkeepers and farmers.

The seed-time of these practices and ideas, which in the following century became so general, was the reign of Edward VI and his elder sister, while Cranmer was producing the Prayer Book to stand beside the Bible, and Queen Mary was providing English Protestantism with a martyrology. The anti-clerical revolution of Henry VIII, with its unedifying scramble for Church property, had lacked a moral basis, but the martyrs recorded in Foxe's book provided one for the new national religion beginning to emerge out of chaos. When Elizabeth came to the throne, the Bible and

Prayer Book formed the intellectual and spiritual foundation of a new social order.

The institutions of a country are always reflected in its military system. During the Hundred Years' War there had been two military systems. Home defence, against domestic rebellion and Scottish invasion, was conducted chiefly by local militia levied on a conscript basis The more difficult war in France, which required a more professional soldiery, was conducted by war-bands following fighting nobles and gentlemen who enlisted and paid them; the King indented with their employers to furnish him with so many of these professionals for so much money. This dual system continued under Henry VII and Henry VIII, with this difference, that the destruction of the military power and landed wealth of the old nobility by the confiscations of the Wars of the Roses had taken the value out of the indenture system Indeed, the system of indenting with private individuals to supply an army for foreign war was incompatible with the Tudor domestic policy of suppressing the retainers and military establishments of great subjects. But as the Kings could not afford to keep up a standing army of their own, the troops hastily levied for occasional foreign service were undisciplined, mutinous and often useless, as the history of the Tudor war on the Continent was to show again and again. The steady, devoted bands who had followed the great lords to Crecy and Agincourt, no longer existed. And as yet there was no royal army.

English archery was still so good that firearms had not yet displaced it. Flodden was won by the archers. Bow and bill for the infantry, the lance for the cavalry was still the rule. The artillery, of which the King had a monopoly in his Realm, was becoming an important arm, not only for sieges but for battles against rebels or Scots, as at Loose-Coat Field and Pinkie Cleugh. Under these conditions, the democratic conscript militia sufficed to make the King safe at home, so long as his policy was not too unpopular. But he was powerless to make conquests in Europe.

While the royal army did not exist, the royal navy was growing strong. Sole reliance could no longer be placed on conscripted merchant ships to hold the narrow seas in time of war. Henry VIII has been called 'the father of the English navy,' though Henry VII might perhaps dispute the title. The navy was placed

under a separate government department and organized as a standing force in the King's pay. Henry VIII spent much of the royal and monastic wealth on this project He not only built royal ships, but established dockyards at Woolwich and Deptford, where the Thames estuary made a surprise raid difficult, developed Portsmouth as a naval base, and fortified many harbours such as Falmouth Roads.

The formation of a professional navy for war purposes only, was the more important because naval tactics were, after 2000 years, entering on a new era. The placing of cannon in the broadside of a vessel transformed naval war from a mere grappling of ship with ship (the method used from the days of the ancient Egyptians and Greeks till late mediaeval times), into the manœuvring of floating batteries, which first showed their strength against the Armada. By proficiency in that new game England was to attain her sea-power and Empire, and Henry VIII's naval policy first put her in a way to win it. [See § 157–159]

In spite of much economic trouble, the standard of life was slowly going up in the early and middle Tudor period. When the more marked advance under Elizabeth had diffused a general sense of prosperity, William Harrison, the parson, recorded in 1577 the improvement in household conditions that had taken place since his father's day, 'not among the nobility and gentry only but likewise of the lowest sort in most places of our south country.'

'Our fathers [he writes] yea and we ourselves have lien full oft upon straw pallets, covered only with a sheet, under coverlets made of dagswain or hop harlots (I use their own terms) and a good round log under their heads instead of a bolster. If it were so that our fathers or the good man of the house had a mattress or flockbed and thereto a sack of chaff to rest his head upon, he thought himself to be as well lodged as the lord of the town [village], that peradventure lay seldom in a bed of down or whole feathers. Pillows were thought meet only for women in childbed. As for servants, if they had any sheet above them, it was well, for seldom had they any under their bodies, to keep them from the pricking straws that ran oft through the canvas of the pallet and razed their hardened hides.'

Straw on the floor and straw in the bedding bred fleas, and some fleas carried plague.

Harrison also notes that chimneys have become general even in cottages, whereas 'in the village where I remain,' old men recalled that in 'their young days' under the two Kings Harry, 'there were not above two or three chimneys if so many, in uplandish towns [villages], the religious houses and manor places of their lords always excepted, but each one made his fire against a reredoss in the hall where he dined and dressed his meat.' The increasing use of coal instead of wood for the domestic hearth made it more disagreeable not to have chimneys, and the increasing use of bricks made it easier to build them, even if the walls of the house were of some other material.

Common houses and cottages were still of timber, or of 'half-timber' with clay and rubble between the wooden uprights and cross-beams. Better houses, especially in stone districts, were of stone. But brick was gradually coming in, first of all in regions where stone was not to be had on the spot, and where timber was running short owing to the process of deforestation—chiefly, that is to say, in the eastern Counties. [See § 151, 152.]

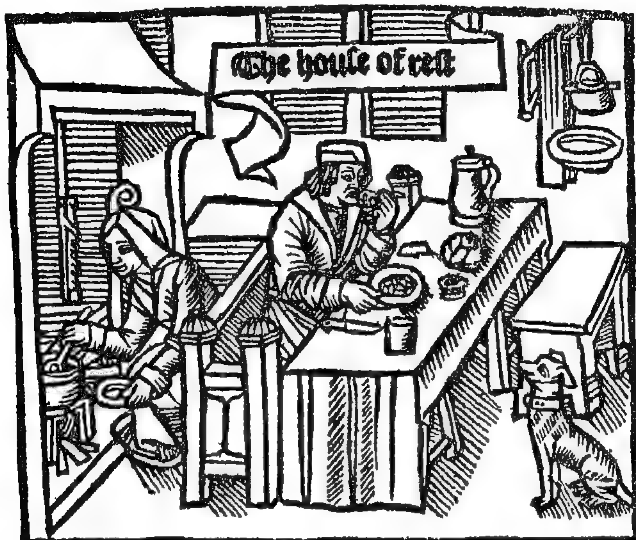
Harrison also records a change during his own lifetime 'of treen [wooden] platters into pewter, and of wooden spoons into silver or tin.' The age of forks was not yet come, where knife and spoon would not avail, even Queen Elizabeth picked up the chicken bone deftly in her long fingers. Until her reign 'a man should hardly find four pieces of pewter in a farmer's house.' Of china there was as yet no question at all.

So primitive, in the early Tudor period, had been household conditions. Such or worse they had been in all previous ages. But things were now on the way to the marked improvement noted by the Elizabethan parson. We must never forget, in picturing the past and specially the remoter past, the want of comforts and luxuries which we take for granted. Yet they have only been made general by slow process of change, some of which, like the new farming, we call in question as having been in some respects unjust to the poor.

In the reign of Henry VIII, the long predominance of Gothic architecture may be said to have come to an end, after bursting out into the final magnificent flourishes of Wolsey's hall at Christ Church, Oxford, and the fan-vaulted roof of the chapel of King's College, Cambridge, completed by his royal master. [See § 154.] Then the new age came in. Italian workmen ornamented the new

quadrangle of Hampton Court with terracotta busts of Roman Emperors, entirely Renaissance in feeling and in design

The Tudor period was not one of church building. Rather the lead and stones of Abbey churches were requisitioned for the



'A man should hardly find four pieces of pewter in a farmer's house'

'gentleman's seats' that took their place, or for the yeomen's farms of the new age [See § 155–156] In the manor-houses, now everywhere being built or enlarged, spacious rooms, well-lighted galleries, wide lattice windows and oriels, instead of narrow loop-holes, proclaimed the Tudor peace and comfort. The commonest form of large manor-house was now an enclosed court, entered through a turretted gateway of gigantic proportions, frequently of brick. A generation later, under Elizabeth, when the need for fortifying a house had even more completely disappeared from men's minds, it became usual to build an open courtyard with three sides only, or to adopt the E-shaped form. [See § 149, 153, 156, 160–163.]

Every manor-house of any pretensions had a deer-park dotted with clumps of fine trees at various stages of growth, the whole enclosed by a high wooden pale Sometimes two parks, one for

fallow deer and one for red, diminished the arable land of the demesne, and sometimes, it is to be feared, the common lands of the village On hunting mornings, the chime of hounds 'matched in mouth like bells' chased the deer round and round the enclosure, while the gentlemen and ladies of the manor and their guests followed easily on horseback—and Lady Jane Grey stayed indoors and read Plato! But there were also plenty of deer at large beyond the park pales, to be hunted more nobly 'at force' across the countryside. Great herds of red deer roamed over the Pennines, the Cheviots and the northern moors In the South, fallow deer ran wild in the forests, woods and fens, often issuing forth to attack the crops. One use of the enclosure was to provide fences against these visits made while the village slept.

Hunting did not usually mean fox-hunting· farmers for the most part were free to kill the red thief as best they could [1] Gentlemen hunted the deer, and everyone, on foot and horseback, hunted the hare—'poor Wat, far off upon a hill!' Horsemen and greyhounds pursued the swift-footed young bustards over the downs. The poaching of deer was a great feature of life; the scholars of Oxford openly hunted Radley Park, till the owner was fain to throw down the pales in despair. As to fowling, though the hawk, the bow and the cross-bow were still the most usual methods, the 'fowling-piece' was sometimes employed. (*Merry Wives*, iv. 2, 58) But snaring, liming and trapping all sorts of birds and beasts were still conducted not only for use but for sport.

The English were already notorious in Europe for their devotion to horses and dogs, of which they bred and kept many varieties in great numbers But the horse was still a cumbrous animal The slim racer and hunter of eastern blood had not yet come in, and a gentleman's mount was still bred to carry a knight in his armour at full trot, rather than a huntsman at full gallop. The farm-horse was gradually beginning to share with the ox the labours of the plough.

It was still the age of the tournament [see § 164], ridden before the eyes of sympathetic ladies and critical populace,

> The gravelled ground, with sleeves tied on the helm,
> On foaming horse, with swords and friendly hearts,

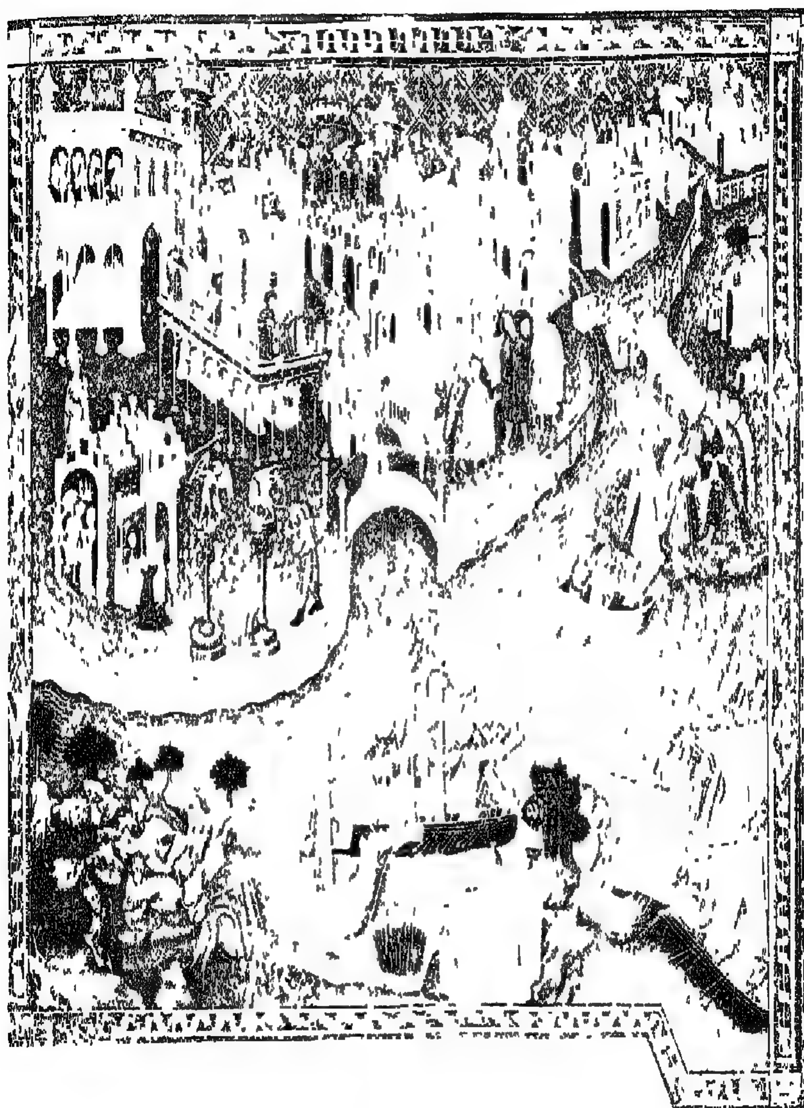
[1] Yet in some districts in Elizabeth's reign foxes and badgers were 'preserved by gentlemen to hunt and have pastime withal' when they would otherwise have been 'rooted out,' Harrison says (Book III, ch IV).

as Surrey, Henry VIII's courtier poet describes it. He sings also of other play at that Court:

> The dances short, long tales of great delight,
> With words and looks that tigers could but rue,
> When each of us did plead the other's right.
> The palme-play [courtyard tennis] where, despoiled for the game
> With dazed eyes oft we by gleams of love
> Have missed the ball, and got sight of our dame,
> To bait her eyes that kept the leads above.

That gay Court owed its character to the young, athletic Henry, one of the best archers in his own kingdom, not yet grown an obese and angry tyrant, but himself the glass of fashion and the mould of form. Leaving policy to his still trusted Wolsey, he spent in delights and pageants and masques the treasure which his careful father had laid up for the nation's need. Not to have been at Court was indeed, in Touchstone's words, to be damned. There the gentlemen of England learnt not only the intrigues of love and politics, but music and poetry, and a taste for scholarship and the arts, seeds which they took back to their rural homes to plant there. [See § 165–166, 170] The culture, art and scholarship of the Italian Courts of the Renaissance had great influence on the courtiers and nobles of England, from the time of the Wars of the Roses until the reign of Elizabeth. The mediaeval distinction between the learned clerk and the barbarous fighting baron was coming to an end, blending in the ideal of the all-accomplished 'gentleman.' The 'Courtier's, soldier's, scholar's, eye, tongue, sword,' the Elizabethan ideal afterwards realized in Sir Philip Sidney, had been rehearsed two generations before by Sir Thomas Wyatt (1503–1542), a kind and faithful public servant in a hard-hearted and faithless Court. He was just as happy in the privacy of his country estate:

> This maketh me at home to hunt and hawk
> And in foul weather at my book to sit.
> In frost and snow then with my bow to stalk
> No man doth mark where I so ride or go,
> In lusty lees my liberty I take. . . .
> Here I am in Kent and Christendome
> Among the muses where I read and rhyme.



IV Venetian Trading Ships

Marco Polo sets out from Venice

The 'cultivated country gentlemen' already existed, often like Wyatt, half a courtier. (See E. K. Chambers' and E. M. Tillyard's books on *Sir Thomas Wyatt*.)

At Court, Holbein and his studio were turning out apace portraits of Henry and of his chief nobles. Thence the fashion spread to the country houses, and family portraits took their place beside the tapestry that adorned the walls. Some of them were fine pictures by the Court painters, but most were creations of local talent—white-faced knights and ladies looking stiffly out at posterity from the painted boards. It was the beginning of a fashion that led up to Gainsborough and Reynolds. [See § 167–170.]

The music in the Chapel Royal was perhaps the best in Europe. And it was the fashion at that Court, from the King downwards, to compose musical tunes, and verses to go with them. The Tudor age was the great age of English music and lyrical poetry, two sisters at a birth, and the impulse may in part be traced to the Court of the young Henry VIII. But the whole country was filled with men and women singing songs, composing music and writing the verses. It was a form taken in England by the free, joyful spirit of the Renaissance, but here it was a rustic spirit, mingled with the song of birds in the greenwood, and leading up to the full chorus of Shakespeare's England.

When the Tudor age began, Venice still held the East in fee. [See Colour Plate IV.] The precious goods of the Indies, still borne on camels' backs, continued as for ages past to reach the Levant overland. Thence Venetian ships carried the spices to England, returning with cargoes of wool to feed the looms on the Adriatic. The Venetian trader was therefore a well-known figure in our island. In 1497 one of them reported home the discovery of Newfoundland made by his countryman John Cabot, five years after Columbus' greater exploit.

The Venetian, our countryman, who went with a ship from Bristol in quest of new islands, is returned, and says that 700 leagues hence he discovered land, the territory of the Grand Cham. He coasted for 300 leagues and landed, saw no human beings, but found some felled trees, wherefore he supposed there were inhabitants. He is now at Bristol with his wife. Vast honour is paid him; he dresses in silk, and these English run after him like mad people; . . . This discoverer of these places planted on his new found land a large cross, with a flag of

England and another of St Mark's by reason his being a Venetian, so that our banner has floated very far afield.

But it was significant of the future that the flag of St. Mark had not gone thus 'far afield' in a Venetian ship.

After this discovery, prophetic of an end of things for Venice and a beginning of things for England, nothing much came of it for two generations, except indeed cod-fishing by English, French and Portuguese fishermen off the New Foundland coast.[1] Throughout the early and middle Tudor period our commerce was conducted as before with the coast of Europe from the Baltic round to Spain and Portugal, most of all with the Netherlands, and above all with Antwerp, the centre of European business and finance. Even more rapidly than in the Fifteenth Century, the export of manufactured cloth by the Merchant Adventurers gained on the export of raw wool by the Staplers, and the volume of London's foreign trade continued to increase In the reigns of Henry VII and VIII English ships began to trade in the Mediterranean as far as Crete. In 1486 an English Consul was established at Pisa, where there were English merchants exploiting Florentine rivalry against the Venetian monopoly. But our goods still reached Italy chiefly in Italian ships.

Meanwhile the Portuguese were rounding the Cape of Good Hope and opening the oceanic route to the Eastern trade, a fatal blow to Venice. More slowly the English followed them along the West Coast of Africa, in defiance of their claim to monopolize the Dark Continent. As early as 1528 William Hawkins, father of a great line of seamen, traded in friendly fashion with the negroes of the Guinea coast for ivory. [See § 172.] It was his more famous son John who in Elizabeth's reign made the negroes themselves an article of export, and thereby almost destroyed the legitimate trade with the natives, who learnt to regard the white man as their deadly enemy. In the reigns of Edward VI and Mary the West African trade in its proper form was still being developed, besides voyages to the Canaries, to Archangel and ventures as far as

[1] The increase of deep sea fishing was a feature of early Tudor times, and helped to build up the maritime population and strength of the country, soon to be turned to such great account The herring had recently moved from the Baltic into the North Sea, and our herring fishery had sprung to importance as a result. 'These herrings,' wrote Camden, 'which in the times of our grandfathers swarmed only about Norway, now in our times by the bounty of Providence swim in great shoals round our coasts every year.'

Moscow; but except the cod-fishing off Newfoundland, nothing was done beyond the Atlantic by Englishmen before the reign of Elizabeth.

Although the 'vent of cloth' was still conducted mainly on the old lines and in the old European markets, it was constantly on the increase, supplied by the ever growing cloth manufacture in the towns and still more in the villages of England. After a stationary period in the Fifteenth Century, the cloth trade was again increasing by leaps and bounds. 'Enclosure for pasture' was a result Even before such enclosures were much complained of, foreigners had marvelled at the incredible number of sheep in England.

The manufacture of wool into finished cloth involved a number of processes, not all carried on by the same folk or in the same place. [See § 54, 55, 171] The capitalist *entrepreneur* passed on the raw material, the half-manufactured and the finished cloth from place to place, employing various classes of workmen or buying from various classes of masters in the process. William Forrest, in Edward VI's reign, grows prosaically lyrical over the ubiquitous cloth trade that employed so many kinds of skill.

> No town in England, village or borough
> But thus with clothing to be occupied
> Though not in each place clothing clean thorough,
> But as the town is, their part so applied
> Here spinners, here weavers, there clothes to be dyed,
> With fullers and shearers as be thought best,
> As the Clothier may have his cloth drest.

In another stanza he urges the now popular policy of encouraging the cloth trade at the expense of the declining export of raw wool·

> The wool the Staplers do gather and pack
> Out of the Royalme to countries foreign,
> Be it revoked and stayed aback,
> That our clothiers the same may retain,
> All kind of work folks here to ordain,
> Upon the same to exercise their feat
> By tucking, carding, spinning and to beat

Most of the weaving was done on the domestic system; the loom, owned and plied by the goodman of the house, was set up in garret or kitchen. But the fulling-mills on the western streams

must needs be more like factories, and some weaving was already done on what may be called the factory system. The clothier, John Winchcombe, was so rich and so princely that after his death in 1520 he became a legendary hero of ballad as 'Jack of Newbury,' a rival in fame to Dick Whittington himself. Tradition said that he led a hundred of his prentices to Flodden Field and feasted King Harry at his house. The Elizabethan Ballad proceeds to describe his factory of cloth:

> Within one room, being large and long
> There stood two hundred looms full strong.
> Two hundred men, the truth is so,
> Wrought in these rooms all in a row.
> By every one a pretty boy
> Sate making quilts with mickle joy.
> And in another place hard by
> A hundred women merrily
> Were carding hard with joyful cheer
> Who singing sat with voices clear

Possibly the cheerfulness, certainly the numbers, of the hands in the factory, are exaggerated by the retrospective ardour of the poet (E. Power, *Mediaeval People*, p. 158). Jack of Newbury of course founded a county family. His son supported the King against the Pilgrimage of Grace, acquired Abbey land, and sat in Parliament.

The volume of internal trade was far greater than the external. England still imported only luxuries for the rich. Her people were fed, clothed, housed and warmed by home products.

The rivers were a great means of transport especially for the heaviest goods, like the railways to-day. Even inland towns like York, Gloucester, Norwich, Oxford, Cambridge, were to a large extent ports on rivers.

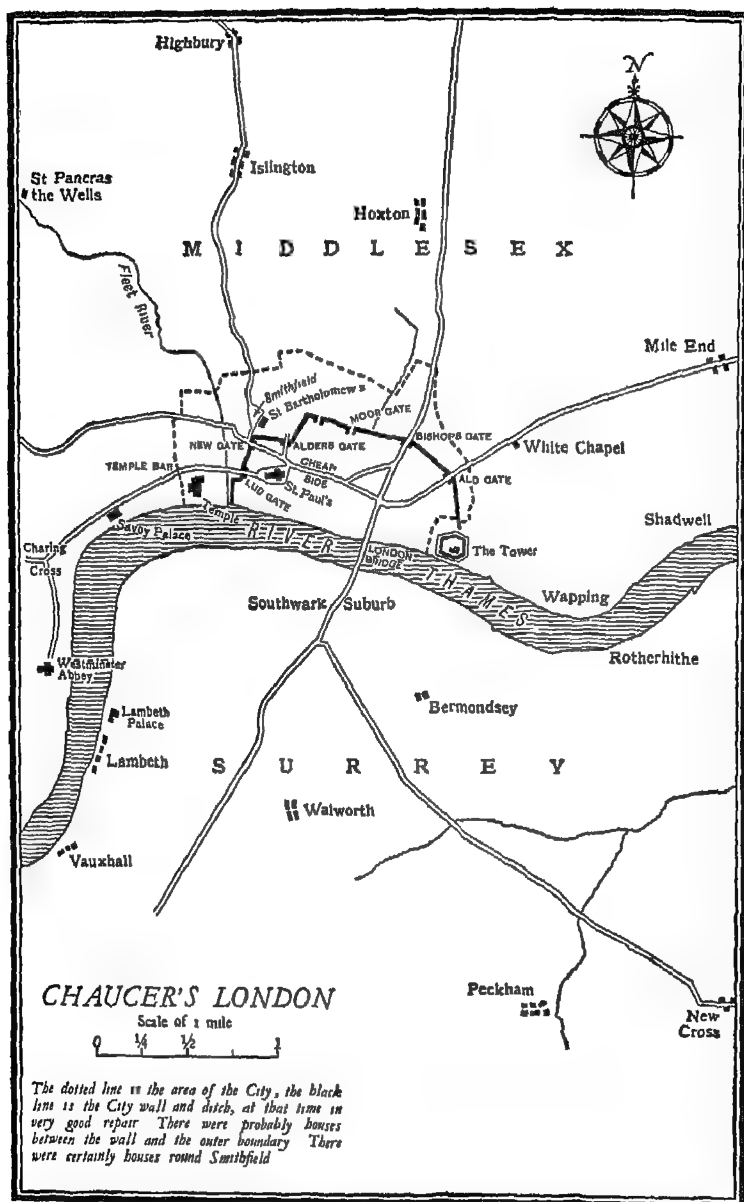
But the roads were used, then as now, for all local distribution and for much traffic in bulk The badness of the roads, though execrable by our standards, was not absolute In dry weather they were used by waggons, and in all weathers by pack-horse trains. As far as possible the roads followed by commerce kept to chalk and other hard soils, of which much of England is composed Where they had to cross marshy or clay belts, the traffic was helped by causeways, some of these were built by the merchants who needed them, in the absence of any effectual road authority.

Leland notes the causeway between Wendover and Aylesbury, 'else the way, in wet time, as in low stiff clay, were tedious to pass'

Even for long distance traffic of heavy goods the supremacy of water over road was not complete. Southampton, for example, flourished as a port serving London Certain classes of goods were regularly unshipped at Southampton and sent by road to the capital, to save the vessels from the necessity of rounding Kent.

Books for Further Reading

Darby's *Historical Geography of England* (1936), Chap IX, Miss Toulmin Smith's edition of *Leland's England*, Lord Ernle, *English Farming*, chap III, Tawney, *Agrarian problem in the Sixteenth Century*, and *Religion and the Rise of Capitalism*, *Social England*, ed Traill, vols. II and III, Baskerville, *English Monks and the Suppression of the Monasteries*, Lipson, *Ec Hist England*, II In working on this Chapter, I have been much indebted to the advice and notes of Mr John Saltmarsh of King's College, Cambridge


Highbury
Islington
St Pancras the Wells
Hoxton
MIDDLESEX
Fleet River
Mile End
Smithfield
St Bartholomew's
MOOR GATE
NEW GATE
ALDERS GATE
BISHOPS GATE
White Chapel
TEMPLE BAR
CHEAP SIDE
St Paul's
LUD GATE
ALD GATE
Temple
Savoy Palace
RIVER THAMES
LONDON BRIDGE
The Tower
Shadwell
Charing Cross
Southwark Suburb
Wapping
Rotherhithe
Westminster Abbey
Bermondsey
Lambeth Palace
Lambeth
SURREY
Walworth
Vauxhall
CHAUCER'S LONDON
Scale of 1 mile
0 ¼ ½ 1
Peckham
New Cross
The dotted line is the area of the City, the black line is the City wall and ditch, at that time in very good repair There were probably houses between the wall and the outer boundary There were certainly houses round Smithfield

DESCRIPTIVE NOTES TO THE ILLUSTRATIONS

These are grouped into three categories. 1 Colour Plates, 2 Gravure Plates (marked §), 3 Illustrations in the text

Colour Plate I *Frontispiece* (cf text p 24)

Troilus and Criseyde, by Geoffrey Chaucer. Corpus Christi College, Cambridge, MS No. 61 Frontispiece English, c 1400.

This full page miniature shows the poet reading his poem to an audience of courtiers in a garden Note the rich elaborate dress and the fantastic background of crags and castle. Though English in execution the style betrays an ultimate Italian influence

Colour Plate II (cf text p 60)

Parade Shield. Dept of British and Mediaeval Antiquities, British Museum. Flemish, late XVth century

This exquisite shield of parade would be displayed at tournaments and was not of course for protection in combat The whole spirit of mediaeval chivalry is incarnate in the decoration· the pale delicate elegance of the lady in her rich brocaded gown, the steadfast armoured knight kneeling before her with Death at his shoulder, and his vow on the scroll above him 'VOUS OU LA MORT,' all express the mystic rapture of the love poetry of the Middle Ages.

Colour Plate III (cf. text pp. 22, 67)

Hardwick Hunting Tapestry From a painted photograph by W G Thomson in the Victoria and Albert Museum, Dept. of Textiles. Flemish, mid-XVth century.

This tapestry is one of a series of four wool tapestries woven at Arras or Tournai, belonging to the Duke of Devonshire, which at one time hung in the Long Gallery at Hardwick Hall, Derbyshire They had been cut into pieces at some time unknown and were not restored and put together again until the beginning of this century

The subjects cover bear and otter hunting, hawking, deer hunting and boar hunting That reproduced here shows (in the centre foreground) the end of the hunt with a dead stag and the huntsmen apparently proceeding to the gralloch, to the left are hounds in leash In the right foreground water fowl are being caught with hawks There is a general background of wood and hills, topped by a castle, and nearer lies a water-mill with the river pouring through the sluices. Plenty of byplay

may be observed among the company Note the elaborate horn-shaped head-dresses of the women, their netted hair and long hanging sleeves. The scenes were probably inspired by Gaston de Foix's 'Livre de Chasse,' of *c.* 1440–50.

Colour Plate IV (cf. text, p. 127)

Li Livres du graunt Caam . ., by Marco Polo, Bodleian MS 264, ff. 218–271^{v} This miniature is on f 218 English, *c.* 1400 This scene depicts Marco Polo's embarkation at Venice; in the background is a view of Venice itself, while in the foreground are scenes from his voyages. The ships are the type of trading vessel which brought Venetian goods to England during the XVth century in return for wool.

§ 1 (cf text p. 3)

The Pageants of Richard Beauchamp, Earl of Warwick. B M. MS. Cott Julius E. iv (Art 6), f 20^{v} Flemish, late XVth century. This MS consists of 53 pencil drawings depicting various episodes in the life of the 2nd Earl (1382–1439). It was probably executed about 1493 by a Flemish artist working for Anne, Countess of Warwick, youngest daughter of the Earl and widow of the Kingmaker The drawings are of great delicacy and the page reproduced is a spirited illustration of men and horses in action.

§ 2 (cf. text p. 3)

Gold noble of Edward III, struck between 1360 and 1369. Dept. of Coins and Medals, British Museum.

§ 3 (cf text p 5)

'Open Field System,' Laxton Village, Nottinghamshire From an air photograph by Aerofilms, Ltd.

Note the 'strips' in the foreground running in different directions across the wide unfenced area (Cf. § 143 showing a map with open fields)

§ 4 (cf. text p. 5)

'Lands' and green furrows at Crimscote, near Whitchurch, Warwickshire From an air photograph by Aerofilms, Ltd.

§ 5 (cf. text p 6)

Queen Mary's Psalter B.M. MS Royal 2 B. vii, f. 78^{v}. English, early XIVth century

This Psalter owes its name to the fact that in 1553 it was prevented by Baldwin Smith, a London Customs officer, from being sent abroad and was presented by him to Queen Mary in October of the same year.

Besides its numerous full-colour miniatures this MS. is adorned with delicately tinted drawings which portray many scenes of contemporary life—all kinds of games, hunting and hawking, feasting and dancing The decorations of the Calendar are in full colour and illustrate the occupations of each month and

scenes dramatizing the zodiacal signs. The present illustration is that for August and shows peasants reaping corn under the direction of the reeve.

The tinted drawings are remarkable for their delicate yet lively style, their free and graceful treatment of drapery, their graphic delineation of animals in action and their close observation of the details of contemporary life.

§ 6 (cf text p 7)

Queen Mary's Psalter B M MS Royal 2 B vii, f. 74. (For general description of MS see note under § 5 above)

This illustration is from the Calendar under March and shows two shepherds watching their flock.

§ 7 (cf text p 6, 15)

The Luttrell Psalter B M. MS. Add 42, 130, f 158 English (East Anglian), *c.* 1340.

This MS was commissioned by Sir Geoffrey Luttrell of Irnham, Lincolnshire (1276–1345), it is richly illuminated throughout with miniatures and marginal drawings, as well as with decorative initials and borders The marginal subjects are of great variety covering many activities of contemporary life, they are drawn with vigour and are full of broad humour and realistic detail, forming a valuable commentary on the social life of the period The MS. is also remarkable for the fantastic monsters and grotesques, which posture in harsh colours alongside the morose peasants at their everyday work. In this illustration the man is riding to mill (as Clement Paston did) 'on the bare horseback with his corn under him' (cf text, p 15)

§ 8 (cf text p 7)

The Luttrell Psalter B M MS Add 42, 130, f 163^{v}. (For general description of MS see note under § 7, above.)

In this illustration the sheep are enclosed in a wattled pen, the woman in the foreground is milking a ewe, while two women carry away pitchers of milk on their heads In the background a man appears to be doctoring one of the sheep.

§ 9 and 10 (cf text p 9)

The Luttrell Psalter B M MS Add 42, 130, ff 170^{v} and 147^{v}. (For general description of MS see note under § 7 above)

These contrasted scenes illustrate the English yeoman as farmer and archer —

§ 9 shows a man sowing grain, his dog chases one crow away, while yet another crow is busy feeding at the sack of grain,

§ 10 shows archery practice at a range. The man standing in front appears to be instructing five others and a bull's eye has already been scored Note the bracers on the instructor's and the first archer's left arms

§ 11 (cf text p. 12)

Chroniques de France et d'Angleterre, by Jehan Froissart, vol ii. B.M MS. Royal 18 E 1, f 165^{v} This MS was probably one of those at Richmond Palace. Flemish, *c.* 1460.

The miniatures depict events which took place between 1377 and 1385. They are not of very good quality and suggest mass production. This scene portrays the Peasants' Revolt, John Ball (labelled with his name) rides in front of a most orderly array of helmeted peasants bearing the banners of England and St George

§ 12 and 13 (cf text pp. 13, 14)

Chroniques de France et d'Angleterre, by Jehan Froissart, vol ii B M MS Royal 18 E 1, ff 172 and 175. (For general description of MS. see note under § 11 above)

§ 12 shows the rebels murdering the Archbishop of Canterbury at the Tower,

§ 13 combines two incidents, on the left Wat Tyler meets his death as he threatens the young King, Richard II, and on the right Richard presents himself to the mob as their king and leader.

§ 14 and 15 (cf. text p 15)

The Luttrell Psalter B M MS Add. 42, 130, ff 170 and 181. (For general description of MS see note under § 7 above)

§ 14 shows a man ploughing with yoked oxen, while his fellow walks alongside with a long whip,

§ 15 shows a watermill, built of brick and timber, with a thatched roof In the foreground are the water-wheel and a wooden dam, while on the right can be seen two eel-traps set in the stream

§ 16 (cf text p. 15)

The Luttrell Psalter. B M MS Add. 42, 130, f. 173^{v}. (For general description of MS see note under § 7 above)

§ 16 A cart piled high with sheaves is being driven uphill, while various helpers push hard at the wheel or prevent the load slipping off

§ 17 and 18 (cf text pp. 16, 17)

Queen Mary's Psalter. B M MS Royal 2 B vii, ff 161 and 160^{v}. (For general description of MS. see note under § 5 above)

These two illustrations show archery practice and a wrestling match. In the latter scene one of the spectators holds up a pole with a cock, presumably the prize for the victor.

§ 19 (cf. text p 18)

Alnwick Castle, Northumberland. From an air photograph by Aerofilms, Ltd.

Alnwick Castle was originally a Norman work of the early XIIth century. Extensive additions, including a barbican and

flanking towers, were made by the Percys at the beginning of the XIVth century. The castle was much restored in the XVIIIth and XIXth centuries Note how closely the layout in its essentials corresponds with that of the humble peel tower in § 21.

§ 20 (cf text p 19)

Haddon Hall, Derbyshire From an air photograph by Aerofilms, Ltd

In spite of its apparent unity of design, Haddon Hall embodies some five centuries of building Parts of the chapel and the outer walls are XIIth and XIIIth century, while the Great Hall (which separates the two courtyards) and the offices are XIVth century. Most of the rest of the present fabric belongs to the XVth and XVIth century. The actual building of Haddon therefore corresponds roughly to its tenure by the Vernons, though it was altered and embellished in the XVIIth century by the Manners.

§ 21 (cf. text p. 18)

Smailholm Tower, Roxburghshire From the engraving by J. Greig after the painting by H Weber, from *Border Antiquities of England and Scotland*, by Sir Walter Scott (1814)

Note the situation on a rocky outcrop The tower itself formed the home of the laird and was surrounded by a strong outer wall within which the peasants and their cattle could be housed when danger threatened (Cf § 19)

§ 22 (cf text p. 18)

The Fortified Tower of Great Salkeld Church, Cumberland From a photograph in the Library of the National Buildings Record

The village of Great Salkeld was frequently exposed to attack since the Kings of Scotland laid claim to its manor This fortified tower was built about the time of Richard II, apparently as a place of refuge, it is four storeys high with an embattled parapet and a staircase turret Underneath it is a dungeon The walls are some six feet thick and perforated with smoke vents.

§ 23 (cf text p 19)

Li romans du bon roi Alexandre, by Lambert di Tours and Alexandre de Bernay, ff. 1–208 of Bodleian MS 264. This illustration is on f. 128. French, the first half of the XIVth century

The illuminations are stated in a colophon to be the work of Jehan de Grise and to have been finished on 18th April, 1344 In addition to the full-colour miniatures of the deeds of Alexander there occur in the lower margins many varied scenes of contemporary life, depicting indoor games and outdoor pastimes, windmills and forges, friars preaching and boys playing

at school. They are vividly drawn, often with close attention to detail, but they lack the artistry of the secular scenes in the *Queen Mary's Psalter* (cf under § 5 above) This illustration shows people warming themselves at a fire-place. Note the fire-irons and the decoration on the chimney-piece.

§ 24 (cf text p. 19)

Le Livre de Rusticon des prouffitz ruraulx, compile par Maistre Pierre Croissens, Bourgoiz de Boulogne B M. MS Add. 19, 720, f. 214 French, late XVth century.

The illuminations to this French Translation of Piero di Crescenzi's treatise on gardening, agriculture and rural pursuits are hard in outline and show fondness for rather harsh blues, reds and greens. In this illustration the master of the house is discussing matters with a gardener, one of the ladies is examining a bush while the others admire a flower with their attendant squire Note the small formal beds and the high brick wall shutting in the garden In both this illustration and those reproduced in § 45 below, the rather skimpy little plants assort oddly with the assured conventional representation of the buildings and the blue distant landscape.

§ 25 and 26 (cf. text p 20)

The Luttrell Psalter B.M MS Add 42, 130, ff 193 and 166^{v}. (For general description of MS see note under § 7 above)

§ 25. The woman on the left is turning her spinning wheel by means of a handle, while the one on the right is carding wool with two hand-cards.

§ 26 A woman, with her distaff tucked under her arm, is feeding her chickens. Note that the hen is tethered to a peg.

§ 27 and 28 (cf text p 20)

Queen Mary's Psalter B M. MS. Royal 2 B vii, ff 81^{v} and 75. (For general description of MS see note under § 5 above)

§ 27 From the Calendar under November. Two men are knocking down acorns to feed their swine

§ 28 From the Calendar under April (sign of Taurus, the bull), showing women driving cattle.

§ 29 (cf. text p 20)

The Luttrell Psalter B M. MS Add. 42, 130, f. 172^{v}. (For general description of MS see note under § 7 above)

Two women are reaping with sickles, while in the background a third appears to be suffering from backache. The man on the left is binding the sheaves.

§ 30–32 (cf text pp. 20, 21, 22)

Queen Mary's Psalter B M. MS. Royal 2 B. vii, ff. 73, 112 and 155^{v}. (For general description of MS see note under § 5 above)

§ 30. From the Calendar for February (sign of Pisces, fishes).

The men are hauling in a net, but seem to have caught very few fish in it

§ 31. A man is catching partridges with a drop net

§ 32 One woman is setting a ferret into a burrow, while another is netting a rabbit coming out of a hole on the other side

§ 33 (cf text p 21)
The Luttrell Psalter B M MS Add 42, 130, f 63. (For general description see note under § 7 above)
A clerk is netting a small bird, note the string being pulled to close the mouth of the net.

§ 34–36 (cf p 22)
The Luttrell Psalter B M MS Add 42, 130, ff 206ᵛ, 207 and 208 (For general description of MS see note under § 7 above) The first two illustrations show kitchen preparations for the meal depicted in the third illustration The top scene shows one man turning a spit on which are fowl and a sucking pig, while his companion tends the fire itself. The second one shows other kitchen servants engaged in pounding and chopping and apparently examining the contents of the steaming cauldrons The bottom scene shows Sir Geoffrey Luttrell at dinner, his cupbearer kneeling in front of the table It has been suggested that the two Dominicans on the left of the picture are probably his chaplain and his confessor. Note the shape of the knives and the lack of forks.

§ 37–39 (cf text p. 22)
Queen Mary's Psalter. B M MS Royal 2 B vii, ff 151ᵛ, 150ᵛ and 151. (For general description of MS. see note under § 5 above)
Note that in the hawking scene the two women are riding astride, the hawk has already fastened on one of the duck while the man on foot is ready to recall it with the lure.

§ 40 (cf text p 22)
The Pageants of Richard Beauchamp, Earl of Warwick B M MS Cott Julius E iv (Art 6), f 16 (For general description of MS see note under § 1 above.)
This scene shows a tournament in progress in the French lists, the king and his nobles watching from the gallery.

§ 41 (cf text p. 24)
Une povre et simple epistre dun vieil solitaire des Celestins de Paris adressant a tres excellent . prince Richart par la grace de dieu roy dangleterre etc B M MS Royal 20 B. vi, f. 2. French, 1395–6, probably the original copy presented to Richard II, one of the MSS formerly at Richmond Palace
The author of this allegorical work was possibly Philippe de Maizières, Chancellor of Cyprus, who joined the Celestine Order in 1380 and who had proposed a new crusading Order of the

Passion This miniature shows him presenting his book to King Richard and carrying a banner of the Lamb (symbolizing his new Order) Note the courtiers' long pointed shoes, their wide sleeves and parti-coloured hose.

§ 42 (cf text, p 24)

Thomas Occleve, *De Regimine Principum*. B M. MS. Harley 4866, f 88. English, early XVth century.

This portrait of Chaucer is the only one generally accepted as authentic Occleve had it painted from memory after Chaucer's death and had it placed opposite these lines in his poem.—

'Although his lyfe be queynt the résemblaunce
Of him hath in me so fressh lyflynesse
That to putte othir men in rémembraunce
Of his persóne I have heare his lyknesse
Do make to this ende in sothfastnesse
That thei that have of him lest thought and mynde
By this peynture may ageyn him fynde.'

(ll 4992–8)

(For a full discussion of this and the other so-called portraits of Chaucer, see M. H Spielmann's *Portraits of Geoffrey Chaucer* (Chaucer Society, 1900))

§ 43 (cf text p. 24)

The Luttrell Psalter B.M MS. Add 42, 130, f 202^{v}. (For general description of MS. see note under § 7 above)

Sir Geoffrey Luttrell is here shown mounted on his horse and attended by his wife, Agnes Sutton, and his daughter-in-law, Beatrice Scrope, the former of whom is handing him his helmet, while the latter holds his shield The ladies' gowns and the trappings of the horse repeat the Luttrell martlets of the shield

§ 44 (cf text pp 26, 27)

The Luttrell Psalter B M MS Add 42, 130, f. 164^{v}. (For general description of MS see note under § 7 above)

This mediaeval walled city is labelled 'Constantinus Nobilis' (Constantinople), but the artist has drawn an English city as he knew it with battlemented walls, a church (its spire topped by a weathercock), an inn (with its sign of a bush on a pole) and gabled shops and houses with signs. A group of people at the city gate are dancing to the music of pipe and tabor.

§ 45 (cf text p. 26)

Le Livre de Rusticon des prouffitz ruraulx etc B M. MS. Add. 19, 720, f 165 (For general description of MS see note under § 24 above.)

This shows a walled herb garden in the town. Gardeners are at work and the master appears to be discoursing to one of them on a plant which he has plucked

§ 46 (cf. text p. 29)

Geoffrey of Monmouth, *Historia Regum Britanniæ*. B.M. MS. Royal 13 A. iii, f. 14. English, early XIVth century drawings, though the MS. itself was written in the late XIIIth century. These drawings have been added in the lower margins of the pages, and represent a number of cities, among them London, Winchester and York. In this sketch of London there seems to be some attempt to represent Westminster and the many spires of the city.

§ 47 (cf. text p. 24)

The Fall of Richard II, by Jehan Creton. B.M. MS. Harley 1319, f. 57. French, early XVth century.

This MS. tells in French verse the events of 1399 and ends with the deposition of Richard and the accession of Henry IV. The 16 miniatures which illustrate it include representations of Richard's expedition to Ireland, his return to Conway, Henry's landing and reception of the Dukes of Exeter and Surrey at Chester, the capture of Richard, the meeting of Richard and Henry at Flint and the final scene (illustrated here) where Henry claims the throne on Richard's abdication. The scene is laid in the Parliament at Westminster, the bishops on the left, the nobles on the right. Henry can be seen in the background beside the vacant throne, he is wearing a high black cap.

§ 48 (cf. text p. 31)

The Pageants of Richard Beauchamp, Earl of Warwick. B.M. MS. Cott. Julius E. iv (Art 6), f. 18v. (For general description of MS. see note under § 1 above.)

This illustration shows a fight in the Channel between two ships, one of which is ramming the other, while the crews oppose each other with bows, arrows and spears, as if on land. The man at the mast top of the further ship has been transfixed by an arrow in the very act of hurling a missile himself.

§ 49 (cf. text pp. 31, 83)

Jean de Wavrin, *Chronique d'Angleterre*, vol. iii, B.M. MS. Royal 14 E. iv, f. 169v. Flemish, late XVth century.

This chronicle is based on Froissart and this particular volume deals with Richard II's reign up to 1387. It was executed for Edward IV, probably at Bruges. The scene depicted in this miniature illustrates the status of the Master of the Staple at this time.

§ 50 (cf. text p. 32)

William Grevel's House, Chipping Campden, Gloucestershire. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved.

Contrast this early XVth century stone-built Cotswold house of a great wool merchant with that (see § 110) of the Essex

cloth merchant, Thomas Paycocke, with its richly carved timber work.

§ 51 (cf text p 32)
High Street, Chipping Campden, Gloucestershire From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved
Chipping Campden was a great mediaeval wool centre. The present market house, from whose arches this photograph was taken, is Jacobean.

§ 52 (cf text p 34)
Flemish Weavers' Cottages, Lavenham, Suffolk From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved
Lavenham, with its great Perpendicular church, Gild Hall and Wool Hall (see § 112 below), its plaster cottages and fine timber houses (see § 151 below), retains to-day many evidences of its position as a mediaeval wool town. The cottages in this illustration are some of the oldest in the town and were inhabited by Flemish weavers, whose introduction (in the XIVth century) into England contributed so largely to the growth of our cloth trade

§ 53 (cf text p. 34).
The Merchant Adventurers' Hall, York From a drawing by E. R Tate (Sept 1912), reproduced in *Country Life*.
This interior dates from about 1370. Note the fine original roof.

§ 54 (cf text pp 34, 129)
Pictorial Illustrations to the Book of Genesis. B M. MS. Egerton 1894, f. 2v. English, XIVth century.
The outline drawings in this MS show great vigour and assurance, especially perhaps in the variety of facial expressions. Note the careful delineation of detail in this scene of a woman weaving at a loom.

§ 55 (cf text pp. 34, 129)
Des proprietez des Choses (French translation by Jean Corbechon of the *De Proprietatibus Rerum*) B M MS Royal 15 E iii, f 269. (The first part of this work is contained in Royal 15 E. ii, see § 56 and 144 below.) Flemish, late XVth century. This MS was written at Bruges in 1482 by Jean du Ries, possibly for Edward IV. The miniatures which illustrate it are often in a coarse, unattractive style but cover a wide variety of scenes and activities In this illustration the cloth is being dipped in the dye vat Note the faggots for keeping the fire going underneath the vat.

§ 56 (cf text p 35)
Des proprietez des Choses (French translation by Jean Corbechon of the *De Proprietatibus Rerum*.) B.M. MS. Royal 15 E. ii,

f 265 (The second part of this work is contained in Royal 15 E iii, see § 55 above) Flemish, late XVth century. (For general description of MS see note under § 55 above)
In this illustration the Gild Master is apparently judging the work of a mason and a carpenter.

§ 57 (cf text p 35)
John Lydgate, *Life of St. Edmund* B M MS. Harley 2278, f 28v. English, *c.* 1433.
This MS. was presented to Henry VI in 1433 by Lydgate In the prologue (ff. 6–10) which precedes the life, Lydgate tells of King Henry's visit to Bury St Edmunds at Christmas 1433 and a couple of miniatures illustrate this The miniatures throughout the MS are of course devoted to the events of St Edmund's life, and this one is intended to illustrate the Saint on his first landing in England superintending the building of his royal town at Hunstanton.

§ 58 (cf text p 35)
Book of Hours of John, Duke of Bedford (the so-called *Bedford Missal*). B M. MS Add. 18, 850, f 17v. French, early XVth century.
This sumptuous MS is lavishly illuminated with many miniatures, rich in gold and colour, as well as with elaborate borders of flowers, birds and foliage to every page of text It was probably executed for the marriage in 1423 of John of Lancaster, Duke of Bedford, and Regent of France from 1422 to 1435, to Anne of Burgundy. On Christmas Eve, 1430, the Duchess gave it, with her husband's consent, to the young King Henry VI at Rouen Portraits of the Duke and Duchess are introduced towards the end of the MS
The present illustration shows the building of the Tower of Babel. The artist has introduced all the paraphernalia of the mediaeval builders' craft The man to the left of the tower is mixing some kind of mortar, those on the right are sending up blocks of stone by means of a wheel and pulley. On the top of the tower itself is some rather unsafe looking scaffolding, from which one workman has already fallen. In the foreground masons are at work measuring and fashioning the stone.

§ 59 and 60 (cf text p 38)
Decretals of Gregory IX. B M. MS. Royal 10 E. iv, ff 222v and 49v (commonly called *The Smithfield Decretals*, since it belonged at one time to the Priory of St Bartholomew, Smithfield) Written in Italy but illuminated in England in the early XIVth century.
This MS. is full of rough vigorous drawings of scenes from English social life—crafts and sports are illustrated side by side with story pictures and numerous grotesques.

These two illustrations are of interest in showing a monk undergoing punishment in the stocks—actually for robbing a church—and the animal fable of the fox attired in a bishop's mitre and holding a staff, preaching to a congregation of geese and hens. There is a strong anti-clerical flavour in the animal fable literature of the time.

§ 61 (cf text p. 41)

Queen Mary's Psalter. B M. MS. Royal 2 B. vii, f. 131. (For general description of MS see note under § 5 above)

The showman is apparently leading his bear along the street when it turns upon a woman; its master seems about to beat it to heel.

§ 62–65 (cf. text p 41)

The Luttrell Psalter B M MS. Add. 42, 130, ff 32, 53, 78v and 70v (For general description of MS see note under § 7 above.)

§ 62 This figure of St James (the patron saint of pilgrims) is shown carrying a pilgrim's staff, and wearing a white cockle-shell in his hat and a wallet at his side.

§ 63 This beggar woman carries her child on her back and a rosary on her left arm.

§ 64 Two of the grinders are occupied in turning the grind-stone, while a third sharpens the knife

§ 65 This tinker carries his bellows slung on his shoulders. He takes no notice of a vicious little dog which seems to be biting his ankle.

§ 66 and 67 (cf text p. 41)

Li romans du boin roi Alexandre, ff. 1–208 of Bodleian MS. 264. These illustrations are on ff. 54v and 76 (For general description of MS. see note under § 23 above)

In these two illustrations the artist depicts puppet shows in progress The audiences seem to be segregated according to sex, although the shows would appear to be identical in type with much display of cudgels. The curtained booths and the attitude of the players (especially in that watched by the group of women) recall the later Punch and Judy.

§ 68 (cf text p. 41)

Decretals of Gregory IX. B.M MS Royal 10 E. iv, f. 58 (*The Smithfield Decretals*). (For general description of MS. see note under § 59 and 60 above.)

A woman is juggling on two swords to the music of a pipe and tabor.

§ 69–71 (cf. text p. 41)

The Luttrell Psalter. B.M MS. Add. 42, 130, f. 176. (For general description of MS see note under § 7 above)

These musicians are playing (§ 69) the nakers (i.e. kettledrums)

to which the player appears to be dancing, (§ 70) a symphony, and (§ 71) the bagpipes.

§ 72 (cf text p 42)

Li romans du boin roi Alexandre, ff. 1–208 of Bodleian MS. 264. This illustration is on f. 79. (For general description of MS. see note under § 23 above)

This illustration shows a friar preaching from an open-air pulpit.

§ 73 (cf. text p. 70)

The Warwick or Rous Roll. MS. in the possession of the College of Arms. English, 1477–1485

This Roll of the Earls of Warwick is illustrated with coloured drawings executed between 1477 and 1485 by John Rous, whose self-portrait (on the back of the Roll) is shown in this illustration. He is seen seated in his carved chair at work on his Roll.

John Rous (1411–1491) became in 1445 chaplain or chantry priest of Guy's Cliffe, near Warwick, which had been built in 1423 by Richard Beauchamp, Earl of Warwick. Besides his duties in this capacity Rous busied himself in antiquarian and historical work.

§ 74 and 75 (cf. text p 45)

Pilgrimage of the Life of Man, translated in 1426 by John Lydgate from G de Deguileville's *Pelerin de la vie humaine* B M. MS. Cott Tiberius A vii , ff 90 and 99. English, early XVth century.

This allegorical poem of the pilgrim's life is illustrated by crudely executed scenes showing his adventures. The two selected here are of interest as indicating the type of lodging that travellers and pilgrims to such shrines as Bury St Edmunds might meet with The first shows them satisfying their hunger, while in the second the beds are being prepared for the night. The stick was apparently used to beat and smooth the bedding.

§ 76 (cf text p. 42)

Book of Hours. B M. MS. Add. 29, 433, f. 89. French (with strong Italian influence), early XVth century.

This miniature is a graphic representation of the mediaeval idea of hell. The damned are being brought to hell's gate in carts and wheel-barrows by horned and sooty demons, unbaptized children arrive by the basketful slung on a demon's back or are flown direct clutched in the talons of winged monsters. Beneath the ornate roof of hell, Satan, surrounded by his devils, torturing the newest arrivals, himself swallows one victim whole, the while he seizes another.

§ 77 (cf. text p. 42)

'Doom,' Pickworth Church, Lincolnshire.

This illustration is from a measured water-colour drawing made by Mr E. Clive Rouse from the painting over the chancel arch, which he uncovered in 1947.

This newly discovered Doom or Last Judgment, is of particular interest in that it is an example of a mediaeval wall painting preserved since the late XIVth century without modern re-painting or restoration. It is painted above the chancel arch of the XIVth century church and unfortunately suffered mutilation by the lowering of the roof in the late XVth century.

In the centre can be seen the pierced feet of Christ resting upon the sphere. On either side are the Virgin and St. John and probably angels holding the cross and pillar, with traces of Apostles or Evangelists beyond. Below, the dead, rising from their graves, are being led away in two directions, the blessed (on the left) being conducted to heaven by St. Peter, carrying his keys, while the damned are dragged by a chain into hell's mouth by attendant demons. The subject is continued on the south clerestory wall, with a demon stirring three souls in a cauldron. The rest of the church is lavishly decorated with wall paintings of the Ascension, the weighing of souls and the familiar mediaeval motif of the Three Living and the Three Dead. (I am indebted to Mr. E. Clive Rouse for these descriptive details as well as for the photograph itself.)

§ 78 (cf. text p. 45)

Plan of Bury St. Edmunds engraved by R. Collins after a drawing by T. Warren (1776). From the copy in the Map Room of the British Museum.

This beautiful XVIIIth century plan with its elevations of notable Bury buildings (including that of the Abbot's Palace as it was in 1720) is reproduced here in order to illustrate the extent of the former Abbey grounds in relation to the town. The Great Court of the Abbey can be seen to the left of the Abbey church and the gateway, with dormitory and refectory between, while across the River Lark lies the vineyard of the Abbey. The Abbot's Palace stood at the top of the Great Court, flanked on the left side by the Abbot's brewhouse and stables.

§ 79 (cf. text p. 47)

Exeter Cathedral, the Nave, looking west. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved.

The Nave is of XIVth century work and was completed under Bishop Grandisson (1327–69). Note the elaboration of the ribbed vaulting.

§ 80 (cf. text p. 47)

Winchester Cathedral, the Nave, looking west. From a photograph by Walter Scott, Bradford, in the possession of the Library of the National Buildings Record.

The rebuilding of the Nave was begun by William of Wykeham

with William Wynford as his architect It is fine Perpendicular work of the late XIVth and XVth century date. The West Window (late XIVth century) was apparently glazed as a great triptych, but most of the glass was destroyed in the XVIIth century during the Civil War.

§ 81 (cf text p. 47)

York Minster, from the south. From an air photograph by Aerofilms, Ltd

The fabric was largely rebuilt in the XVth century, initially under William Colchester (master mason of Westminster Abbey). Note the amount of space occupied by the windows by this date.

§ 82 (cf. text p. 50)

New College, Oxford Engraving from Loggan's *Oxonia Illustrata* (1675) From a copy in the Cambridge University Library

William of Wykeham founded New College in 1379, most of the building taking place between 1380 and 1400, his seventy scholars were to be drawn from his college at Winchester (see note for § 83 below).

In Loggan's view the gateway and tower, together with the chapel, hall and cloisters are much as they were in their founder's day, but a storey had been added to the front quadrangle in the XVIIth century. We can thus see Wykeham's College as it was before the unhappy additions and restorations of the XIXth century. Note in the background the old city wall (XIIIth century), (see § 123 below).

§ 83 (cf text p. 49)

Winchester College. Engraving from Loggan's *Oxonia Illustrata* (1675) From a copy in the Cambridge University Library.

William of Wykeham founded his college of St Mary's at Winchester in 1382 A grammar school (at which Wykeham was himself educated) already existed in Winchester, but in founding his college, Wykeham had in view the building up of a secular clergy. From this college at Winchester were to be drawn the scholars of his New College at Oxford (see note for § 82 above). The buildings of Winchester College—the outer and middle gateways, the inner quadrangle, the chapel and the cloisters are substantially the same in Loggan's view as at their first building, except for the tower, which had been rebuilt between 1473 and 1481.

§ 84 (cf text p 49)

William of Wykeham's Chantry Chapel, south aisle of Winchester Cathedral From a photograph by Walter Scott, Bradford, in the possession of the Library of the National Buildings Record.

This chapel was built by Wykeham himself, who was Bishop of Winchester from 1367 to 1404, and was responsible for

rebuilding the Norman nave of the Cathedral in Perpendicular style. He also founded New College, Oxford, and Winchester College His tomb (shown here) has three figures at the foot, representing three clerks.

§ 85 (cf text p. 52)

John Lydgate's *Troy Book* and *Story of Thebes*. B.M MS. Royal 18 D ii, f. 148 Illuminations partly English XVth century and partly Flemish XVIth century.

This particular miniature is XVIth century Flemish work and is supposed to portray John Lydgate, monk of Bury St. Edmunds, leaving Canterbury 'by a mery conseyte' with the Canterbury Pilgrims, the while he adds his version of the Siege of Thebes to the Canterbury Tales. Note the girdling wall of the mediaeval city, with its bastions.

§ 86 (cf text p. 53)

Jean de Wavrin's *Chronique d'Angleterre*, vol iii B.M. MS. Royal 14 E. iv, f. 195. (For general description of MS see note under § 49 above.)

This XVth century illustration shows an English expedition arriving at Lisbon in 1385 and being received by John, King of Portugal. The occasion (as described by Froissart) was that of the departure of the King of Castile from the siege of Lisbon and the arrival of three English men-of-war with 500 archers They were made up mostly of adventurers from Calais, Cherbourg and Brest, who hearing of the war had assembled in Bordeaux and set out under three English captains eager to join in the fight Their coming was hailed with joy in Lisbon and the King of Portugal sent for them, thinking that John of Gaunt might have sent them to help him, since Gaunt (believing himself to be the rightful King of Castile) was eager in protestations of friendship to John of Portugal, who might be expected to help him against Spain. 'Sir,' quoth Northbery [one of the English captains], 'it is a long season sith he [John of Gaunt] had any knowledge of us or we of him Sir we be men of divers sorts seeking for adventures here be some are come to serve you from the town of Calais' John of Portugal accepted them gladly, dined them in his palace, had lodgings found for them and ordered their wages to be paid them for three months The adventurers gave him good counsel afterwards and helped him to win the Battle of Aljubarrota.

§ 87 (cf text p 53)

Tattershall Castle, Lincolnshire From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved

This tower built of narrow bricks by Ralph, Lord Cromwell (1394–1456), is all that remains of the great castle in which he

lived as Lord Treasurer to Henry VI. Its walls, some sixteen feet thick, contain noble fire-places with rich heraldic mouldings (see § 97 below).

§ 88 (cf. text p. 53)

Bible History, in Flemish B.M. MS Add 38, 122, f. 78^{v} Flemish, mid-XVth century.

This MS is illuminated with fine pen and ink drawings, the one reproduced here illustrates a Flemish brickworks with work in progress

§ 89 (cf text p. 75)

Queens' College, Cambridge. From a photograph by A. F. Kersting

Founded under the patronage of Queen Margaret of Anjou in 1448 and, after intermission during the Wars of the Roses, continued about 1465, under the patronage of Edward IV's queen, Elizabeth Wydville, and thereafter known as Queens' College, since it commemorates two queens The principal court (shown here) was almost complete when the Civil Wars broke out. The gateway of red brick has octagonal turrets (The dial on the old chapel wall on the left is XVIIIth century)

§ 90 (cf text p 56)

The Court of the King's Bench From *Archaeologia*, XXXIX (1863), p 357 English, early XVth century

This miniature is one of four vellum leaves surviving from a law treatise of Henry VI's reign The other three leaves represent the Courts of Chancery, Common Pleas and Exchequer. The present illustration shows at the top the five judges of the Court, below them are the king's coroner and attorney, etc. On the left are the jury and in front in the dock is a prisoner in fetters, with serjeants of the law on either side of him In the foreground more wretched prisoners, chained together, wait their turn, watched over by gaolers On the centre table stand the ushers, one of whom seems to be swearing in the jury.

§ 91 (cf text p 60)

Roman de la Rose. B M MS. Harley 4425, f 12^{v} Flemish, late XVth century

This elaborately illuminated MS of the well-known allegory, illustrates the mediaeval idea of chivalry and all that it entailed Here (in the miniature shown) is the walled formal garden, with its gushing fountain, flowering shrubs and trees full of fruit On the lawn beside the fountain sit the ladies with their attendant knights making music.

§ 92 (cf text p. 67)

Boccaccio, *De Claris mulieribus.* (French version) B M MS. Royal 16 G v, f. 56. French, early XVth century

This miniature shows a royal lady weaving at a loom, with her

women spinning in company. It illustrates well the kind of activity that went on in palace and manor all through the Middle Ages. Thread was spun, materials woven and embroidered, while tapestry reproduced the stories that were told to the accompaniment of busy fingers.

§ 93 (cf. text p. 67)

Oeuvres de Virgile. Holkham MS 311. Frontispiece to the Georgics. From *Les MSS. à peintures de la Bibliothèque de lord Leicester à Holkham Hall, Norfolk*, par Leon Dorez, Paris, 1908, Plate LI. Flemish, late XVth century.

Every manor depended on its farm for food and fuel. The artist has crowded into this miniature the labourers with their farm implements, the woodsmen and the hedgers and ditchers, all the cattle and horses and has not forgotten Virgil's bees. One realizes how busy the ladies of the household would be kept dealing with the products of all this activity.

§ 94 (cf. text p. 67)

Tapestry at St. Mary's Hall, Coventry. From a painted photograph (1881) in the Victoria and Albert Museum, Dept. of Textiles. Flemish, late XVth century or possibly early XVIth century.

This tapestry hangs beneath the north window in St. Mary's Hall, Coventry, and appears to have been woven for the space it occupies, since it fills it precisely. It is divided into compartments, the scenes representing the Assumption of the Virgin, with the twelve Apostles kneeling on either side. Above, angels flank a central figure of Justice, which is a later insertion probably replacing a Christ in Majesty or the Trinity. In the lower compartments (to left and right) are the figures of a king and queen attended by courtiers. These are variously identified as Henry VI and Margaret of Anjou or Henry VII and Elizabeth of York: the tapestry may have been woven to commemorate a visit of either to Coventry.

§ 95 (cf. text p. 67)

Domestic wall-painting at Longthorpe Tower, near Peterborough. Photograph by courtesy of Mr. E. Clive Rouse. English, second quarter of the XIVth century.

These wall-paintings were discovered early in 1947 in the Great Chamber of this late XIIIth century fortified house. They are amongst the earliest known domestic wall-paintings in England and reveal the hitherto unimagined richness of decoration which might be found in the home of a country gentleman of Chaucer's time. The Tower (which contains the Great Chamber) appears to have been a later addition to the manor-house itself, to which it is connected by a passage in the wall at first-floor level. The whole of the walls to floor level and the vault of this chamber were found to have been covered with mural paintings. Only

two of the scenes are purely religious, the remainder being moral and secular, and embrace what appear to be moral or allegorical subjects, such as are associated with the mediaeval teaching of youth. The present illustration shows the north wall and gives some idea of the comprehensive scheme of decoration including even the window recesses—the window itself has been altered The Seven Ages of Man are depicted above a Nativity, while on either side of the window recess are figures of the Apostles with scrolls bearing sentences from the Creed, which are continued round the room above a border of birds grouped in pairs.

For a full preliminary description of the discovery and the decoration itself, reference should be made to Mr. E. Clive Rouse's article in *Country Life* (April 4, 1947).

§ 96 (cf text p 68)

The Great Hall, Penshurst Place, Kent From a drawing by Edward Blore (1787–1879), architect and artist, and son of the topographer Thomas Blore B M MS. Add 42, 017, f 70.

The Great Hall of Penshurst built by Sir John de Pulteney in the XIVth century is a substantially untouched feudal hall with open hearth in the centre, screens and minstrels' gallery and a raised dais for the high table.

§ 97 (cf text p. 68)

Fire-place at Tattershall Castle, Lincolnshire From a photograph by *Country Life* (See general note under § 87 above.)

This is a fire-place on the ground floor of the brick tower in § 87 and illustrates Ralph, Lord Cromwell's love of richly ornamented chimney-pieces This one has an ogee arch with crocketed finial, below which appears his shield, while on either side are the shields of his family alliances, alternated with the Lord Treasurer's purse.

§ 98 and 99 (cf text p 68)

King Henry VI's Psalter B M MS. Cott. Domitian A xvii, ff. 175^v and 122^v English, *c.* 1430

This MS. was probably a gift to Henry VI from his mother on his coronation at Paris in 1430, his portrait appears in six of the miniatures. The miniatures are executed with great delicacy—the architectural detail being especially fine in the two illustrated here of nuns and monks in choir. Note the lively treatment of the faces

§100 (cf. text p 70)

Waynflete Chantry, Winchester Cathedral. From a photograph by Dr. Weaver, Trinity College, Oxford, in the possession of the Library of the National Buildings Record

This is an example of the side-chapel type of chantry within a cathedral The tomb of William of Waynflete, Bishop of Winchester from 1447 to 1486, lies within its carved and canopied

chapel in the retrochoir. He was the founder of Magdalen College, Oxford, and Provost of Eton

§ 101 (cf text p. 70)

Chantry Chapel, Wakefield Bridge, Yorkshire From a photograph of a XIXth century engraving in the possession of the Library of the National Buildings Record

This XIVth century bridge chapel was restored in the mid-XIXth century. It was first endowed as a chantry by Edmund, Duke of York, in 1398, but had already been in receipt of a grant under Edward III for the singing of masses.

§ 102 (cf. text p. 75)

Grammar Hall, Magdalen College, Oxford. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved

In 1480 William of Waynflete founded a Grammar School for his College of St Mary Magdalen at Oxford It was set up within the precincts of the College and had a grammar master and usher appointed. Its purpose was to provide a preliminary grounding for University courses, and one of its first teachers was John Stanbridge, the author of the *Parvulorum Institutio* (a woodcut from which in Wynkyn de Worde's edition is reproduced on page 73) The building in the centre of this photograph is all that remains of the Grammar School and the old Magdalen Hall.

§ 103 (cf text p 75)

Magdalen College, Oxford From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved.

The roofed cloister with stone figures (illustrated here) was built about 1480 (For a note on the founder, William of Waynflete, see under § 100 above.)

§ 104 (cf. text p 76)

Duke Humphrey's Library in the Bodleian, Oxford From a photograph by A F Kersting

Humphrey, Duke of Gloucester, gave to the University of Oxford many of the books he had seized from the Louvre and elsewhere during his French campaigns. In 1444 the University asked his permission to use his name as founder of the building they intended to erect to house his gifts This building now forms part of the Bodleian and is still known as Duke Humphrey's Library, although almost all of Duke Humphrey's books have long since been dispersed.

§ 105 (cf. text p 77)

From Sanderus' *Flandria Illustrata* (1641) Reproduced from William Blades' *William Caxton* (1882), Plate II.

This shows the House of the Merchant Adventurers in Bruges where Caxton lived as Governor of the 'English Nation' as the

Merchant Adventurers were known in the Low Countries From being a merchant of the Mercers' Company, Caxton seems to have become Governor of the English merchants at Bruges between June 1462 and June 1463.
In this house each merchant lived under rules as strict as a monastery's, since the foreign merchant in the Low Countries had to endure many restrictions in his manner of trading and in his way of life

§ 106 (cf text p. 77)
The oldest known representation of a printing press from the title page of Hegesippus' *Historia de Bello Judaico*, printed by Judocus Badius Ascensius in Paris (1507) Reproduced from William Blades' *William Caxton* (1882), Plate VII.

§ 107 (cf text p. 77)
A German printing press from Jobst Amman's *Stande und Handwerker* (1568) Reproduced from William Blades' *William Caxton* (1882), Plate IX

§ 108 (cf. text p. 80)
Poems of Charles, Duke of Orleans B M MS Royal 16 E ii, f 73. Executed in England in Flemish style *c* 1500
Charles, Duke of Orleans, father of Louis XII of France, was captured at Agincourt and imprisoned in England from 1415 to 1440 (cf text, p 25, for the life of French prisoners in England). This splendid miniature shows the Pool crowded with ships, old London Bridge in the background with its mediaeval houses, and in the foreground the Tower of London The mediaeval practice of showing several episodes in a man's life side by side in one miniature is followed here—the Duke can be seen seated within the Tower writing, at a window, and in the courtyard handing a letter to a messenger.

§ 109 (cf text p. 82)
Brass of Thomas Pownder and his wife in the Church of St. Mary Quay, Ipswich, Suffolk. From a rubbing in the British Museum, Add MS. 32,489, EE 5 Flemish, 1525
This brass, engraved in Renaissance style, is a good example of Flemish work It shows Thomas Pownder, merchant bailey of Ipswich, his wife and family The shield in the centre bears upon it his merchant marks, with his initial T in the middle of it. The shields on either side bear the arms of Ipswich and of the Merchant Adventurers

§ 110 (cf text p. 82)
Thomas Paycocke's House, Great Coggeshall, Essex From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved
The village of Great Coggeshall lay in the centre of the great cloth-making district of Essex, and here the clothier Thomas

Paycocke built (about 1500) the house shown in this illustration. Its timber is rich in carving, note the leaf and flower decoration of the bressumer supporting the upper storey, the linen-fold panelling of the door on the left and the figure on the right side of it.

§ 111 (cf text p. 82)

Little Sodbury Manor, Gloucestershire. From a photograph in the Library of the National Buildings Record.

This stone manor-house was originally held by the family of Stanshaws in the XVth century. The porch and the part to the left of it are XVth century, while that to the right (with corbelled bay window) is early XVIth The manor has a fine XVth century hall with an open timber roof.

§ 112 (cf text p. 82)

Wool Hall, Lavenham, Suffolk. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved. (Cf note on Lavenham under § 52 above)

This was probably the Hall of the Gild of St. Mary the Virgin and dates from about 1480.

§ 113 (cf text p 85)

The Passion Play of Valenciennes. Paris, Bibliothèque Nationale, MS. franc. 12,536. French, 1547

This water-colour drawing well illustrates one kind of mediaeval stage, in which the various scenes against which the action took place are ranged in order across the stage from Heaven to Hell-mouth The various 'mansions' are labelled Nazareth, Jerusalem, The Palace, etc.

§ 114 (cf text p. 85)

Book of Hours. executed for Etienne Chevalier by Jehan Fouquet. Musée Condé, Chantilly French, XVth century

This miniature (Miniature No. 44 according to Henri Martin's classification) shows a typical mystery play of the XVth century being acted on a wattled stage (the mansions of heaven and hell appearing to left and right). The play is that of the Martyrdom of St Apollonia, an aged deaconess of Alexandria, alleged to have suffered martyrdom in A.D. 248/9. Her teeth were pulled out with pincers and on being threatened with death by burning she cast herself on the pyre 'by supernatural impulse' according to St Augustine. Her aid as patron saint was invoked against the toothache!

§ 115 (cf. text p 85)

The Plays of Terence. Paris, Bibliotheque d'Arsenal, cod lat. 664, f 1v (the so-called *Térence des ducs*). French, early XVth century.

This richly illuminated MS. (which owed its name to its having belonged first to the Duke of Guyenne (*d* 1415) and then to

his uncle, the Duke of Berri (*d.* 1416) is of great importance for the history of the drama of the Middle Ages and its costume This miniature (the frontispiece) shows the miming of a classical comedy by masked actors, the book being apparently recited from a draped box, before a crowded audience, the whole being enclosed in a circle labelled 'Theatrum joculatoris.' Below, the author is seen presenting his book to his patron.

§ 116 and 117 (cf text pp. 26, 88)
Oxford and Cambridge. From engravings from Loggan's *Oxonia Illustrata* (1675) and *Cantabrigia Illustrata* (1690) respectively, from copies in the Cambridge University Library. These are of particular interest in showing that enclosure and open fields flourished at the same time It so happens that the enclosures can be seen on the hills behind Oxford, while open-field cultivation proceeds in the foreground of the Cambridge view. Note in the latter that the land has been opened as pasture directly after the harvest has been gathered.

§ 118 (cf text p 89)
William Tyndale (*d.* 1536) From the portrait by an unknown artist in the National Portrait Gallery.

§ 119 (cf text p. 89)
Cardinal Wolsey (1475?–1530). From the portrait by an unknown artist in the National Portrait Gallery.

§ 120 (cf. text p. 89)
Sir Thomas More (1478–1535). From the portrait after Hans Holbein in the National Portrait Gallery.

§ 121 (cf. text p. 93)
Edward VI's coronation procession (commonly known as 'The Riding from the Tower'). From a water-colour copy made for the Society of Antiquaries by S H Grimm in 1785 from the picture (*c* 1547) at Cowdray, destroyed by fire in 1793.
The procession is shown passing down Cheapside on its way to Westminster In the centre can be seen Cheapside Cross, on the extreme left is the Tower and on the right old St Paul's Note the tall gabled houses and the rich hangings which decorate the balconies in honour of the procession.

§ 122 (cf text p 93)
Joris Hofnagel's 'Tudor Wedding' (1590). From a water-colour copy made by S H Grimm (1788) for the Society of Antiquaries from the original painting at Hatfield House.
This probably represents a wedding feast by the old Church of St. Mary Magdalen at Bermondsey, though the scene has been variously described as a 'Tudor masque' and 'Horsleydown Fair.' The vigour and incident of the scene with its feasting and dancing is a lively portrayal of Tudor England at the end of the XVIth century

§ 123 (cf text p 94)
The old City Wall (XIIIth century) in the gardens of New College, Oxford. (Cf. § 82 above.) From a photograph by A. F Kersting.

§ 124 (cf text p 95)
The ruins of Bury St Edmunds Abbey, Suffolk, as engraved by R Godfrey in 1779. From the copy in the Map Room of the British Museum.
The Abbey was dissolved in 1540 and this print is of interest as showing the extent to which the buildings had been despoiled some 230 years later (Cf also § 128 below)

§ 125 (cf. text p 101)
Trinity College, Cambridge. From an engraving by Loggan in his *Cantabrigia Illustrata* (1690) From a copy in the Cambridge University Library
Founded by Henry VIII in 1546 the College absorbed King's Hall (1336), Michael House (1323) and Physick's Hostel (belonging to Gonville Hall) together with some minor hostels The Great Court (as shown by Loggan) owed its form to Neville (appointed Master in 1573), the Chapel was finished about 1564, the Library (in the far distance) by Wren was just being completed at the time of Loggan's engraving.

§ 126 (cf text p 101)
Christ Church, Oxford From an engraving by Loggan in his *Oxonia Illustrata* (1675). From a copy in the Cambridge University Library
Founded by Cardinal Wolsey in 1525 as Cardinal's College, and converted after his fall into 'King Henry VIII's College at Oxford' in 1532, it did not become Christ Church until 1546. The lower part of the Tower, Tom Quad, the Hall and Kitchens are of Wolsey's time, while the Cloisters are XVth century The rest is of XVIIth and XVIIIth century date.

§ 127 (cf text p 106)
Much Wenlock Abbey, Shropshire From a drawing by Edward Blore (for whom see note under § 96 above) B M MS Add 42,018, f 31
This Cluniac Priory was surrendered in 1539, when the Prior's lodging (which had only been built at the end of the XVth century) together with the Infirmary building (of Norman date) were taken over by the Lawley family and used as a dwelling house, although the Priory church and St Milburga's shrine were destroyed

§ 128 (cf text pp. 95, 106)
Bury St Edmunds Abbey, as engraved by S. Kendall (1787). From the copy in the Map Room of the British Museum.
(Cf. § 124 above)

§ 129 (cf text pp 95, 106)

Castle Acre Priory, Norfolk From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved

The Priory was surrendered to Henry VIII in 1537 and was granted to the Duke of Norfolk On the left can be seen the ruins of the west end of the Priory Church—a XVth century Perpendicular window above a Norman doorway and arcading. On the right lies the Prior's lodging built by Prior Winchelsea at the beginning of the XVIth century

§ 130 (cf text p 106)

Titchfield Abbey, Hants From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved. For description of this illustration see caption

§ 131 (cf text p. 106)

The Chained Library, Hereford Cathedral. From a photograph in *Cathedrals* (1926), by courtesy of British Railways

This mediaeval library still contains over 2,000 chained volumes Note the rail to which the chains are fastened and the placing of the books with fore edges facing outwards

§ 132 (cf text p 106)

St Augustine's Abbey, Canterbury. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved

The Great Gate was built by Abbot Fyndon between 1300 and 1305 The upper part formed a lodging for distinguished guests.

§ 133 (cf text p. 106)

The Abbot's Kitchen, Glastonbury From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved

Built entirely of stone in the late XIVth or early XVth century, this kitchen has a vaulted roof and four enormous fire-places. In the lantern hung the bell to call the poor to the Almonry which adjoined the kitchen on the north side.

§ 134 (cf text p. 106)

The 'carrels' in the South Cloisters, Gloucester Cathedral. From a photograph by Mrs. J P. Sumner, in the Library of the National Buildings Record

This cloister was completed by Walter Froucester, who was Abbot from 1382 until his death in 1412.

§ 135 (cf text p 106)

The Refectory, Chester Cathedral. From a photograph in *Cathedrals* (1926) by courtesy of British Railways.

Built by Abbot Simon de Whitchurch 1265–90.

§ 136 (cf text p. 106)
The Chapter House, Wells Cathedral. From a photograph by A. F. Kersting.
Begun probably under William de Marchia, Bishop (1293–1302), who built the walls, it was finished about 1319 under John de Godelee, Dean (1306–1333), when the vaulting and windows were built. The vaulting ribs branch out from the cluster of shafts which form the central pillar of this octagonal chapter house. The carved and canopied stalls are ranged round the room as a wall arcade above the stone bench which forms the seats of the stalls.

§ 137 (cf text p 106)
The Abbot's Tribunal, Glastonbury. From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved
Built by Abbot Beere, *c.* 1493.

§ 138 (cf. text p. 108)
The Gild Hall, King's Lynn. From a photogaph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved
Built about 1423 this Gild Hall has a chequered front and entrance porch of flint and freestone It was the Hall of the Trinity Gild. The arms above the porch are of Edward VI and Elizabeth.

§ 139 (cf text p. 109)
Grammar School, Stratford-on-Avon. From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved.
Built about 1473 as the Gild House, its 'over hall' or 'dorter' was converted into a schoolroom by Shakespeare's father, and became the Grammar School The hall beneath housed the Court of Records and was also the scene of plays performed before the Bailiff for his approval by companies coming to the town, before they gave public performances in the inn yards. It was probably also the scene at other times of the Latin plays acted by the boys of the Grammar School.

§ 140 (cf. text p. 108)
Edward VI granting the Charter to Bridewell, from an engraving by George Vertue, published 16th February, 1750, after a contemporary picture at Bridewell Hospital. From Vertue's *Nine Historical Prints*, republished by the Society of Antiquaries, 1776
The King is shown giving the Charter to the Lord Mayor and Sheriffs of London. Those surrounding the King are identified by Vertue Among them the Master of the Rolls and the Earl of Pembroke, with 'in the corner the face of Hans Holbein the painter' The granting of the Charter took place, however, in 1553, ten years after Holbein's death

§ 141 (cf. text p. 109)

Sir Nicholas Bacon (1509–1579). From the portrait by an unknown artist in the National Portrait Gallery.

Bacon was Lord Keeper of the Great Seal (1558) and High Steward of St. Albans, the friend of Matthew Parker and benefactor of Corpus Christi College, Cambridge.

§ 142 (cf. text p. 109)

Gorhambury, St Albans. From a XVIIIth century water-colour drawing, by courtesy of *Country Life*.

The house shown here was built by Sir Nicholas Bacon between 1563 and 1568, partly with stone from the Abbey of St. Albans. The Abbey, after its surrender in 1539, was granted in 1541 by Henry VIII to Ralph Rowlett, Merchant of the Staple at Calais (*d.* 1543). It passed thence to his brother who sold it in 1561 to Sir Nicholas Bacon.

§ 143 (cf. text pp. 88, 110)

Map of the Manor of Feckenham, Worcestershire. Reproduced by courtesy of the owner, Dr. Edward Lynam.

This map was drawn by John Doharty the Younger (1677–1755) in 1744 from an earlier map surveyed and drawn by John Blagrave in 1591. It shows a typical Tudor manor, the chief buildings, court house, church, mill, etc., can be easily identified, but the map is of special interest in showing the common lands and the gradual encroachment on these and on the 'lord's wastes' by different land-holders who are named in the key. (For fuller details see Dr. Lynam's 'The Character of England in Maps,' *Geographical Magazine*, June, 1945.)

§ 144 (cf. text p. 112)

Des Proprietez des Choses. B.M. MS. Royal 15 E ii, f. 165. (The second part of this work is contained in Royal 15 E iii, see § 55 above.) (For general description of this MS. see note under § 55 above.) Flemish, late XVth century.

This illustration shows patients arriving for treatment by a physician and waiting their turn to be seen. The first man is being bled.

§ 145 (cf. text p. 112)

The Dance of Death, by Hans Holbein the Younger (Cologne, 1573). From the copy in the Cambridge University Library.

§ 146 (cf. text p. 118)

William Cecil, Baron Burghley (1520–94). From the portrait attributed to Marc Gheerhaerdts in the National Portrait Gallery.

This great Tudor statesman held the lucrative office of *custos brevium* in the Court of Common Pleas from 1547 to 1561, after a period in the Tower consequent upon his having been secretary to the Lord Protector Somerset (who was disgraced in 1549),

he became Secretary of State in 1550, was created Baron Burghley in 1571, becoming Lord High Treasurer from 1572 to 1598 and Elizabeth's chief Minister (For his building of Burghley House, see note under § 149 below.)

§ 147 (cf text p. 118)

Edward Seymour, 1st Duke of Somerset (1506?–1552) From the portrait by an unknown artist in the National Portrait Gallery.

Brother of Henry VIII's third wife, Jane Seymour, Edward Seymour was closely associated with the King's household and was made Lieutenant of the Kingdom during Henry's absence in France in 1544 The next year he was active and successful in the war with France, becoming Lieutenant-General in 1546. On Henry's death he was appointed Lord Protector to the young Edward VI and Duke of Somerset the same year. His fall in 1549 was brought about by the measures he advocated, which stirred up much opposition against him and brought him to the Tower. After a brief period of pardon and re-admission to the King's favour he was arrested again in 1551 and beheaded on Tower Hill in 1552.

§ 148 (cf. text p. 118)

From a portrait of two unknown sitters (formerly thought to be William Cecil, Baron Burghley, and his second wife, Mildred) by an unknown artist (1596) in the possession of the Hon. Michael Astor, M.P.

(Cf. text, p. 127, for comments on Elizabethan portraiture. Note the stiff attitudes, the white faces, the attention to the rich detail of the dress.)

§ 149 (cf text p. 124)

Burghley House, Northamptonshire From a drawing by Edward Blore (for whom see note under § 96 above). B.M. MS. Add. 42,019, f. 82.

Cecil (for whom see note under § 146 above) began to build Burghley House in 1556, on the site of the old manor-house. Subsequent portions were added between 1577 and 1587 from designs by John Thorpe (who also designed Kirby Hall, Northamptonshire, about the same time). This great Tudor house provides an example of one paid for 'by money made in the Courts of Law' (cf. text p. 120).

§ 150 (cf. text p. 89)

Title page of the Fourth Great Bible. Printed in London by Edward Whitchurch in November 1540, but not published until 1541. From a copy in the British Museum.

A royal proclamation was made on May 6, 1541, ordering 'that in al & syngular paryshe churches, there shuld be prouyded by a certen day now expired, at the costes of the

curates & paryshioners, Bybles Conteynge the olde & newe Testament, in the Englyshe tounge, to be fyxed & set up openlye in euery of the said paryshe Churches . . . By the which Iniunctions the kynges royall maiestye intended that his louynge subiectes shulde have & use the commodities of the readyng of the said Bibles . . . humbly, mekely, reverently & obediently . . .'

After 1541 Bible printing ceased for the rest of Henry's reign, since Bishop Gardiner condemned the translation which the Church had been so lately ordered to procure A new translation (closer to the Vulgate) was decided on, but not proceeded with.

§ 151 (cf text p. 123)

Tudor house, Lady Street, Lavenham, Suffolk From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved

Note the doorway and the fine timber work. (For general note on Lavenham, see note under § 52 above)

§ 152 (cf text p. 123)

Tudor cottages at Chiddingstone, Kent From a photograph in the Library of the Central Office of Information. Crown copyright reserved.

§ 153 (cf text p 124)

Compton Wynyates, Warwickshire From a photograph in the Library of the Central Office of Information Crown copyright reserved.

This early Tudor house was much restored by Sir William Compton in Henry VIII's reign, partly (according to Leland) with material from the ruined Fulbrooke Castle, near Warwick.

§ 154 (cf text pp 74, 123)

King's College Chapel, Cambridge. From a photograph by A. F. Kersting.

Founded in 1440 by King Henry VI (possibly in emulation of William of Wykeham's foundations at Winchester and Oxford) King's College possesses a Perpendicular chapel, which is far loftier and more spacious than the usual college chapel. The work came to a standstill with Edward IV's accession in 1462 but was resumed by Richard III in 1483, though two years later it was again abandoned until Henry VII became its patron in 1508 The fabric was completed by 1515 under Henry VIII and the work of glazing the great windows then began

While the actual building was spread over some seventy years, the whole design appears to have been chiefly the work of Reginald of Ely, who had been appointed by Henry VI in 1443 to secure workmen for building the chapel and remained in charge of the work until the King's deposition. The chapel

was completed under John Wastell (who had already been working at Canterbury) as master mason and designer of the vaulting.

§ 155 (cf text pp. 95, 124)

Fountains Abbey, Yorkshire From an air photograph by Aerofilms, Ltd.

This great Cistercian house was founded in 1132 and its ruins still exhibit the typical Cistercian arrangement of the church, cloisters and conventual buildings The Perpendicular tower was not built until the early XVIth century, and thus only shortly before the Dissolution (cf. note under § 156 below.)

§ 156 (cf text p. 124)

Fountains Hall, Yorkshire. From a drawing by Edward Blore (for whom see note under § 96 above). B.M MS Add. 42,019, f 95.

At the Dissolution Sir Richard Gresham bought Fountains Abbey from the King It was sold in 1596 to Sir Stephen Proctor, who in 1611 used material (including stained glass) from the ruined Abbey to build this mansion.

§ 157 (cf text p. 122)

Dover Harbour, *temp.* Henry VIII. B M MS Cott Augustus I. 1, 22 and 23.

This Roll shows the fortifications of the harbour with the gun emplacements at the ends of the mole The town can be seen in the background, with the castle above. Note the ships, their high poops, their spread of sail and their guns This Roll bears precise descriptive notes upon the condition of the harbour and its main features.

§ 158 (cf text p 122)

'The Anne Gallant,' from *The Second Roll declaring the Number of the Kings Majestys own Galliases*, by Anthony Anthony (1546). B M MS Add 22,047. (The First Roll is in the Pepysian Library at Magdalene College, Cambridge.)

This coloured drawing shows the 'Anne Gallant' of 450 tons. Her complement was 250 men, of whom 220 are described as soldiers and mariners and 30 as gunners, the last were to handle 7 guns of brass and 38 guns of iron The Roll also gives details of the gunpowder and shot (of iron, stone and lead), the weapons, etc.

§ 159 (cf text p. 122)

St Mawes Castle, Cornwall. From an air photograph by Aerofilms Ltd.

This castle formed part of Henry VIII's scheme of coastal defence. It was designed with Pendennis Castle about 1540 to defend Falmouth Harbour It is actually a small massive blockhouse, consisting of a central tower with bastions pierced for

guns, similar examples are Deal and Walmer Castles, and Camber Castle, near Rye.

§ 160 (cf text p 124)

West Stow Hall, Suffolk (interior). From a photograph by *Country Life* (Cf. note on West Stow Hall under § 163 below)
The interior of the gatehouse has a Tudor wall-painting of four of the seven ages of man, with an elaborate frieze above and traces of ornamentation on either side From left to right the scene depicts —

A boy with a hawk who is saying· 'Thus doe I all the day'
A pair of lovers· 'Thus doe I while I may'
An older man (looking on). 'Thus did I when I myght'
A very old man: 'Good lord, will this world last ever?'

§ 161 (cf text p 124)

The Abbot's Parlour, Thame Park, Oxfordshire From a photograph in *Country Life*
The Tudor block of Thame Park was built by Abbot King between 1530 and the dissolution of the Abbey in 1539 His parlour has fine linen-fold panelling with a frieze above of richly carved wood suggestive of Italian workmanship. Note also the elaborate carving of the ceiling beams in similar style. The fire-place is contemporary.

§ 162 (cf text p. 124)

East Barsham, Norfolk. From a drawing by Edward Blore (for whom see note under § 96 above) B M MS Add 42,019, f 59.
This manor is a fine example of ornamental brickwork and was built by the Fermors in the reigns of Henry VII and VIII. The detached gatehouse bears the royal arms in moulded brick above the entrance Note the terra cotta ornament and the elaborate turrets.
Henry VIII visited here in 1511 and is reported to have walked barefoot from the house to the Shrine of Walsingham, some 2½ miles distant.

§163 (cf. text p. 124)

West Stow Hall, Suffolk. From a photograph by *Country Life.*
Another type of brick gateway is illustrated here. The Hall was rebuilt by Sir John Crofts between 1520 and 1533. It is plainer in style than the East Barsham gateway (see note under § 162 above), although it also has turrets, topped in this case with ornamental figures.

§ 164 (cf. text p 125)

Henry VIII jousting before Katharine of Aragon. From the Westminster Tournament Roll in the possession of the College of Arms (on temporary loan to the Victoria and Albert Museum)
On the 12th and 13th February 1509/10 (o.s.) Henry VIII held

the jousts at Westminster to celebrate the birth of his son Henry (who, however, only lived from 1st January to 22nd February). The Roll is richly though crudely illuminated and records the procession, the tournament itself and the return to court. This illustration shows Henry himself riding in the lists before the Queen and her ladies.

§ 165 (cf. text p. 126)
Psalter B M. MS Royal 2 A. xvi, f 63v (For general description of MS. see note under § 166 below)
This illustration shows Henry VIII playing on his harp. His jester, William Sommers, stands on the right 'It was the fashion at the Court, from the King downwards, to compose musical tunes and verses to go with them' (See text, p. 127).

§ 166 (cf text p. 126)
Psalter. B M. MS Royal 2 A xvi, f. 3. English, XVIth century. This Psalter, written in Italian style for Henry VIII by John Mallard (*'regius orator'*), has many marginal notes in Latin by Henry himself. This illustration shows Henry seated reading in his bedroom The influence of the Renaissance can be seen in the ornamentation of the bed and the chair in which the King is seated, as well as in the vista through the archway, perhaps also in the fact that he is engaged in studying richly bound MSS.

Tudor Portraits, § 167–170

§ 167 (cf text p. 127)
Henry VIII From the portrait in the National Portrait Gallery after Hans Holbein's painting at Althorp.

§ 168 (cf text p. 127)
The Princess Elizabeth. From the portrait (by an unknown painter working in England, *c* 1546) at Windsor Castle.

§ 169 (cf. text p. 127)
Thomas Howard, 3rd Duke of Norfolk (1473–1554) From the portrait by Hans Holbein the younger at Windsor Castle.

§ 170 (cf text pp 126, 127)
The Darnley Brothers. From the portrait by Hans Eworth (*c* 1520–after 1578) at Windsor Castle.

The above four portraits have been selected to illustrate different styles of portraiture which flourished in Tudor England Those of Henry VIII and the Duke of Norfolk are in typical Holbein style, shrewd in characterization, paying full attention to the importance of robes of state and insignia of office, that of the Princess Elizabeth (the only certain contemporary portrait of her as Princess) exhibits a calm assurance and warmth of treatment which make it unique, while that of the young Darnley

brothers (the taller of whom became husband of Mary, Queen of Scots), with its background of panelled gallery, is a variation of the stiff, white-faced family portrait.

§ 168–170 are reproduced by gracious permission of H M the King.

§ 171 (cf. text p. 129)
The Fuller's Panel Bench-end at Spaxton Church, Somerset From a drawing by Alfred Clarke (1859) in the *Somersetshire Archaeological Society's Proceedings*, vol. viii, pt. 1 (for the year 1858)
This bench-end exhibits some of the implements in use by a XVIth century Somersetshire cloth weaver He appears to be pressing a piece of cloth.

§ 172 (cf text p 128)
Chart of the Southern Ocean . . . from a Portolano, by Diego Homem B M MS. Add. 5415 A, ff 13ᵛ–14 Portuguese, 1558
This map, executed for Philip II, illustrates in pictorial scenes the natives and animals of the Guinea Coast in 1558, that is, a little later than the period at which William Hawkins 'had traded in friendly fashion with its natives for ivory.'

Text illustration p. 65 (cf text p 64)
The Ballad of the Nut Brown Maid, as printed in R Arnold's *Customs of London* (Antwerp, 1503) From a copy in the British Museum

Text illustration, p 73—'At school' (cf text p. 72)
Woodcut from John Stanbridge's *Parvulorum Institutio*, printed by Wynkyn de Worde, 1512–13 From a copy in the British Museum
This illustration from a school-book by one of the first teachers at Magdalen Grammar School (see § 102 above), shows a schoolmaster (his birch ready to hand) with eight pupils who are studying their books, the ones in the background not very attentively it appears.

Text illustration, p 73—'Field sports' (cf. text p. 72)
Woodcut from the *Boke of Hawkynge*, printed by Wynkyn de Worde in 1496 From a copy in the British Museum
This shows a nobleman setting out with his huntsmen, falcons and hounds Education in field sports of this kind played an important part in the training of the young nobleman and went on side by side with his tuition in book-learning

Text illustration, p 73—'Students' (cf text p. 72)
Woodcut from *Compotus manualis ad usum Oxoniensium*, printed by Charles Kyrfoth, 5 February, 1519. From *English Woodcuts (1480–1535)*, by Edward Hodnett (Bibliographical Society, 1935).

This illustration also shows a schoolmaster with his pupils but they are older than those shown in text illustration—'At school'—above, though the birch is still in evidence. Note the books and globes, the lamp and hour-glass, the master's desk with its book cupboard, and the knife and 'penner' (or pencase) on the left-hand side, as well as the book-stands on either side of the master's desk.

Text illustration, p. 73—'A scholar' (cf. text p. 71)

Woodcut from *Stans puer ad mensam*, by Joannes Sulpitius, printed by Wynkyn de Worde in 1518. From a copy in the British Museum.

This cut shows a scholar in his study, note his reading desk and bookshelf and his pencase.

Text illustration, p. 124 (cf. text p. 123)

Gringoire's *Castel of Laboure*, printed by Wynkyn de Worde (1506). From the copy in the Cambridge University Library.

This woodcut illustrates the simple arrangements for cooking and eating which one would expect to find in a poor inn or small yeoman's house in early Tudor times. Note the scanty array of pots and pans, the rough bench, settle and trestle table.

INDEX